॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

नैतिक और धार्मिक

शिक्षा ।

१ आत्म-धर्म को और अपने कुलकी सच्ची मर्यादा को न छोड़ना चाहिये, और उसी सच्चे धर्म की आराधना करनी चाहिए ।

२ चोर की ऐसी चीज़ न खरीदनी चाहिए, जिससे राजा के दण्ड का भागी होना पड़े ।

३ ऐसा कोई कार्य न करना चाहिए, जिससे कि राजा दण्ड देवे और लोग निन्दा करें ।

४ पराई वस्तु विना दिये न लेना चाहिए, लेने से चोरी का दोष लगता है ।

५ अन्याय से धन का संग्रह न करना चाहिए।

६ जहां बुद्धि से काम चल सके, वहां धन खर्च न करना चाहिए।

७ असत्य न बोलना चाहिए, खास कर गुरुके पास, राज-सभा में और पञ्चायत तथा अन्य बड़ी सभा में।

८ गुणवान् पण्डितों से प्रेम रखना चाहिए, इससे बुद्धि बढ़ती है।

९ ऐसा कटुक वचन न बोलना चाहिए, जिससे दूसरे का दिल दुखे।

१० अनजानी वस्तु न खानी चाहिए जैसे कि किंपाक फल।

११ वही खाते में और खत पानेमें झूठा लेखा न लिखना चाहिए।

१२ अपनेसे बड़ों को तुच्छ शब्द (ओछे

ोली) से न बोलना चाहिए।

१३ ज्यादा लोभ ही हानि है। क्योंकि ोभ में फँस कर ही मनुष्य ठगाया जाता है।

१४ विद्यावान् से वादविवाद न करना चाहिए।

१५ फ़िज़ूल खर्च न करना चाहिए।

१६ प्रतिदिन खर्च और आमदनी संभालना चाहिए।

१७ यदि औषध खाना पड़े तो पथ्य भी रखना चाहिए।

१८ हंसी दिल्लगी में भी किसी की चीज़ न उठानी चाहिए।

१९ तोलने और नापनेके बांट कम बढ़ न रखना चाहिए।

२० नामो ठामो (जमा खर्च) तैयार रखना चाहिए।

२१ भोजन करते समय झगड़ना नहीं चाहिए।

२२ भूख से ज्यादा भोजन न करना चाहिए। नहीं तो अजीर्ण हो जाता है।

२३ जुए सट्टे या फाटके का व्यापार न करना चाहिए, क्योंकि इससे प्रतीति (विश्वास) घट जाती है।

२४ चोर कसाई वेश्या नीच और दुष्ट के साथ लेन देन (व्यापार) न करना चाहिए।

२५ छोटे आदमी से तकरार न करनी चाहिए, लोक में अच्छा नहीं मालूम होता।

२६ पशु को चोट न मारना चाहिए। क्योंकि 'मर्म में लगे तो जान से जाय'।

२७ लिखते समय बातों में न लगना चाहिए, बातों में लगनेसे गलतियां हो जाती हैं।

२८ समस्त जीव सत्व प्राण भूतों को न मारना चाहिए। दया रखनी चाहिए।

२६ असमय में घर से बाहर न निकलना चाहिए।

३० जहां दो आदमी बात कर रहे हों, वहां न जाना चाहिए

३१ जहां मित्रता हो, वहां कर्ज़ न लेना चाहिए। लेने से यदि चुक न सके तो रंज होता है और मित्रता टूट जाती है।

३२ लेन देन में साहूकारी रखना चाहिए, इससे साख शोभा इज्जत और आबरू बढ़ती है।

३३ सदा निडर न रहो, संसार का डर रखना चाहिए।

३४ अकेली स्त्री के पास खड़ा न रहना चाहिए।

३५ ऐसे मनुष्य का साथ न करना चाहिए, जो बोलने से बंद न हो, अर्थात् सदा कुछ न कुछ बकता रहे।

३६ पराधीनता में पड़ने पर भी अपने शील को दृढ़ रखना चाहिए।

३७ सटल विटल से अर्थात् धर्मच्युत से प्रेम न करना चाहिए।

३८ सज्जन मित्र को छेह न देना (किनारा न काटना) चाहिए।

३९ उल्टी बुद्धि वाले को बार २ सीख न देनी चाहिए।

४० सुख और दुखमें भी भली मर्यादा न छोड़नी चाहिए।

४१ अपने गुणों का अपने आप बखान न करना चाहिए।

४२ अपने दोष दूसरों पर न डालना

चाहिए

४३ पीठ पीछे किसी के अवगुण न प्रकट करना चाहिए।

४४ सम्यक्त्व और शील को सुदृढ़ रखना चाहिए।

४५ बुरीगार (भुंडे आदमी– दुर्जन) को छेड़ना न चाहिए।

४६ हृदय की बात हरएक से न कहनी चाहिए

४७ क्रोध आवे, तो क्षमा करनी चाहिए।

४८ बिना विचारे मनमाना न बोल देना चाहिए।

४९ धर्माचार्य की आज्ञा में रहना चाहिए

५० पढ़ने गुनने में वाद न करना चाहिए।

५१ शंका हो, तो सद्गुरु से समाधान करना चाहिए।

५२ अपने दोषों की आलोचना करने में शल्य न रखना चाहिए। आलोचना करके निःशल्य हो जाना चाहिये।

५३ गुरु के साम्हने और अन्य बड़ों के साम्हने न बोलना चाहिए।

५४ किसी की आत्मा को न दुखाना चाहिए।

५५ धर्म-स्थानों में विकथा न करनी चाहिए।

५६ धर्मस्थानों में असत्य न बोलना चाहिए।

५७ धर्म वही है जहां त्रस और स्थावर जीवों की रक्षा हो।

५८ असत्य का पक्ष न लेना चाहिए।

५९ कपटी का विश्वास न करना चाहिए।

६० पाप-कार्यों से डरते रहना चाहिए।

६१ किसी चीज़ का घमण्ड न करना चाहिए।

६२ धर्म-कार्यों में तत्पर रहना चाहिए।

६३ अत्यन्त लोभ और तृष्णा न करनी चाहिए।

६४ दिल में गांठ रख कर, किसी को दुख न देना चाहिए।

६५ दूसरे की चुगली न करनी चाहिए।

६६ परोपकार करने में ढील न करनी चाहिए।

६७ कडुआ, कठोर और लज्जा हीन वचन न बोलना चाहिए।

६८ मीठा सत्य और निरवद्य वचन बोलना चाहिए।

६९ धर्म की बात खुले मुँह से-अयतना

से न कहनी चाहिए ।

७० अंगीकार किये हुए व्रत और प्रत्याख्यान में दोष न लगने देना चाहिए ।

७१ पांचों इन्द्रियों—स्पर्शन रसना घ्राण चक्षु और कर्ण—के विषयों के वश में न होना चाहिए ।

७२ सांसारिक संबन्ध अस्थिर है, यह सदा याद रखना चाहिए ।

७३ धार्मिक सम्बन्ध ही सच्चा सम्बन्ध है ।

७४ पाखण्डी लोभी कुगुरु का संग न करना चाहिए ।

७५ निर्लोभी सद्गुरु की सत्संगति करनी चाहिए ।

७६ सात व्यसनों—जुआ खेलना, मांस खाना, शराब पीना, वेश्या गमन करना,

शिकार खेलना, चोरी करना और पर स्त्री गमन—का सेवन न करना चाहिए।

७७ अठारह पापों का त्याग करना चाहिए।

७८ प्रतिकूल वर्ताव करने वाले पर द्वेष न करना चाहिए।

७९ खोटे हानि, खरे बरकत। अर्थात् अन्याय का पैसा जल्दी नष्ट हो जाता और न्याय से पैदा किया हुआ स्थाई रहता और बढ़ता है।

८० पाप से दुष्फल और धर्म से सुफल होता है।

८१ जो झूठ न बोलकर सच बोले; उसे ही साहूकार समझना चाहिए।

८२ जो अच्छी शिक्षा को भी बुरी माने वह हीन पुण्य है।

८३ जो क्षुद्र वचन न बोले, उसे गंभीर

मनुष्य समझना चाहिए।

८४ न्याय-पक्ष को स्वीकार करना चाहिए अन्याय पक्ष को नहीं।

८५ सुदेव सुगुरु और सुधर्म की विनय भक्ति करनी चाहिए।

८६ देव गुरु और धर्म की आशातना न करनी चाहिए।

८७ दूसरे की अपने से बड़ी स्त्री को माता के समान, और छोटी को बहिन भानजी के समान जाननी चाहिए।

८८ सम्पत्ति विपत्ति, सुख दुख, मूढ़ता और चतुरता ये सब कर्मों के नाटक हैं।

८९ आरंभ परिग्रह विषय कषाय, चाहे थोड़ा हो या बहुत, वह दुख ही का कारण है।

९० मित्र से कपट न रखना चाहिए।

९१ स्नेह करने वाली स्त्री का भी विश्वास

न करना चाहिए।

१२ होली आदि में ऐसे निर्लज्ज वचन न बोलना चाहिए और न गीत गाना चाहिए जिससे भावों में विकार उत्पन्न हो, और आत्मा पर बुरा असर पड़े।

१३ बड़ों के साथ वैर न करना चाहिए।

१४ समर्थ होकर, दूसरों की आशा भंग न करना चाहिए।

१५ किसी को झूठा कलंक न लगाना चाहिए।

१६ विना काम और अनादर से किसी के घर न जाना चाहिए।

१७ माता पिता की आज्ञा भंग न करना, तथा सगे सम्बन्धियों से कभी विरोध न करना चाहिए।

१८ कपटी के आडम्बर का विश्वास न

करना चाहिए।

९९ अत्यन्त कष्ट आ पड़ने पर भी आत्मघात न करना चाहिए।

१०० हंसी करते हुए किसी पर क्रोध न करना चाहिए।

१०१ यदि क्रोध-वश होकर कोई कटुक वचन आकर कहे तो भी न्यायमार्ग न छोड़ना चाहिए।

१०२ माता पिता गुरु सेठ स्वामी और राजा के अवगुण (दोष) न कहना चाहिए।

१०३ स्नेह–राग समान दूसरा बन्धन, और प्राणी की हिंसा के समान बड़ा कोई पाप नहीं है।

१०४ क्रोधी कृपण आलसी और कुव्यसनी की संगति न करनी चाहिए।

१०५ दूसरे के अवगुणों की निन्दा न

करके उसके गुण ही ग्रहण करना चाहिए।

१०६ अपनी या अपने इष्ट मित्र की गुप्त बात प्रगट न करनी चाहिए।

१०७ मन की बात क्षुद्र मनुष्य, मूर्ख, स्त्री और पागल को न कहनी चाहिए।

१०८ संकट आने पर भी धर्म धैर्य और सत्य न छोड़ना चाहिए।

१०९ जिस जगह क्लेश या पाप होने की संभावना हो, वहां मौन रहे या वह स्थान छोड़ देवे।

११० कृतघ्नी कपटी निर्दयी अतिलोभी निर्लज्ज कुव्यसनी मूर्ख और धूर्त के साथ प्रीति न करनी चाहिए।

१११ अपनी बुद्धि शक्ति और लक्ष्मी का विचार करके ही कोई कार्य प्रारम्भ करना चाहिए; जिससे कि दूसरों की सहायता के

लिए न ताकना पड़े।

११२ द्रव्य न होने पर भी कर्ज न करना चाहिए।

११३ निर्धनता में भी अकार्य और अनर्थ से द्रव्य कमाने की इच्छा न करनी चाहिए।

११४ किसी सज्जन तथा मित्र पर संकट पड़े, तो अवश्य सहायता करनी चाहिए।

११५ प्रतिदिन कार्य अकार्य का विचार करना चाहिए।

११६ दान, मुनियों की सेवा, भक्ति, विद्या सीखने, धर्म कृत्य करने, और परोपकार करने में आलस्य –प्रमाद और कृपणता न करनी चाहिए।

११७ दुष्ट कलंकी कपटी आदिकों के साथ लेन देन आदि का व्यवहार न करना

चाहिए ।

११८ राजा गुरु माता पिता पंच और पण्डित के साम्हने झूठ, कपट और बेअदबी न करनी चाहिए । सरलता से सच्ची बात कहनी चाहिए ।

११९ प्रियजनों, सम्बन्धियों, मित्रों, और कुटुम्बियों से व्यापार सम्बन्धी लेन देन न रखना; किन्तु सुख दुख में शामिल होना, भोजन वस्त्र आभूषणों से सत्कार करना और धर्मका उपदेश देना चाहिए ।

१२० कुटुम्बियों के साथ विरोध न करना, सबको यथायोग्य राजी रखकर, दुख में सहायता देनी चाहिए, और मीठे बचन बोलने चाहिए ।

१२१ अपने घर पर कोई सत्पुरुष आवे, तो आदर करना चाहिए ।

१२२ खोटा तौल खोटा माप और झूठी गवाही त्यागने योग्य है ।

१२३ राजा, तपस्वी, कवि, वैद्य, घरभेदू, रसोइया, मंत्रवादी और वड़े पुरुषों के साथ विरोध न करना चाहिए ।

१२४ अपना पराक्रम, लक्ष्मी बुद्धि पक्ष और सामग्री को विना देखे, विवाद या अभिमान से किसी की वरावरी न करनी चाहिए ।

१२५ अपने इष्ट धर्म के अनुसार, जो नित्य नियम अंगीकार किया हो, उसे निरन्तर पालन करना चाहिए ।

१२६ यदि कोई मनुष्य गुण की या हित की वात कहे तो आदर से सुन कर ग्रहण कर लेना चाहिए. और उसका उपकार मानना चाहिए ।

१२७ जिस गांव के लोगों से या राज-कर्मचारियों से विरोध हो, वहां न रहना चाहिए।

१२८ अपनी आत्मा को संसार के संयोग वियोग जन्म मरण के दुखों से मुक्त करने के लिए मोक्ष मार्ग की खोज अवश्य करते रहना चाहिए।

१२९ ऐसे वकील के पास न जाना चाहिए जो बुरी सलाह देवे।

१३० मामले— मुकद्दमे-- के मार्ग में मत पड़ो; जिद को छोड़ कर न्याय मार्ग ग्रहण करो। कषाय वश यदि काम पड़ जाय तो पंचों से मामला तय कर लो। चिन्ता हैरानी से बचो। अटरनी (ATTORNEY — जिस की मार्फ़त बैरिष्टर नियुक्त किए जाते हैं) के पास न जाओ, नहीं तो खर्च देते समय

पछताना पड़ेगा।

१३१ जिस जगह सोक चिन्ता मोह और दुःख पैदा हो, उस जगहकोछोड़ देना चाहिए, जहां ज्ञान वृद्धि हो, वहां जाना चाहिए।

१३२ वड़ों का यह कहना है कि जो न्याय मार्ग और सिद्धान्त के अनुसार चलता है उसे मुकद्दमा नहीं लगता एवं दुःख नहीं होता—विलकुल सत्य है।

१३३ पीठ पीछे निन्दा करने से वैर वढ़ता है।

१३४ नीच आदमी को न छेड़ना चाहिए, नहीं तो रेकांर तुंकार सुनना पड़ेगा।

१३५ जहां छत या चंदोवा आदि न हो वहां तथा नग्न(उघाड़े) शरीर न सोना चाहिए।

१३६ प्रातः मध्याह्न सन्ध्या और मध्य रात्र इन चार कालों में अशुभ वात न कहनी

चाहिए ।

१३७ जहां संक्रामक बीमारी (प्लेग हैजा-आदि)हो अर्थात् रोग चाला हो, वहां न रहना चाहिए।

१३८ विना छना हुआ पानी न पीना चाहिए

१३९ रस का वर्तन और दीपक आदि उघाड़ा न रखना चाहिए ।

१४० ऐसा वर्ताव न रखना चाहिए, जो दूसरों को बुरा लगे ।

१४१ ऋण(कर्जा-उधार)देते समय इतनी बातों का विचार जरूर करना चाहिए–हैसियत, सम्पत्ति, पूंजी, व्यापार, नफ़ा, नुकसान, क्षेत्र, राजा का कानून, चालचलन, संगति, साख, सोभा संप-मेल परिवार, प्रकृति काम करने वाला नियत इत्यादि इनकी देख भाल कर

के ही ऋण देना चाहिए।

१४२ कुमार्ग में धन खर्च करके व्यर्थ न खोना चाहिए।

१४३ मार्ग में तरुण स्त्री का साथ न करना चाहिए।

१४४ अयोग्य आसन न बैठना चाहिए।

१४५ दिन में बहुत न सोना चाहिए।

१४६ पानी का विश्वास न करना चाहिए।

१४७ पर के द्रव्य की अनुचित इच्छा न करनी चाहिए।

१४८ गुरु-गम अर्थात् गुरु-धारणा बिना सूत्र का उपदेश न करना चाहिए।

१४९ सोते उठते ही समायिक करना चाहिए। अर्थात् प्रभात काल (पिछली रात) में किसी काम से लगने के पहले सामायिक करना चाहिए।

१५० निर्ग्रन्थ–साधु का दर्शन करना चाहिए

१५१ मन लगा कर धर्म की दलाली करना चाहिए ।

१५२ मा बाप और सासू को दुख न पहुँचाना चाहिए ।

१५३ पाप कार्यों में आगे न बढ़ना चाहिए ।

१५४ धर्मकार्य में आलस्य न करना चाहिए ।

१५५ निश्चय और व्यवहार दोनों को ही मानना चाहिए ।

१५६ हिसाब किताब करते समय, स्वाध्याय करते समय बीच में कोई चीज़ न देना चाहिए, और बोलना न चाहिए । यदि बोले तो काम करने वाले को बुरा लगता और भूल हो जाती है । फिर यथावसर करना

चाहिए ।

१५७ सांसारिक कार्य उतावली से न करना चाहिए; किंतु अवसर देख लेना चाहिए ।

१५८ क्रोध की बात, चिन्ता की बात, दुखकी बात, स्वार्थ की बात असुहावनी बात, न करना चाहिए ।

१५९ ज्ञान के उद्योग के लिए थोड़ा बहुत समय जरूर निकालना चाहिए ।

१६० नित्य नियम और मर्यादा विधि पूर्वक शुद्ध उपयोग से करना चाहिए ।

१६१ साधु साध्वी के लिए निर्दोष आहार शुभ भाव से देना चाहिए ।

१६२ किसी का जी न दुखाना चाहिए । क्रोध आवे तो चुप रहना चाहिए ।

१६३ यदि कोई हमारा अपराध करे, तो क्षमा करके अन्तःकरण से माफी देना चाहिए ।

१६४ जल्दी उठ कर जो धार्मिक नित्य नियम करे उसे पुण्यवान् समझना चाहिए। यदि देर से उठे तो मुंडा दीखे और दारिद्र्य आवे।

१६५ चिन्ता से रोग होते हैं। विना काम गप सप न लगाना चाहिए। समय व्यर्थ बरबाद न करना चाहिए।

१६६ सब जीवों का कल्याण हो, ऐसी शुभ भावना भानी चाहिए।

१६७ नवीन २ शास्त्र बांचने और पढ़ने का अभ्यास रखना चाहिए।

१६८ पूंजी के अनुसार काम करना चाहिए।

१६९ लक्ष्मी के होने पर असन्तोष न रखना चाहिए। एक भाग से व्यापार, दूसरे भाग से मकानात गहना आदि और तीसरा भाग भंडार में जमा रखना चाहिए। ऐसा करने

से सन्तोष और समाधि रहती है। अति तृष्णा और लोभ से दुख होता है।

१७० परोपकार न भूलना चाहिए।

१७१ जिसने एक अक्षर सिखाया हो, उसे भी गुरु समझना चाहिए।

१७२ अपने आत्मा का दोष खोज कर उसे निकाल डालना चाहिए।

१७३ पण्डित के साथ मित्रता रखने से बुद्धि बढ़ती है।

१७४ अपनी संतान को छुटपन से ही सुसंगति में रखना चाहिए, अच्छी विद्या और धर्म के मूल तत्त्वों की शिक्षा देनी चाहिए।

१७५ "मैं मृत्यु के मुख में हूँ, आयु का विश्वास क्षण भर भी नहीं है" ऐसा सोच कर धर्माचरण करना चाहिए।

१७६ सर्वस्व नाश होता हो, तो भी अ-

पने वचन (सत्य वचन) का अवश्य पालन करना चाहिए ।

१७७ ज्ञान और ज्ञानवान् की भक्ति, जहां तक हो सके, करनी चाहिए ।

१७८ लघुनीति (लघुशंका) वड़ीनीति (दीर्घ शंका) स्नान मैथुन व्यायाम और भोजन करते समय मौन रखना चाहिए ।

१७६ रूप क्रोध और मद में अन्धा न हो जाना चाहिए।

१८० भांग तमाखू और अफ़ीम आदि नशीली चीज़ों का सेवन न करना चाहिए।

१८१ गृहस्थों के बारह व्रतों को पालना चाहिए ।

१८२ नीति मार्ग में चल कर सच्चा यश लेना चाहिए ।

१८३ धर्मस्थानों में सांसारिक बातें न

करनी चाहिए ।

१८४ साधर्मी को यदि दोष लग गया हो, तो एकान्त में समझाना चाहिए ।

१८५ जैसा दोष लगा हो, वैसा ही प्राय-श्चित्त लेना चाहिए ।

१८६ साधर्मी से चर्चा करते समय विवाद न करना चाहिए ।

१८७ भगवान् के कहे हुए मार्ग से खें-चतान न करनी चाहिए ।

१८८ हर एक पक्खी चौमासी और संवत्सरी में धार्मिक लाभ हानि का विचार करना चाहिए ।

१८९ विनय पूर्वक पढ़ना चाहिए ।

१९० धर्मस्थानों में सांसारिक झंझटें भू-ल जानी चाहिए ।

१९१ साधर्मियों को आपस में लड़ना अ-

गड़ना न चाहिए ।

१९२ धर्म से गिरते हुए साधर्मी को स्थिर करना चाहिए ।

१९३ रोगी ग्लानी और आपत्ति-ग्रस्त मनुष्यों की तन मन धन से सेवा करनी चाहिए।

१९४ अग्नि, गहरे जल, शस्त्र सींग और नख वाले जानवर, विष, पाखण्डी कुपात्र और स्त्री का विश्वास नहीं करना चाहिए, और उनके पास रहना न चाहिए ।

१९५ बच्चों की आपस की लड़ाई में खुद न पड़ना चाहिए।

१९६ घुना हुआ अनाज न खाना चाहिए।

१९७ प्यास लगने पर एकदम ज्यादा पानी न पीना चाहिए ।

१९८ अयोग्य आसन से नहीं बैठना चाहिए ।

१९९ इमली वृक्ष की छाया में न बैठना चाहिए।

२०० गुस्से में आकर बालक के माथे में न मारना चाहिए।

२०१ दिन में ज्यादा नींद न लेना चाहिए।

२०२ यदि तुम्हें संसार के भीषण दुःखों का डर लगता हो और सुख की अभिलाषा हो, तो धर्म रूपी कल्पवृक्ष को सेवन करो।

२०३ करोड़ों ग्रंथों का सार यह है कि धर्म की जड़ दया और पाप की जड़ कुव्यसन है।

२०४ शोक रूपी वैरी को पास रखनेसे बुद्धि हिम्मत और धर्म का समूल नाश हो जाता है।

२०५ जैसे विना पुत्र, पालने की और विना दूल्हा के वरात की शोभा नहीं होती,

उसी तरह विना धर्म के आत्मा की शोभा नहीं होती।

२०६ शास्त्रों का सुनना, श्मशान भूमि और रोग-पीड़ा, ये तीन स्थान वैराग्योत्पत्ति के मुख्य कारण हैं।

२०७ नासमझी से जो शास्त्र का अर्थ करते हैं उन्हें शास्त्र भी शस्त्र समान है।

२०८ बुद्धि की वृद्धि और नवीन तर्क की उत्पत्ति होने का मुख्य कारण मन की शुद्धि है।

२०९ संसार को वश करने का उपाय गुण-ग्रहण मिष्टभाषण और उदारता गुण की वृद्धि है।

२१० लोग हँसी या क्रोध में कहा करते हैं— तुम्हारा हाथ टूट गया है? क्या तुम अंधे हो? किन्तु ऐसा कहने से चिकने कर्मों

का वन्ध होता है। उन्हें भोगते समय छठी का दूध याद आ जाता (भारी संकट पड़ता) है। रो २ कर भी पल्ला छुड़ाना मुश्किल पड़ता है अतः जो कुछ बोलना हो, बिना विचारे मत बोलो। क्योंकि तलवार का घाव भर जाता है, पर बोली की गोली का नहीं।

२११ उसकी सामायिक मोक्षप्रद होती है जो अपनी या दूसरों की निन्दा और प्रशंसा में समभाव रखता है।

२१२ जैसे राजा की आज्ञा का भंग करने से इस लोक में दण्डित होना पड़ता है, वैसा ही उत्सूत्र प्ररूपणा रूप सर्वज्ञ भगवान् जिनेन्द्र की आज्ञा भंग करने से परभव में अनन्त भवभ्रमण करना रूप दण्ड प्राप्त होता है।

२१३ अगर तुम अपने इष्ट जनों से प्रेम

रखना चाहते हो, तो तुम्हें चाहिए कि, वे जब क्रोध करें तब तुम क्षमा धारण करो।

२१४ अगर तुम शीघ्र धर्मात्मा बनना चाहते हो तो शास्त्र की विनय करो और अच्छा आचरण करो।

२१५ निश्चय धर्म की प्राप्ति तब होगी, जब कुटिलता, कटुवचन और कुमतिका त्याग करोगे।

२१६ अर्हन्त देव, निर्ग्रन्थ गुरु और केवलि प्ररूपित दयामय धर्म, ये तीनों धर्म के व्यावहारिक तत्त्व हैं।

२१७ देव-आत्मा, गुरु-ज्ञान और शुद्ध उपयोग-धर्म ये तीनों धर्म के निश्चय-तत्त्व हैं।

२१८ सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक् चारित्र इन तीनों का मिलना ही मुक्ति का मार्ग है।

२१९ धर्म के चार प्रकार हैं— दान,

शील, तप और भावना।

२२० क्षमा अमृत है, उद्यम मित्र है (क्योंकि उद्यम से दरिद्रता नष्ट होती है) सत्य और शील शरण (निरापद स्थान-आपत्ति से बचाने वाले) हैं और सन्तोष सुख है।

२२१ सत्संगति परम लाभ, संतोष परम धन, विचार परम ज्ञान और समता परम सुख है।

२२२ क्रोध विष, मान शत्रु, माया भय और लोभ दुःख है।

२२३ याद रखिए, एक दिन अवश्य मरना है और कृत (किए हुए) कर्म का बदला अवश्य भरना है।

२२४ जीवन, जल के बुलबुले के समान है, लक्ष्मी अस्थिर, शरीर क्षणनश्वर (क्षणभंगुर) और थोड़ा या बहुत काम-भोग दुख ही का

कारण है।

२२५ धन अति प्यारा लगे, तो भी अनीति से इकट्ठा न करना चाहिए। धन हाट हवेली कुटुम्ब परिवार सब यहां ही रह जाता है। केवल जीव ही अकेला आता और जाता है, अपने द्वारा बांधे हुए कर्म अपने आप भोगता है, संसार में सब स्वार्थी हैं।

२२६ कषाय राग द्वेष को कम करो—जीतो, इन्द्रियदमन करो, धर्म और शुक्ल ध्यान को ध्याओ।

२२७ पाप की निन्दा करनी चाहिए परन्तु पापीकी नहीं। स्वात्मा की निन्दा करनी, परन्तु पर की निन्दा न करनी चाहिए।

२२८ यह कभी भी न सोचना चाहिए कि जो 'मेरा सो सच्चा' किन्तु 'जो सच्चा सो मेरा' यह विचारना चाहिए। हठ (जिद)

न करना चाहिए ।

२२९ आर्त्तध्यान और रौद्र ध्यान का त्याग करना चाहिए ।

२३० सर्व जीवों से मैत्री भाव, गुणवान् पुरुषों में प्रमोद (हर्ष), दुखियों पर दया और शत्रुता करनेवालों पर मध्यस्थभाव धारण करना सद्भाव है ।

२३१ दुखिनी विधवाओं के उष्ण आंसुओं को शान्त करना अर्थात् दुष्टों के अत्याचारों से वचा कर उन के शील धर्म आदि की रक्षा करते हुए सुख पहुँचाना, और दुखी बुभुक्षित निराधार वालकों का अन्न वस्त्र से पोषण करना परम धर्म है ।

२३२ क्षमा रूपी शीतल जल से क्रोधाग्नि को शान्त करना चाहिए ।

२३३ याद रक्खो! आंख वन्द होने वाद

हमारा कुछ नहीं है।

२३४ विषयासक्त मनुष्य सदा दुःखी रहता है।

२३५ एक सुयोग्य माता सौ शिक्षकों का काम देती है।

२३६ जैसा कहना आता है वैसा करना भी आता है ?

२३७ ज्ञान गर्व के लिए नहीं, स्वपर का बोध करने के लिए है।

२३८ जिसकी तृष्णा विशाल है वह सदा दरिद्री रहता है जिसे सन्तोष है वह सदा श्रीमान् (धनवान्) है।

२३९ बुरे विचार करना विष पीने के बराबर है, अच्छे विचार करना अमृत पीने के बराबर है।

२४० जो मन जीत लेता है वह संसार

को जीत लेता है।

२४१ जिसने काम को जीत लिया है, वह सब देवों का सरदार है।

२४२ ऐसा व्यसन –आदत– न डालो, जिससे शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य खराब हो।

२४३ दुखिया को धीरज बँधाना चाहिए, निराश न करना चाहिए।

२४४ गुणज्ञ पुरुष गुणों को ग्रहण करके गुणी, और दोषज्ञ पुरुष दोषों को ग्रहण करके दोषी बनते हैं। श्रीमद् राजचन्द्रजी के उद्गार—

२४५ मृत्यु के साथ जिसकी मित्रता हो अथवा जो मृत्यु के पास से भाग कर छूट सकता हो, वह सुख से भले ही सोवे।

२४६ परिग्रह, परमधर्म रूप चंद्रमा के लिए राहु के समान है। अब मैं इससे विरा-

म (विरक्तता) पाना चाहता हूं। जिसकी इन्द्रि-यँा विषयों से आर्त्त (पीड़ित)हैं, उसे शान्त स्वरूप आत्म–सुख की प्रतीति कैसे हो सक-ती है !

२४७ जो जीव सत्पुरुषों के गुणों का विचार नहीं करता और अपनी मनोकल्पना का आश्रय लेता है, वह सहज ही संसार की वृद्धि करता है। अर्थात् वह जीव अमर होने के लिए विष पीता है

२४८ हे सर्वोत्तम सुख के साधनभूत स-म्यग्दर्शन ! तुझे अत्यन्त भक्ति से नमस्कार हो, भगवदुपदिष्ट आत्म–सुख का मार्ग श्री गुरु महाराज से जान कर, इसकी यत्न पूर्वक उपासना करो।

२४९ देह से भिन्न स्वपरप्रकाशक परम-ज्योति स्वरूप आत्मा में मग्न होओ। हे आर्य

जनो ! आत्माकी ओर उन्मुख होकर स्थिरता पूर्वक आत्मा में ही लीन रहोगे, तो अनन्त-अपार आनंद का अनुभव करोगे ।

शतावधानी पं० मुनि श्री रत्नचन्द्रजी स्वामीके शिक्षा-वाक्य—

२५० जीवन का एक क्षण करोड़ों सुवर्ण मोहरों से भी खरीदा नहीं जा सकता, उसे व्यर्थ खोने सरीखी और कौनसी हानि है ।

२५१ सदुद्योग, सद्भाग्य का सहोदर है, आज की कीमत, आगामी काल से दूगुनी है । जो कार्य आज हो सकता हो, उसे कल के लिए न छोड़ो ।

२५२ समय प्रकृति का ख़ज़ाना है, घड़ियां और घंटे उसकी तिजोरियाँ हैं, पल या क्षण उसके क़ीमती हीरे हैं, चतुर नर क़ीमती से क़ीमती हीरे को गँवाने की अपेक्षा एक पलको व्यर्थ गँवाना हानिकारक समझते हैं।

२५३ ज्ञान और विचार वास्तविक नेत्र हैं, विना इनके आंखे होते हुए भी अन्धा है, ऐसा मनुष्य गड्ढे में गिरे ,इसमें नवीनता ही क्या है?

२५४ डॉक्टर बैरिस्टर या प्रोफेसर की उपाधि प्राप्त करने में ही शिक्षा का उद्देश्य समाप्त नहीं होता, किन्तु प्रगट सेवा करने और आत्म-कल्याण करने में ही शिक्षा का उद्देश्य सम्पन्न होता है। वास्तव में जिससे मन मारा जा सके, वही सच्ची शिक्षा है।

२५५ जो मनुष्य अपनी इच्छा को अपने क़ाबू में नहीं कर सकता, वह जीवन की कठिनाइयों पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता।

२५६ समाजसेवा और धर्मसेवा उत्तम है, परन्तु आत्मसेवा सर्वोत्तम है। क्योंकि जो संसार के समस्त प्राणियों को आत्मवत् गिने,

पर धन पत्थर समान गिने, परस्त्री को माता के समान गिने, वही आत्मसेवा कर सकता है।

२५७ प्रशंसा की इच्छा न करो, पर जिससे प्रशंसा हो, ऐसे कार्य करो, कीर्ति सत्कार्य के साथ ही रहती है।

२५८ यदि तुम्हें बड़ा बनना है, तो पहले छोटे बनो। गहरी नींव डाले विना बड़ा मकान नहीं चिना जा सकता।

२५९ बड़प्पन की माप उमर या श्रीमंताई से नहीं, किंतु बुद्धि से या उदारता से होती है। अतः चतुर और उदार बनो।

२६० तलवार की कीमत म्यान से नहीं बल्कि धार से होती है, उसी तरह मनुष्य की कीमत धन से नहीं किंतु सदाचार से होती है।

२६१ वैर का बदला लेना क्षुद्रता है, ज-

बकि क्षमा करना बड़प्पन का काम है। वृ-
क्ष पत्थर मारने वाले को भी फल देता है।

२६२ जब बादल बरसते और वृक्ष फ-
लते हैं, तब नीचे नमते हैं, इसी तरह समृद्ध
होकर जो नम्र बने वही सज्जन गिना जाता है।

२६३ बरसात विना मांगे बरसता है उ-
सी तरह सज्जन विना मांगे अपनी धन-सम्पत्ति
परोपकार के कामों में खर्चता है।

२६४ बड़ी उपाधि पाकर जो गरीबों पर
दया न करे, वही शैतान है, शैतान के शिर
पर सींग तो उगते ही नहीं है!

२६५ दान शीलता स्वर्ग की कुंजी है,
और दया खानदानी का खज़ाना है, पत्थर
समान हृदय के साथ खानदानी नहीं रहती।

२६६ नदी का पानी समुद्र में मिल जा-
ता है, उसी तरह दातार की दौलत व्याज

सहित उसे ही वापस मिलती है।

२६७ जो बुराई के बदले भलाई करे, अपकार के बदले उपकार करे वही वास्तविक सत्पुरुष है।

२६८ महा पुरुष वही है जो चढ़ती (उन्नति) में गर्व और पड़ती (अवनति) में खेद न करे और शरणागत का त्याग न करे।

२६९ जो सुने या ग्रहण करे, उसे सीख देना अच्छा, मूर्ख को सीख देना सर्प को दूध पिलाने बराबर है।

२७० जिसके लिए दूसरों को उपालम्भ देते हो, वही अवगुण यदि तुम में है, तो पहले अपना अवगुण दूर करो, फिर दूसरों को कहो।

२७१ चोर व्यभिचारी धर्मद्रोही राजद्रोही मनुष्य से सदा दूर रहना चाहिए; इन की

संगति हानि पहुँचाने वाली होती है।

२७२ अनेक युद्धों में विजय प्राप्त करने वाले योद्धा की अपेक्षा मनोराज्य पर विजय पाने वाला योद्धा ज्यादा शूरवीर गिना जाता है।

२७३ श्रीमानों या त्यागियों को संतोष से जो सुख प्राप्त हो सकता है, वह सुख किसी भी वस्तु से नहीं मिल सकता।

२७४ धन में, खाने पीने में और मौज़ शौक़ में सन्तोष रखना चाहिए, किन्तु ज्ञान में, दान में, और धर्म में सन्तोष न रखना चाहिए।

२७५ जिस से दुःख मिट सके, उसीके सामने हृदय खोलना (दुख प्रकट करना) चाहिए। जिस किसी के पास हृदय खोलने से क्षुद्रता (हलकाई) समझी जाती है।

२७६ अफीम से ज्यादा जहरीला कर्ज है, अफीम खाने वाले ही को मारती है, और कर्ज वालबच्चों को भी मारता है।

२७७ उत्तम पुस्तकें सत्संगति का काम करती हैं, और खराव पुस्तकें सत्संग के सुंदर असर को भस्म करदेती हैं।

२७८ धर्म की जड़ विनय है, कपट से नहीं किन्तु सच्चे मन से वड़ों की सज्जनों की और गुरुओं की विनय करो।

२७९ उपकारी का उपकार भूल जाने वाले में मनुष्यता का गुण नहीं रह सकता, पशु भी उपकार का वदला चुकाते हैं।

२८० विशाल मन और विशाल कार्यों में ही वड़प्पन है, पर वड़ी वातें करने में नहीं।

२८१ त्याग शीलता (दान) के विना स-

म्पत्ति ऐसी निर्माल्य और अस्पर्श्य है, जैसे विना चेतन के शरीर।

२८२ दान की प्रतिध्वनि स्वर्ग के द्वार तक पहुँचती है और दानी के यशोगान करने के लिए शासन देव आकर्षित होते हैं।

२८३ हमारे लिए दौलत है, दौलत के लिये हम नहीं हैं, दौलत के लिए जीवन गँवाना आत्मा को गँवाने के बराबर है।

२८४ अपनी करनी पार उतरनी, जैसा देना वैसा लेना, इस हाथ दे उस हाथ ले, इन अनुभवी वाक्यों को सदा स्मरण रक्खो।

२८५ लक्ष्मी चंचल है, प्राण पाहुना (मेहमान) है, जवानी जाने को ही है, आयुष्य अस्थिर है, धैर्य का स्थान एक धर्म ही है।

२८६ अतीत काल का सोच न करना

चाहिए, आगामी का विश्वास न करना चाहिए और वर्तमान को व्यर्थ न जाने देना चाहिए।

२८७ मृत्यु एक क्षण भर भी नहीं थँभेगी, लालच से ललचायगी नहीं; अतः कल करना हो, सो आज—अभी करो।

२८८ जरी के वस्त्र और हीरा माणिक के अलंकारों की अपेक्षा ब्रह्मचर्य ही मनुष्य की ज्यादा शोभा बढ़ाता है।

२८९ सोने चांदी और हीरा माणिक के आभूषण नष्ट हो जाते हैं, जब कि शील—रूप आभूषण अखंड रहता है। वह स्त्री पुरुषों कुमार और कुमारिकाओं वृद्धो जवानों— सभी को शोभा देता है।

२९० जिस काम के करने पर पश्चात्ताप करना पड़े, उस के प्रारम्भ न करने में ही

वास्तविक चतुरता है।

२९१ किसी इष्ट या अनिष्ट नश्वर(नाश होने वाली)वस्तु का संयोग ही दुःख का कारण है, क्योंकि जहां संयोग वहां वियोग भी अवश्य होता है।

२९२ अभयपद प्राप्त करना हो,तो दूसरों को अभय दो, इसी तरह सुख चाहते हो,तो सुख दो।

२९३ अगर किसी को सुखी न बना सको तो दुख तो नहीं ही देना चाहिए।

२९४ दूसरे का बुरा सोचना अपना बुरा करने के बराबर है।
क्योंकि "जो दूसरों के लिए गड्ढा खोदता है वह स्वयं गड्ढे में गिरता है"।

२९५ केवल प्राणियों के प्राण हरण करना ही हिंसा नहीं है, किन्तु अंतरात्मा को

दुखाने के लिए कुछ भी करना या चिन्तन करना भी हिंसा है।

२९६ क्रोध की क्रूरता के साम्हने क्षमा का खड्ग रक्खो और मान का मर्दन करने के लिए नम्रता का पाठ सीखो।

२९७ माया के मूल (जड़)को उखाड़ कर सरल बनो, और लोभ को थांभ कर संतोषी बनो, क्योंकि जहां सरलता और सन्तोष है; वहीं धर्म का निवास है।

२९८ हमने यदि दूसरे का उपकार किया हो और दूसरे ने हमारा अपकार किया हो, तो दोनों भूल जाना चाहिए।

२९९ सत्य की सीमा में ही विजय की पताका फहराती है। 'जहां झूठ वहां नाश, जहां कपट वहां चौपट (उजाड)' यह नीति का परम मन्त्र है।

३०० अप्रामाणिकता से कमाये हुए अटूट द्रव्य की अपेक्षा, प्रामाणिकता का एक पैसा भी ज्यादा कीमती और टिकाऊ होता है।

३०१ विश्वासघात, चोरी, कपट, प्राणी-वध, कन्याविक्रय और स्वामी द्रोह से प्राप्त हुई सम्पत्ति, सम्पत्ति नहीं, विपत्ति है।

३०२ अन्याय और अधर्म से पैदा किये हुए द्रव्य को यदि पूर्व पुण्य का सहारा न हो, तो दश वर्ष से अधिक नहीं ठहर सकता।

३०३ जिस धन से दीन दुखी जनों का उद्धार न किया हो, सुपात्र को दान न दिया हो और कुटुम्बियों का पोषण न किया हो, वह धन, धन नहीं, धूल है।

३०४ आमदनी के अनुसार धर्म मार्ग में बिलकुल व्यय न करना, लक्ष्मी को लूली

बनाने के बराबर है।

३०५ अन्तरंग में गुण न हो, तो बाहर का आडंबर व्यर्थ है। यही नहीं, वह संसार को फँसाने वाली फाँसी है। गाय की कीमत घंटियां बांधने से नहीं, किन्तु दूध देने से होती है।

३०६ विना निन्दा किए न रहा जाता हो, तो अपनी खुद की निन्दा करनी चाहिए; क्योंकि दूसरे की निन्दा करना, आत्मा को ज़हरीली बनाना है।

३०७ भयंकर बाघ के मुख में हाथ डालने की अपेक्षा दुर्जन की संगति करना अधिक भयंकर है।

३०८ माता पिता की सेवा भक्ति करने में और उनकी आज्ञा पालने में पुत्र की सच्ची पवित्रता है।

३०९ हित चिन्तक माता पिता, निःस्वार्थी शिक्षक और सद्गुरु इन तीनों की आज्ञा पालन करना, ईश्वर की आज्ञा पालने के बराबर है।

३१० नारियल जैसे वृक्ष भी अपने पालने पोषने वाले को, मधुर जल पूर्ण फल दे कर प्रत्युपकार करते हैं,तो मनुष्य प्रत्युपकार गुण कैसे छोड़ सकता है ?

३११ मौज शौक़ के लिये नहीं, किन्तु धर्म और परमार्थ के लिए शरीर का स्वास्थ्य क़ायम रखना आवश्यक है,क्योंकि जिसका शरीर स्वस्थ होता, उसी का मन स्वस्थ रह सकता है

३१२ एकवार के भोजन के पूरे २ पचनें से पहिले दूसरी वार भोजन कर लेना, रोगों को आमंत्रण देने के बराबर है।

३१३ पांचों इन्द्रियों को स्वतन्त्र करना

आपत्ति का द्वार खोलने के बराबर है।

३१४ धर्म कल्पवृक्ष है, मोक्ष और अभ्युदय ये दोनों उसके फल हैं, मैत्री, प्रमोद, करुणा, और माध्यस्थ (उपेक्षा) ये चार भावनाएँ उस का मूल हैं, विना मूल शाखा नहीं होती और विना शाखा के फल नहीं होते; अतः यदि मोक्ष रूपी फल प्राप्त करना हो, तो भावना रूप मूल को मज़बूत बनाओ।

३१५ प्यास के समय विना भूख न खाना चाहिए और भूख के समय विना प्यास पानी न पीना चाहिए।

३१६ गर्मी के दिनों में, जिस वक्त धूप न हो, और सर्दी के दिनों में मोटा या ऊनी कपड़ा पहिनकर थोड़ी या सुहाती ठंड के समय, स्वच्छ वायु वाले मैदान में, सुबह शाम घूमने से, शरीर स्वस्थ होता है और भूख

बढ़ती है।

३१७ आब हवा बदलने के लिए ऐसी जगह में रहना चाहिए, जहां की आब हवा अच्छी हो, ऐसी जगह पर रहने से शरीर तन्दुरुस्त होता है। कहावत है "सौ दवा और एक हवा"।

३१८ शरीर तन्दुरुस्त न रहने पर या बीमारी आने पर इलाज कराने से पहले ऊँचे डॉक्टर, विद्वान् वैद्य-कविराज या नामी हकीम से चिकित्सा करानी चाहिए, पश्चात् विचार करके जो ज्यादा अनुभवी और यशस्वी हो, उसी की दवा लेनी चाहिए।

३१९ जहां का पानी गँदला या भारी हो, वहां के लोगों को चाहिए कि पानी को छान कर साफ़ कर गर्म किये विना न पीवें।

३२० गरिष्ठ चीज़ और ख़ासकर रबड़ी

पेड़ा आदि मावे (खोए) की चीज़ को लोभ या जिह्वा के वश होकर मात्रा से अधिक न खाना चाहिए; क्योंकि यह पाचन शक्ति को बिगाड़ती है। मन्दाग्नि वाले के लिए तो भयंकर बीमारियों को बुलाना है।

३२१ आधा पेट अन्न से और चौथाई जल से भरना चाहिए, तथा चौथाई हवा के लिए ख़ाली रखना चाहिए। ऐसा करने से शरीर स्वस्थ रहता है।

३२२ विद्या आत्म ज्ञान के लिए, धन दान के लिए और शक्ति दूसरों की रक्षा के लिए होती है।

इति शुभम्

पुस्तक मिलने का पता—

श्री अगरचंद भैरोंदान सेठिया

मोहल्ला मरोटियों का

बीकानेर (राजपूताना)

अर्हम्

श्री जयमल ग्रन्थमाला का छठा पुष्प

श्री तुर्य-स्तवनामृत गुटका

रचयिता:—

श्री व्याख्यान वाचस्पति स्वामीजी नथमलजी म० सा० के
प्रधान शिष्य आशुकवि मंत्री श्री चौथमलजी म० सा०

सम्पादक:—

मुनिश्री रूपचन्द्रजी महाराज

प्रकाशक:—

शा. सूरजमल भिखीमल मुणोयत
मु० पीपाड़ सीटी (मारवाड़)

वीराब्द २४६७ }
विक्रमार्क १९९७ }

मूल्य
चार आना

{ प्रथमावृत्ति ५००

प्रेमोपहार

श्री..

....

के

कर कमलों में.

आपका
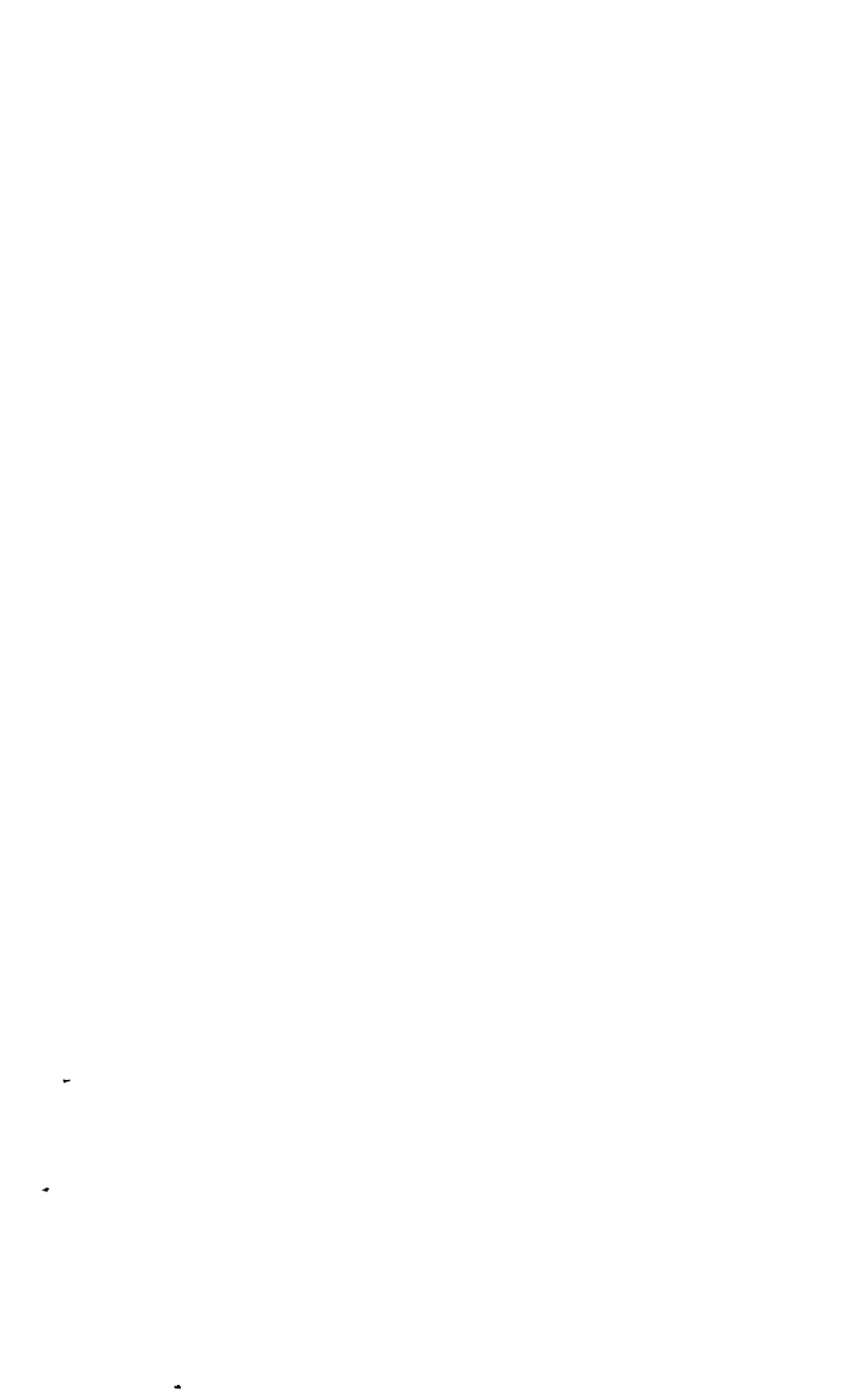
किंचित्-कथन

विज्ञ वाचक वृन्द !

जिन शिक्षाप्रद उपदेशी एवँ रसिक स्तवनों के लिए आप लोग मेघ चातक की भांति टकटकी लगाये हुये थे उन्हीं स्तवनों को पूज्य प्रवर्तक गुरुदेव श्री स्वामीजी श्री १००८ श्री शार्दूलसिंहजी म० सा०, श्री रूपचन्द्रजी महाराज सा० के पास से प्राप्त कर श्री तुर्य-स्तवनामृत गुटका को प्रेषांकित करवा कर आप लोगों के हितार्थ प्रकाशित किया गया है, इसे आप लोग अपना कर आत्मोन्नति के यथानुगामी बनेंगे।

इस पुस्तक के रचयिता व्याख्यान वाचस्पति स्वामीजी श्री १००८ श्री नथमलजी म० सा० के प्रधान शिष्य आशुकवि जैनागम तत्व महोदधि मन्त्री स्वामीजी श्री १००८ श्री चौथमलजी महाराज साहब है।

और जिन महाशयों ने इस पुस्तक प्रकाशनादि कार्य में आर्थिक सहायता प्रदान की है वे धन्यवाद के पात्र हैं प्रस्तुत पुस्तक की प्रूफ-शुद्धि का कार्य पं. बालकृष्णजी उपाध्याय (मालिक नारायण प्रिंटिंग प्रेस ब्यावर) ने करने की जो महती कृपा की है अतः आपके पूर्ण आभारी हैं।

आपका,

धनराज नाहर

कुचेरा (मारवाड़)

अर्हम्

स्वामीजी श्री चौथमल्लजी महाराज सा० का

गुण गायन

रचयिता:—मुनिश्री रूपचन्दजी महाराज

॥ दोहा ॥

गच्छ स्वच्छ 'जयमल्ल' के, दच्छ स्वामी तुर्येश ।
गुण गिणनो पार न लहे, मोर मति लव लेश ॥१॥

तर्ज—नवीन रसिया

गिरवा गुणवंता गुरु 'चौथमल्लजी' ज्ञानी गुण भंडार ॥टेर॥

मरुधर गांव 'पुरोजपुरा' में, लीना था अवतार । गुण-सठ साल त्याग गृहस्थाश्रम, लीनो संयम भार ॥गि. १॥ बालक वय में 'नाथ' गुरु की शिक्षा ली उर धार । समता सागर वारक ममता मुद्रा पे बलिहार ॥ गि. २ ॥ निरमम

निरमानी जिनवानी, मनमानी मदटार। इन्द्रिय विषय कषाय विदारी भक्त गले के हार ॥ गि. ३ ॥ त्रिप पूरित कन्दर्प सर्प की दीनी दाढ उखार। उन्नत मान मतंग विदारण केहरी सम भूंभार ॥ गि. ४ ॥ श्री जिन आगम तत्व मनोहर मोता हल में मराल। शांति-सरोवर धर्म-वृच्छ को सिंचन में जल धार ॥ गि. ५ ॥ गुण वर्णन करने की शक्ति है कहां बुद्धि बाल। करुणावन्त महन्त विचच्छण मरु मुनि गण सिरदार ॥ गि. ६ ॥ वेद ४ तत्व९ ग्रह९ चन्द्र १ अब्दवर "जोधाणे" वरसाल। रूप मुनि चरणां को चाकर गूंथी गुरु गुण माल ॥ गि. ७ ॥

तर्ज—हां सगीजी ने पेड़ा भावे

हां 'चौथ' गुरु लागे प्यारा, "हरिचन्द" पितु "कंवरांदे" दुलारा। जाट वंश अवतंस हंस थे 'पुरोजपुरा' रा रे ॥टेर॥

आठ वरस का बालक म्हांना, हुई इच्छा लेवन मुनि वांना। भेव्या थे भल भाव 'नाथ' गुरु 'जय' गच्छ वारा रे ॥ चौ० १ ॥ गुणसठ साल वैशाख महीनो, वदि सातम ने संयम लीनो। कीनो उत्तम काम पण्डित पद लीनो लच्छण मति तिच्छण, विनयवन्त गुणवन्त विचच्छण, लच्छण शोभित रम्य तनु अतनु को निकारा रे ॥ चौ: २ ॥ गुरु गुण भरिया 'आगम' दरिया, क्षमा खड़ग ग्रही करके

सरिया, कर्म कटक में शाल दिया ते सबल तूं खारा रे ॥ चौ. ४ ॥ तत्व ज्ञान का पूरण ज्ञाता, सुयश अनूपम विश्व विख्याता । काम क्रोध मद लोभ वृच्छ काटण को कुठारा रे ॥ चौं. ५ ॥ तरुण वये तृष्णा अप हरके, गिरवापनो घनो गुरुवर के । होकर आप मयूर नाशकृत अघ अहिकारा रे ॥ चौं. ६ ॥ अरिहन्त आण अखण्ड अराधे, भाग्य उदय ऐसा गुरु लाधे । जिन वचनां अनु-कूल सरस व्याख्यान तिहारा रे ॥ चौं. ७ ॥ पाखण्डी मृग सिंह सदूलो, समता सागर धैर्य अतूलो । भूलो मत भगवान जान अनुचर चरणां रा रे ॥ चौं. ८ ॥ चतुर "चौथमल्लजी" गुरु सागे, देखत प्रेम घणेरो जागे । लागे चरणां वीच केई गढपति मतवारा रे ॥ चौं. ९ ॥ कोड दिवाली सुख से जीजो, निरुज वदन जश आछो रहीजो । दीजो समकित दान जिनी से होत सुधारा रे ॥ चौं. १० ॥ मम मन अलि ते पदकज लागो, अपर जान मत तजजो आगो; तारक विरुद्ध विचार म्हाल मत अवगुण म्हारा रे ॥ चौं. ११ ॥ मैं पिन शरण लयो गुरु थांको मिल गयो मोखो अब तिरबा को । राखो मोपर महर रूप (मुनि) कहे गांव कुचेरा रे ॥ चौं. १२ ॥

संवत शर५ निधि९ अंक९ महि१ कृष्ण वैशाख अनूप ।
गुरु दीक्षा दिन प्रेम से, रचि गुण माला रूप ॥

तर्ज—मोहनगारो रे

अजब वैरागी रे, श्री चौथमल्ल महाराज शौभागी रे ॥टेर॥

प्रथम अवस्था में प्रबल आपकी, भव्य दशा भल जागी रे। निर्मल श्री नथमाल गुरु भेट्या बडभागी रे ॥ अजब. १ ॥ उन्नीसे गुणसठ गुरुवर की लगन से लागी रे। आगम को अभ्यास कियो है अदभुत प्रागी रे ॥ अजब. २ ॥ शांत छटा मुखड़ा री निरखत नयन होय रह्या रागी रे। क्या मैं वर्णन करूं तरुणवय तृष्णा त्यागी रे ॥ अजब. ३ ॥ गिरवापनो घनो गुरुवर के ममता मेली आगी रे। काम कषाय लाय मुनि तन का, कदीन दागी रे ॥ अजब. ४ ॥ काव्य कलायुत वचन मेघ की, झड़ जोधाणे लागी रे। चन्द्रकला ज्यों चउ दिश में वर महीमा छागी रे ॥ अजब. ५ ॥ है विरले मुनि भूमण्डल पर आप जैसे गुण रागी रे। बडे विचक्षण गिणमा बोले, शिव पथ सागी रे ॥ अजब. ६ ॥ चौराणू जोधाण चौमासो, दशा हमारी जागी रे। अमृत अरजी करे विनय से चरणों लागी रे ॥ अजब. ७ ॥

* श्रीमतेऽर्हते नमः *

णमुत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स

श्री तुर्य स्तवनामृत गुटका

स्तवन नं. १

तर्ज—नवीन रसिया

मांने विजनस देसी तार भरोसो है जिनवानी को ॥ टेर ॥

ऐसी परम पवित्र है वानी, जिनको इन्द्र इन्द्राणी मानी । दुनियां में दूजी नहीं जानी, महा मोटी मंगलीक सदा दिव शिव सुख दानी को ॥मांने० १॥ सुनतां वानी कोईय न धापे, सुनतां वैर विरोध न व्यापे । कठिन कर्म चेतन का कापे, आपे अविचल ठौर और पद इन्द्र इन्द्राणी को ॥ मांने० २ ॥ रामचन्द्र को दुनियां जाने, कृष्णचन्द्र को पिन सब ज्ञाने । पांडव को सारा पहिचाने घानी के परताप तिर्या सब भव दुख पानी को ॥ मांने०

॥ ३ ॥ परदेसी राजा ने तार्यो, अर्जुन मालाकार उधार्यो संयति नृप नो जन्म सुधार्यो, मार्यो उन मृग एक वचन धार्यो गुरु ज्ञानी को ॥ मांने० ४ ॥ तार्यो फिर सुखदेव सन्यासी, स्कन्धक ऋषि तापस मठवासी । पांच सौ अम्बड़ अन्तेवासी, सरध लिया जिन वैन चैत लीनो सुखधानी को ॥ मांने० ५ ॥ इण पर जीव अनन्त उद्धरिया जैन धर्म की कर २ किरिया । " चौथमल्ल " कहे भव जल तिरिया, गुरु स्वामी " नथमाल " हाल सब कह्यो जिनवानी को ॥ मांने० ६ ॥

स्तवन नं. २

तर्ज—कव्वाली

अब मेरी अर्ज सुनो भगवान ! पारस नाम धराने वाले ॥टेर॥

अश्वसेन सुत पास, मेरी एक सुनो अरदास ।
मैं हूं नौकर तेरो खास, अरज पर हुक्म लगाने वाले ॥१॥
दयानिधे जगदीश ! शिवपुर करो मुझे बकशीश ।
मैं कर जोड़ नमाऊं शीश, नैया पार लगाने वाले ॥२॥
लार रह्यो तज साथ, जिनसू जोड़ू दोनों हाथ ।
नहीं तर करत न तोसे बात, अहिंसा धर्म बताने वाले ॥३॥
पल छिन ठहरे अघ माप, जो कोई जपे जिनेश्वर जाप ।
ओछे पारस को परताप, संकट सब दूर भगाने वाले ॥४॥

स्वामीश्री "नथमाल" जिनके चरणां धोक त्रिकाल।
स्वामी 'चौथू' का प्रतिपाल, धनर धर्म दिपाने वाले ॥५॥

स्तवन नं. ३

तर्ज—प्रभाती

जय जय जय जय जिनराज प्रभु की,
बोलो सज्जन सारा रे ॥ टेर ॥

वीतराग भगवान विधाता, नहीं राता नहीं कारा रे। जे नर ध्याता सो सुख साता, पाता है अनपारा रे ॥ जय ॥ १ ॥ तीर्थंकर अरिहन्त अनूपम, दिव शिव ना दातारा रे। पाक शासन पूजित पद अरविन्द, चौतीस अतिशय वारा रे ॥ जय. २ ॥ अलख अखण्ड अरूपी अध्यातम अजर अमर अविकारा रे। हुयनिक लंक गये शिवपुर फिर नहीं लेते अवतारा रे ॥ जय. ३ ॥ अव्यय अज अविनासी अरुज प्रभु, सर्वज्ञ जगदाधारा रे। जांके मन मन्दिर प्रभु वसिया, ते नर केवल धारा रे ॥ जय. ४ ॥ अवर देव सब दुनियां वासी, तू दुनियां से न्यारा रे। "नाथ" "शिष्य" "चौथू" के मन में, परमेश्वर तू प्यारा रे ॥ जय. ५ ॥

स्तवन नं. ४

तर्ज—आखिर नार पराई है।

वो परमेश्वर प्यारा है जो सब दुनियां से न्यारा है ॥टेर॥

अजर-अमर-पद केरा अधिकारी, अचल-अमल सुविशुद्ध गुणधारी। नहीं ज़हां में दोष अठारा है॥ ॥ वो परमेश्वर० १॥ नहीं राग-द्वेष नहीं मान-लोभ माया, नहीं हाथ-पैर नहीं कारी-गौरी काया। नहीं पुरुष हींज नहीं दारा है ॥ वो परमेश्वर० २॥ विना आंखां देखे विना कान सुन लेते, फिरते-गिरते नहीं प्रभु एक ठौर रहते। नहीं लेते फिर अवतारा है॥ वो परमेश्वर ॥ ३॥ लेते अवतार ऐसे केई जन कहते, केईके भरोसे वे कलंक थांपे देते। प्रभु वे पिण भक्त तुम्हारा है ॥ वो परमेश्वर० ४॥ सृष्टि कर्ता हर्ता केई आपने ही माने, तू तो है अकर्मी तेरी माया तू ही जाने। तू अनन्त ज्ञान गुण वाला है ॥वो परमेश्वर० ५॥ कोई कालो गहलो कुम्भकार देखो चोड़े, वासन बनाय फिर हाथ से न फोड़े। जो फुटे तो लागे खारा है ॥वो परमेश्वर० ६॥ मान के बनावे ऐसा बालक तू नांही, ऐसी आ नजीर मांने गुरुजी बताई। कांई शहर नागौर मझारा है। ॥ वो परमेश्वर० ७॥ कर्त्ता हर्त्ता थांने प्रभु मैं तो नहीं मानू "चौथमल्ल" कहे जैसा हो वैसा ही जानू। नथमाल दिखाने वारा है॥ वो परमेश्वर० ८॥

स्तवन नं. ५

तर्ज—दादरा

करो २ धर्म खूब धाप धाप के ॥ टेर ॥

मात पिता तिरिया सुत बन्धव' एतो जासी घर आप आप के ॥ करो. १ ॥ अपना कीधा आप ही भुगते, बेटो बेटा के न बाप बाप के ॥ करो. २ ॥ पीलो सयाने प्रेम के प्याले, शांति जिनन्द के जाप जाप के ॥ करो. ३ ॥ अजर अमर पद लेलो प्यारे, आठ कर्म ने काप काप के ॥ करो. ४ ॥ "चौथमल्ल" "नथमाल" तणो शिष्य तज दिये काम सब पाप के ॥ करो. ५ ॥

स्तवन नं. ६

तर्ज—आखिर नार पराई है

दुनियां में चीज भलाई है, इन बिन मुक्ति नांही है ॥टेर॥

जाने दो जो जावे ज़ान, होने दो होवे अपमान। प्यारे पर का प्राण बचाई है ॥ दुनियां. १ ॥ शांतिनाथ पूर्व भव मांय, पारेवा को लियो बचाय। निज तन पे छुरी चलाई है ॥ दुनियां. २ ॥ कर्म रोग मेटन के तांई, वीर प्रभु ने यह बताई। मोटी एह दवाई है ॥दुनियां. ३॥ ऐसी भलाई करो सदाई. दुःखद जगत में बूरी बुराई।

जिनसे बडी मनाई है ॥ दुनियां. ४ ॥ स्वामी श्री
“नथमलजी” तास, चोथमल्ल चरणां को दास। गरासणी
में गाई है ॥ दुनियां. ५ ॥

स्तवन नं. ७

तर्ज—पूर्ववत

आ करड़ाई दुःखदाई है, मान नाम इसका ही है ॥ टेर ॥
करडाई रावण ने बोया, दुर्योधन का तन पिस
खोया । दूजा की कौन चलाई है ॥ मान. १ ॥
स्वयम्भूप चक्री की वातां, सुनी हुसी ए जगत विख्यातां
सुर फौज सिन्धु डयकाई है ॥ मान. २ ॥ चमर-शक्र
को देख रिसायो, आखिर भाग के बदन बचायो । प्रभु
भगवती में दरसाई है ॥मान. ३॥ जरासिंध का मान उतारा
श्रीकृष्ण पुनि कंस को मारा । ऐसा हुआ घनाई है
॥ मान. ४ ॥ नाथ मुनि को शिष्य सुनावे, “चौथमल्ल”
श्रोता हित चावे । बड़लू मांही बनाई है ॥ मान. ५ ॥

स्तवन नं. ८

तर्ज—पूर्ववत

बार बार एसो नरभव नहीं रे, मूडा की न
बात वीर आप कही रे ॥ टेर ॥
रामत तमासा मांही सारी रात खोवे, घड़ी मांही
घड़ियाल बार २ जोवे । देखो हाल समाइ पूरी नांही

हुइ रे ॥ वार. १ ॥ गांजा ने तम्बाखू होका हाथ मांही राखे, आया गया आदमियां ने आवो पीवो भाखे। थारा वदन में बदबू फैल रही रे ॥वा. २॥ मानो केणो मारो दया धर्म करो भाइ, चौथू नथमाल शिष्य कहे समझाइ ॥ जो काम करोला वोही सही रे ॥ वार. ३ ॥

स्तवन न. ९

तर्ज—दादरा

तजो सज्जन खाना रात रात का ॥ टेर ॥

चीडी कमेड़ी आदि अवर पंखेरु, खावे नहीं भूखा दिन सात सात का ॥ तजो० १ ॥ माखी मच्छर बिच्छु किड़ी कसारी, आवे जिनावर केई भांत भांत का ॥त० २॥ रोग उदर में होत इसी से, ऐसा वचन जिन नाथ २ का ॥ तजो० ३ ॥ नाथ मुनि शिष्य चौथू का कहना, खावे किम रात ओसवाल जात का ॥ तजो० ४ ॥

स्तवन नं. १०

तर्ज—तूं ही २ याद प्रभु आवे रे दरद में

छोटा २ टाबरां ने राखणा हटक में,
जैसे असवार घोडो राखे रे कटक में ॥ टेर ॥

पांच बरस तक लाड लडावो, चोखोडो खवाड़ो अन्न चाला री चटक में ॥ छो० १ ॥ ज्ञान पढावो पछे लाड न लडावो, विगड़ जावेला बाल लाड री लटक में ॥ छो० २ ॥ बाल अज्ञानी जिनवर भाख्या, कांई समझे रे टाबर ज्ञान की गटक में ॥ छो० ३ ॥ बालक तो रमवा रु लड़वा में समझे; मूण्डा सू बोले रे हेटो देवूंला पटक में ॥ छो० ४ ॥ नान्ही सी ऊमर में तो सुधर जावेला, पछे पड़ जावेला नारी की मटक में ॥छो० ५ ॥ अणपढ ऊपर उपनय बहुला, वाचूंला व्याख्यान जद केदूला सटक में ॥ छो० ६ ॥ नथमाल शिष्य ऋषि "चौथमल्ल", बोले "लूणसरा" के मांही आतो जोड़ी हे झटक में ॥ छो० ७ ॥

स्तवन नं. ११

तर्ज—आखिर नार पराई है

मत कहोजी संत पंपाली को, चेलो कुमति कंकाली को ॥टेर॥

थोड़ो सो भोलायो कोइ काम कर देवें, छाने से बुलवाय वांके कान मांही केवे। भाइ आवेला फरक इक-ताली को ॥ मत० १ ॥ संग्रहणी को रोग थारो दूर कर देस्यूं, पछे थने चेलो म्हारो मांड कर लेसूं। थारे सगाइ रो कर देऊं साली को ॥ मत० २ ॥ तेजी मन्दी आंक

फरक वेदगी बतावे, माया का मजूर नर वांका गुण गावे। नहीं ख्याल सन्त के चाली को ॥ मत. ३ ॥ भाद्र सुदी पंचमी ने जो न जे खमावे, वीर प्रभु कहे वांकी समकित जावे। कांई काम क्रिया मुनि वाली को ॥ मत. ४ ॥ ऐसा कोई साधु वे तो थोथा पोथा वांचे, काचे नहीं राचे राम साचे राम राचे। शिष्य " चौथू " नाथ गुणधारी को ॥ मत. ५ ॥

स्तवन नं. १२

तर्ज—ख्याल की

चंचल चित्त म्हारो, वर्ज्यो नहीं मांने मोटी खोड़ छै। टेर

छिन में राजा छिन में जोगी, वनकर पल लगावे। छिन में छेल छबिलो होकर, दौड़ दिशावर जावेरे ॥च.१॥ पल में बाग बगीचों जाकर, गौट गूघरी खावे। इस पापी ने डर नहीं लागे, जंगल में फिर आवे रे ॥ चंचल २ ॥ इसरे खातिर मैं दुःख भुगतूं, नागो कांई निचोवे। और ठिकाणे साथे अलगो, असन्नी में होवे रे ॥ चंचल ३ ॥ महादेव री माया ने फिर, मन मोजां री रासी। दोनों तोल्यां मन की मोजां, इक्केक ऊपर जासी रे ॥चंचल ४॥ इस मन ने जो वश में करे वो, परमेश्वर हुय जावे।

नाथ–मुनि नो शिष्य तेहनो, " चौथमल्ल " गुण गावे रे ॥ चंचल ५ ॥

स्तवन नं. १३

तर्ज—होरी री

बोलो वचन अमीरस वारो, लगे सबही को प्यारो ॥ टेर ॥

कोमल वचन विवेक विभूपित, निर्वद्य अरु हितकारो अरि कुल पिन तब वचन श्रवन कर, रींजत हरत विकारो ऐसे मुख वचन उचारो ॥ बोलो. १ ॥ कठिन कटुक दुःखदाई वक्ता, हितु पिण लागत खारो । याचक पिन कटु वाद सुनीने, नहीं मानत उपकारो । लेई वित्त बोलत गारो ॥ बोलो. २ ॥ पांडव कह्यो हरि जोर निहारत, वचन विवेक विना रो । सुन हरि मारत फिर मन सोची, दीनो देश निकारो । बात जाने संसारो ॥ बो. ३ ॥ खायो भूले पे बोल्यो न भूले, थांमें भूठ लिगारो । दिल्लीपति कह्यो बीरबली से, मिष्ट कांई संसारो । उत्तर दियो जीभ विचारो ॥ बो. ४ ॥ मीठा बोली नार धणी ने, धणी पिण लागत प्यारो । नाथ मुनि शिष्य " चौथमल्ल " कहे सोजत शहर मजारो । बोलो मृदु सब नर नारो ॥ बो. ५ ॥

स्तवन नं. १४

तर्ज—परिस्तान से उतरी परी

तें तो नरभव निकमो गमाय दियो रे, प्रभु भजवां को लाहो नहीं लियो रे ॥ टेर ॥

जिकी बात सुनियां जीव मुक्ती पद पावे, वातो बात एक थारे दाय नहीं आवे । तू तो इसक विसन मांही रींज रयो रे ॥ नर. १ ॥ पागड़ी झुकाय तू तो टेडो २ चाले, जवानी का जोर मांही मूछां बल घाले । देखो आखिर जवानी हाथ दगो दियो रे ॥ नर. २ ॥ फुट रो दिखावन मूंडो पान बीड़ी चावे, हरिजस छोड गेलो होरी जश गावे । तें तो ओ ही निराट काम फोरो कियो रे ॥ नर. ३ ॥ क्रोध मांही काम पडियो जीव परो मारे, देखो म्हारो व्हालो झूठो जैनी नाम धारे । तें तो ऊजरो अफूटो जीव कारो कियो रे ॥ नर. ४ ॥ पार की लुगाई तांई हाय २ भाइ, उठे थारी डूब गइ सारी चतुराई । तू तो टेडी नजर क्यों जोय रयो रे ॥ नर. ५ ॥ मानो चाहे मानो मति मैं तो यूं ही केसां जाहिर में उपदेश एसो हमेंशां ही देसां । थारे दाय आवे सो ही धार लियो रे ॥ नर. ६ ॥ स्वामी नथमालजी रो शिष्य इम गावे; " चोथमल्ल " थोड़ा मांही सार पावे । हरसोलाव रात रही जोड़ गायो रे ॥ नर. ७ ॥

स्तवन नं. १५

तर्ज—दादरा

मति चालो चतुर उंचो न्हाल न्हाल के ॥ टेर ॥

लीलन फुलन अवर लिलोती. कीड़ी मकोडियो को टाल टाल के ॥ म. १ ॥ और भी चवदह जीव ठिकाणा, उन्ह .का भी रक्खो खूब ख्याल ख्याल के ॥ म. २ ॥ किसी जीव को नहीं सताना, कहना पट कायिक के रिछ पाल पाल के ॥ म. ३ ॥ बदला किया तो फिर देना पड़ेगा, मैं तो सुनाऊं हेला पार पार के ॥ म. ४ ॥ नाथ मुनि शिष्य "चौथू" का कहना, गया शिव केई दया पाल पाल के ॥ म. ५ ॥

स्तवन नं. १६

तर्ज—चाल बनी महलों में चाओं

मति कर तूं मगरूरी प्यारे, कांई भरोसा तन का रे, कांई भरोसा तन का प्यारे नहीं भरोसा तन का रे ॥ टेर ॥

सात धात को बन्यो पूतलो, जोर घडा जल अन्न का रे। जिस दिन अन्न जल त्याग दिया फिर रहा न काम एकन का रे ॥ मति. १ ॥ काचो घट दीसत अति सुन्दर, जल मिलियां इक छिन का रे। जिम नर देही

एही जानो; आखिर वासा वन का रे ॥ मति. २ ॥ वन का मन का छोड़ सयाने, जपिये मनका मनका रे । तनका तन का है दुःखदाई, थिर रह्या कन का कनका रे ॥ मति. ३ ॥ धन कारन कापन का तजना, भजना गन का गनका रे । काम नहीं फिर समझू जन का, रमना फिर फागन का रे ॥ मति. ४ ॥ जिनवर गणधर हरी हर चक्री, तन कहां फिर रावन का रे । हरिहर पीर पेगाम्बर सारा, होगये टन का टन का रे ॥ मति. ५ ॥ इनका मनका रे चेतन का, गर्व करे क्या ठनका रे । धर्म ध्यान का ठाठ लगावो तो, काम एक स्टेशन का रे ॥ मति. ६ ॥ उन्नीसे चिमन्तर वर्षे, धुर भादु नमी दिन का रे । नाथ मुनि को शिष्य "चौथमल्ल" चरण ग्रह्या गुरु जन का रे ॥ मति. ७ ॥

स्तवन नं. १७

तर्ज—होरी की

करिये तप नित हितकारी, हुवे क्षय कर्म अनारी ॥टेर॥

सकल विघ्न घन मेटन वाता, शिव शौपान सदारी कर्म विपिन वारन के तांई, पवन सखा सुखकारी । कह्यो है केवलधारी ॥ किरिये. १ ॥ सौ वर्षा लो कर्म खपावे दुःख भोगी नरक मझारी । तेता सम्मत धर नर जारे,

एक नौकारसी म्हांरी । नहीं है झूठ लिगारी ॥ क. २ ॥ पौरसी सहस पूरी मढ लख, साठ पौरसी दस हजारी । दस लाख एगासण नीवी कोटी, दस कोटी एग ठाणारी सहस कोटी आयम्बिलां री ॥ करिये. ३ ॥ दस कोटी सहंस्र हरत अघ अभत्तठ,[1] इक दात सो कोटी सारी । दस पच्चखान करे कोउ प्रानी, धन्य २ जननी जांरी । करे लोह कोह विनारी ॥ करिये. ४ ॥ उन्नीसे चिमन्तर फागुन, थावड़ी गांव मझारी । नाथ मुनि शिष्य "चौथमल्ल" कहे, तपोधन की बलिहारी । हुवे वे शिव अवतारी ॥ करिये. ५ ॥

स्तवन नं. १८

तर्ज—तांवड़ा धीमो तो पड़जा

[2]दर्प ने दफे कौन करियो रे २ जंवर नारी की जाल शादी में जग सगरो परियो ॥ टेर ॥

मझा किया महादेवजी सरे, लीवी लंगोटी हाथ । नारायण तो नाचियो सरे, सब सखियन के साथ ॥दर्प. १॥ पंचम अंगे देखलोस रे, इन्द्र तणो अधिकार । इन्द्राणी जो रीस करे जद, इन्द्र करे नमस्कार ॥ दर्प. २ ॥

---

१ उपवास २. कामदेव

तीन खण्ड को सायबो सरे, देखो रावन राय। सीता ने निज नारी करवा, लुल लुल लागो पाय ॥ दर्प. ३ ॥ कुल देवी इण काल में सरे, चवड़े दीसे नार। भोज मागधी पण्डित देखो, नारी चरित्र अपार ॥ दर्प. ४ ॥ गावत २ रोयदे सरे, रोवत ही हस देह। ब्रह्मादिक पिन इन चरितां रो, हाल न लीनो छेह ॥ दर्प. ५ ॥ उन्नीसे सीतर श्रावण बदि, तेरस सुखकारी। नाथ मुनि शिष्य 'चौथमल्ल' कहे सुनो सभा सारी ॥ दर्प. ६ ॥

स्तवन नं. १६

तर्ज—आसावरी

मना मति चालो रे चाल विराणी[1], आतो आछी
नहीं दुःखदानी ॥ टेर ॥

अन्योंगुन अज[2]मेर[3] दिखावे; जेवाज्ञो[4] गुन खानी।
जेतारण[5] जिन भूठो जाने, चौकड़ी[6] में अगवानी ॥मना. १॥
हरसाले[7] रामावस[8] मेरतो[9], बावरो[10] कह बतलासी। करमावस[11]

१ दूसरी २ अज यानि चावल ३ मेर यानि मेरु पर्वत ४ वे गुणवान कहीजे ५ तारणे वाले जिनेन्द्र ६ चौकड़ी (क्रोध मान, माया, लोभ) कषाय ७ हर समय ८ रामा अर्थात स्त्री के वश में ९ तल्लीन १० पागल ११ कर्मा के वश

सू ऊठ चलेसी, साथीन नागौर आसी ॥ मना. २ ॥
लस्कर जोधपुर कालू का, दिल्ली पर जद जासी। केते
आज गये कलकत्ते, नवोशहर वसासी ॥ मना. ३ ॥
विसलपुर दया नहीं पाली, रणसी गांवसू जानी।
रायपुर सू वे नहीं जांसी, देह वदाणो आणी ॥ मना. ३ ॥
लोकघणो मदरास में ताते; जयपुर कहो किम जावे।
नाथ शिष्य चौथू कहे गुरु की फलोधी कुचेरा में गावे ॥

---

१२ साथ में १३ ना यानि नर गौर यानि स्त्री १४ फौज १५ जोध यानि भट पुर यानि घणा १६ काल का १७ देह पर १८ कल यानि गये दिन कत्ते मने कितने ही १९ अपर गति में जावेंगे २० शल्य (माया शल्य निदान शल्य और मिथ्या दर्शन शल्य) रहित २१ रणसिंगा २२ वसु यानि आठ २३ राय धन पूर बहुत २४ राम २५ मद यानि घमण्ड रास यानि समूह २६ मोक्ष २७ फलो यानि प्रफुल्लित हो धी यानि बुद्धि

नोट—इस स्तवन में गांवों के नाम दर्ज किये गये हैं रचयिता ने अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से गांवों के नाम का अर्थ अच्छी तरह ढूंढ है अतः रचयिता को कोटिश धन्यवाद है

—संपादक

स्तवन नं. २०

तर्ज—मति बांधो गठरिया अपयश की

मति बांधो कर्म की गठरी रे ॥ टेर ॥

साधु बने पे समता न साधी ममता लगी निज मठरी रे ॥ मति. १ ॥ मुनिपन तन पर धार लियो पिन, लत नहीं गई कुल वटरी रे ॥ मति. २ ॥ जोगी बन्यो पे जाल न छोडी, आदत क्यों लट पटरी रे ॥ मति. ३ ॥ ब्रह्मचारी बन वनिता से फिर, क्यों ! बातां सटपटरी रे ॥ मति. ४ ॥ नाथ नो "चौथू" कहत रियो मैं, तिथि माधु वद छटरी रे ॥ मति. ५ ॥

स्तवन नं. २१

तर्ज—आखिर नार पराई है

तुम आखिर यहां से जावोला, खरची बिन क्या
खावोला ॥ टेर ॥

आव डेक जाय प्यारां पाछो नहीं आणो, अठा सूं हजारां कोस आगे फिर जाणो, यांमें फरक जरा नहीं पावोला ॥ तुम. १ ॥ पराई बुराई मांही बांध रयो गाती, आतो बात मैं ही सुखी बोले ठोर छाती । जामें जरा खोफ नहीं लावोला । तुम. २ ॥ अठे चौड़े छाने कोई करे बइमानी, प्रवरदिगार से तो नहीं जरा छानी । तुम

नाहक लोक हसावोला ॥ तुम. ३ ॥ भूल चूक कोई की न करी ते भलाई, पायोड़ी अक्कल थारी काम कांई आई भलां यहां पर काम चलाओला ॥ तुम. ४ ॥ म्हारी तो मनाई पछे करी मनचाई, पिन लारलो नुकसान थारो देख लीजो भाई, फल मिलसी जैसा वावोला ॥तुम. ५॥ ऐसी कांई थारे म्हारे गर्ज पड़ी, वार वार कहू छूं विचार तो खरी; क्यों घर को माल गमावोला ॥ तुम. ६ ॥ 'चौथू' नथमाल शिष्य कविता बनाई, झटपट जोड़ गांव कुचेरे में गाई । शुद्ध धर्म कियां सुख पावोला ॥तुम. ७॥

स्तवन नं. २२

तर्ज— होरी की

वदन मदन को सदन सलूनो. चन्द ते चोर ले आई ।
अंश हर्यू जेतु चन्द वदन पे, कालिमा निज दे आई ॥
आजलां देत दिखाई । अबला देखो लुट मचाई कहूं ताते
मैं सब लाइ ॥ टेर ॥

विमल कमल सम नयन अनूपम, सित विचरत सुख-दाइ । विच अलि सम काली कीकी सोहे, कमलनी हरी कमलाई । वस्यो ताते सिन्धु मां जाई ॥ अबला. २ ॥ दशनावलि दाड़िम कणकेरी, अपहरली उजलाई । विगत छवि निज कण पहिचानी, छाने ते लीध छिपाई । रखे

लेवे देख लुगाई ॥ अबला. ३ ॥ चाली के कारण हंस विचारे की, चौर लिवी चतुराई । मेचक तान मराल के ऊपर, ते तसु दीध विदाई । धरी निज उर के मांई ॥ ॥ अबला. ४ ॥ साहुकार पे लार आइ जद, चौरी कर शर्मांइ । चौथू का कहना झूठ हुवे तो घूंघट में मुह क्यों छिपाई । नाथ शिष्य सांची सुनाई ॥ अबला. ५ ॥

स्तवन नं. २३

तर्ज—नवीन रसिया

मैं तो आज पछे कोइ देवी देवता ने नहीं ध्याऊंला,
मैं तो आत्मबल को जोर हमेशा खूब बढाऊंला ॥ टेर ॥

सालिगराम समरियां पेली, उन्दर देवलिया अब झेली । ले लो मिनकी मनाय फेर गण्डक न मनाऊंला ॥ मैं तो. १ ॥ देवी ब्राह्मणी म्हारे वाली, और नहीं कोइ देवी काली । खुद पोते हुं देव सेव मैं सबसे कराऊंला ॥ मैं तो. २ ॥ इण दृष्टांते समझो प्यारे. आपां से नहीं देवता न्यारे । "चौथमल्ल" कहे गांव देवली ज्ञान सुनाऊंला ॥ मैं तो. ३ ॥

स्तवन नं. २४

तर्ज—अजि मुश्किल जैन फकीरी

मेरी तो यही सला है, मति कीजोरे कोइ फाटका ॥टेर॥

जे नर करते हैं सट्टा, जब पड़ जाता है घट्टा, फिर करती दुनियों ठट्ठा । अब देवाला निकला है, उड़ जासी पटा सब टाट का ॥ मेरी. १ ॥ जब तेजी की मन्दी आवे, जद घर में जा घबरावे, नान्या की मां बतलावे । आंखों में जल क्यों चला है, कहो काम कैसा है हाट का ॥ मेरी. २ ॥ सुन लीजे मेरी प्यारी, किश्मत की बातां सारी, हुइ रुई बीस टकारी । फिर मन्दी का ही हला है. पहिले था भाव ए साठ का ॥ मेरी. ३ ॥ अब दीजे मांने गहना जो तैंने बदन पर पहना, यह मान प्यारी मुझ कहना । नहीं तर तो मरन भला है, पीलेंगे जहर भर बाटका ॥ मेरी. ४ ॥ गहेना ले घर से आया बिच में यां दोस्त सुनाया, अब भाव आया मन चाया । फिर घर में आ निकला है, दल चढिया अंगुल आठ का ॥ मेरी. ५ ॥ सुनले नान्या की माजी, अब करदूंला में राजी मेरी ईश्वर राखी बाजी । मेरे में कैसी कला है म्हांने सुख है मुल की लाठ का ॥ मेरी. ६ ॥ फिर भाव सुना मंदी का, पीयु कीना मुखड़ा फीका, नारी कहे

यह नहीं नीका। मेरी तो यही इतला है कहे चौथू शिष्य स्वामी नाथ का ॥ मेरी. ७ ॥

स्तवन नं. २५

तर्ज—तरकारी लेलो मालण

मैं जाण लियो रे तू छै भरमायो कुमता नार नो ॥टेर॥

जवानीरा जोर में सरे, नरभव निकमो हारे। पर नारी रा पाप में सरे, परगट पाप बधारे रे ॥ मैं. १ ॥
अत्तर तेल फुलेल लगा कर, टेडा पेच झुकावे। कण्ठी डोरा और कन्दोरा, जेब घड़ी लटकावे ॥ मैं. २ ॥
कोट बूंट पतलून पहन कर, मुह में ली सीगरेट। हिन्दु पन को पतो न लागे, बोले वाटर क्रैट रे ॥ मैं. ३ ॥
पनघट ऊपर जाय विराजे, अधर छेल हुए ताजा। दुनियां में नहीं इज्जत आबरू, मन मांही महाराजा रे ॥ मैं. ४ ॥
करले काम गरीबी से तू मत करना मगरूर। 'चौथू' नाथ नो कहे डेह गांव में, भरी सभा भरपूर ॥ मैं. ५ ॥

स्तवन नं. २६

तर्ज—पन्नजी सूण्डे बोल

मत कर ममता रे, चेतनिया अब तू लेले समता रे ॥टेर॥

अनन्त काल तो बीत गयो इण, भववन मांही भमता

रे । दुःख देवेला लालच तू मत समझे गमता रे ॥ मत. १ ॥ लालच के कारणिये देखो, नाना विध दुःख खमता रे । करे नौकरी जाय नीच की, आई अधमता रे ॥ मत. २ ॥ लाखांइ नर लालच करतां, दया धर्म ने वमता रे । नरभव निकमो खोय दियो, आ रामत रमतां रे ॥ मत. ३ ॥ लोभ छोड़ "नथमल्लजी" स्वामी, धार लिवी उर दमता रे । "चौथमल्ल" कहे महा मन्दिर में छोडो ममता रे ॥ मत. ४ ॥

स्तवन नं. २७

तर्ज—आखिर नार पराई है

जो शान्ति जिनन्द ने ध्यावे है, ज्यांरा जन्म मरण
मिट ज़ावे है ॥ टेर ॥

संकट कोट हरे इक छिन में, शान्ति वसे जो जिनके मन में । वो अजर अमर पद पावे है ॥ जो. १ ॥ अधम उधारण तारण हारो, अचिरानन्द जिनन्द पियारो, प्रभु म्हांने अधिक सुहावे है ॥ जो. २ ॥ चौतीस अतिशय है गुनवारा, और विवर्जित दोष अठारा । ज्यांरा गणधर ध्यान लगावे है ॥ जो. ३ ॥ स्वामी 'नथमल्लजी' गुण-धारी, चौथमल्ल कहे मैं बलिहारी, ज्यांरे चरणां शीश नमावे है ॥ जो. ४ ॥

स्तवन नं. २८

तर्ज—मुखड़ा क्या देखे दर्पन में

चेतन क्यों नहीं समझे मन में, तेरी ऊमर जावे छिन
छिन में ॥ टेर ॥

मात पिता सुत कुटुम्ब कबीलो, तन धन और यौवन में। यां में क्यूं ललचायो मूरख आखिर वासो वन में ॥ चेतन. १ ॥ तीन खण्ड को राजा रावन, लंका थी सौवन में। लिछमन उनकू मार लियो है, जाय पड़ियो नरकन में ॥ चेतन. २ ॥ कृष्ण नरेश्वर महा पुण्यवन्ता, पुरी द्वारिका रन में। लिछमी उनके संग न चाली, मरे कौशांबी वन में ॥ चेतन. ३ ॥ नाथ मुनि को शिष्य कुचेरे, तवन कियो भादुवन में। उन्नीसे चहोतर वरसे, प्रभु जपिये पल पल में ॥ चेतन. ४ ॥

स्तवन नं. २९

तर्ज—थारो नरभव निष्फल जाय

थारो नरभव निकमो जाय जवानी री टेंट में ॥टेर॥

मुख पर मीठो बोले कपटी, छुरी कतरणी पेट में। खबर पड़ेला तेरी जद तूं, आसी कजा की फेट में ॥ ॥ थारो. १ ॥ सत्संगत करवाने तू तो, गयो न गुरु की

भेट में। गुरु विन कोई आडो न आसी, जम राजा री चपेट में ॥ थारो. २ ॥ सामायिक करने तू बैठो, जीव थारो सिगरेट में। मन तो थारो जाय लग्यो है ललना-तनी लपेट में ॥ थारो. ३ ॥ वातां करतां दिवस गमायो रात गमाइ लेट में। माताजी का गर्भ बीच क्या, कोल किया क्या था थेट में ॥ थारो. ४ ॥ करना मति मगरूड़ नसीहत देता हू ए रेट में। नाथ मुनि शिष्य "चौथमल्ल" कहे गांव कुचेरा जेठ म ॥ थारो. ५ ॥

स्तवन नं. ३०

तर्ज—आखिर नार पराई है।

क्यों सुस्त होय बैठाभाया, धर्म करन का दिन आया ॥टेर॥

उत्तम कुल अरु नरतन पाया, लम्बी आयु निर्मल काया। अब क्यों न करो मन का चाया ॥ धर्म. १ ॥ एसा फिर अवसर कब आसी, चूक गये तो फिर पिछ-तासी। टेलीफोन दे गुरु राया ॥ धर्म. २ ॥ जिनके कारण धर्म तेज तूं; नहीं वीर भगवान भजे तूं। है वा सब झूठी माया ॥ धर्म. ३ ॥ तेरा कुन अरु तू है किनका नहीं भरोसा है इक छिन का। जैसी है बादर छाया ॥ धर्म. ४ ॥ श्रावण वदी अष्टमी शुक्रवार, साल पिचीया-सिये गांव पीपार। नथमल शिष्य चौथू गाया ॥ धर्म. ५ ॥

स्तवन नं. ३१

तर्ज—ख्याल की

नहीं खटे पेट में हरगिज मती कहीजो बातां नार ने ॥टेर॥

अपनी घर वाली कूं प्यारे, भेद कछु नहीं देना। छानी बात भूल नहीं केणी, है नीति का केणाजी॥ ॥ नहीं. १ ॥ बात पेट में खटे न पल भर, झट बाहिर पधरावे। और चीज सब खटे पेट में, बड़ो अचम्भो आवेजी ॥ नहीं. २ ॥ नहीं केवे तो चढे आफरो काम काज नहीं सुहावे। पाड़ोसण ने जाय पुकारे, अण पूछां दल जावेजी ॥ नहीं. ३ ॥ और वखत जो नहीं मिल तो उपासरा में आवे। चाची बायों भेली होकर, वातां खूब बनावे जी ॥ नहीं. ४ ॥ साधु श्रावक दोनों वरजे तो पिण ते नहीं मांने। जात लुगाई बात ने सरे, परमेश्वर कर जानेजी ॥ नहीं. ५ ॥ उन्नीसे इकोत्तर श्रावण, वदि पख बारस थावे। शहर सादड़ी नथमलजी रो, शिष्य "चौथमल्ल" गावेजी ॥ नहीं. ६ ॥

स्तवन नं. ३२

तर्ज—हां सगीजी ने पेड़ा भावे

हां अरे परदेशी छैला, परभव की खरची कद लेला,
तू सतगुरु की सीख ऊपर कद ध्यान धरेला ॥टेर॥

बांधे फैंटो शिर केसरियां, गला तेरा सोना से भरिया। साइकल मोटर और फिरे तूं चढतो रेलां रे। ॥ अरे. १ ॥ सुन्दर बाग बगीचां जावे, गोठ गूघरी करके खावे। खरचे दाम निकाम देखवा मेला खेला रे ॥ अरे. २ ॥ सत्संगत में तूं शर्मावे, पर नारी पातर घर जावे। इण विध और अनेक सांग तूं नवा करे लारे ॥अरे. ३॥ तो तं भवजल को किम तिरसी, धर्म खजानो किम कर भरसी। विना कियां कुछ धर्म यार किम काम सरेला रे ॥ अरे. ४ ॥ झूठा मात पिता सुत, नारी झूठी तन धन जग की यारी। इनकी मोहब्बत तोड़ नहीं तर, नरक पड़ेला रे ॥ अरे. ५ ॥ छोड़ सयाना जन्टिलमैनी. दया धर्म में तूं चित्त देनी। दया धर्म को मूल धारले साथ चलेला रे ॥ अरे. ६ ॥ करो धर्म तुम मत शर्माओ, महावीर को ध्यान लगावो। नाथ मुनि शिष्य 'चौथमल्ल' चेतावे पेला रे ॥ अरे. ७ ॥

स्तवन नं. ३३

तर्ज—ख्याल की

बदनामी नालो फल तो लागेला कड़वा आकसा ॥टेर॥

बदनामी रावण ने लीधी; सुनी हुसी या बात। प्यारो! पंक प्रभा में पड़ियो, तीन खण्ड को नाथ रे

॥ बद. १ ॥ दुर्योधन राजा दिल्ली का, किया बदी का काम। डेरा जाय सातमी दीधा, नाम किया बदनाम रे ॥ बद, २ ॥ ली बदनामी पद्मोत्तर ने, फिर कीचक मस्तान। हाथ बल्या हौला पिण ढुलिया, कंस गमाया प्राण रे ॥ बद. ३ ॥ बुरी करे सो है बदनामी, कुल ने कलंक लगावे। बुरीगार बाजे दुनियां में, नरक निगोद में जावे रे ॥ बद. ४ ॥ बण आवे तो करो भलाई, बुरी बात मति कीजो। नाथ शिष्य "चौथू" का कहना, मन में सब धर लीजो रे ॥ बद. ५ ॥

स्तवन नं. ३४

तर्ज—आखिर नार पराई है।

जो मन की ममता मारी है, उस नर की बलिहारी है ॥टेर॥

जो नहीं मन की ममता मारे; व्यर्थ सांग सन्तन को धारे। तो कहदो ओ भिखारी है ॥ जो मन. १ ॥ बाजे पंच महाव्रत धारी, पिन निज आतम को न वितारी तो जानो पेट बेगारी है ॥ जो मन. २ ॥ औरों को प्रभु हुकम सुनावे, पोते अपना पता न पावे। वे *दीपक समकित धारी है ॥ जो मन. ३ ॥ दूजा ने कहे झूठ न बोलो, है जिन्दगानी तेरी जोंलों। खुद झूठ में ऊमर

* अथवा भवि आदि सकारी है ॥ पाठान्तरे

विगारी है ॥ जो मन. ४ ॥ ममता रहित मेरे गुरु नामी नांम भलो नथमल्लजी स्वामी । "चौथू" रज चरणां री है ॥ जो मन. ५ ॥

स्तवन नं. ३५

तर्ज—पूर्ववत्

प्रणमूं एक चित्त पारस नेराऊँ मैं.समता.रखने.॥टेर॥

पारस प्रणम्यां पातिक जावे, पुण्य बधे अघ परा पुलावे । मैं याद करूं मेरा बारस ने ॥ प्रणमूं. १ ॥ पौष वदी दसमी दिन नीको, जन्म भयो पारस प्रभुजी को । इन्द्र उत्सव कियो हंस हंस ने ॥ प्रणमूं. २ ॥ अश्वसेन सुत पास पियारो, जपे "चौथमल्ल" जाप तिहारो । मास पौष वदी बारस ने ॥ प्रणमू. ३ ॥

स्तवन नं. ३६

तर्ज—खोटो मालन्वियो

नरभव मुस्किल से मिल्यो, अब लो तुम जन्म सुधार । अर्थ विचारोनी ॥ टेर ॥

कांई होवे खेवो पार । ओ स्वारथियो संसार ॥

||अर्थ.|| सुलटा[१] शिवपुर देत है, कांई उलटा[२] नरक मझार.
| अर्थ. | उलटा[३] वश में आवसी जद सुलटा[४] को परिहार
||अर्थ.१|| ईश्वर ने उलटा[५] करो, कांई सुलटा[६] उर में धार
| अर्थ. | उलट[७] सुलट होसी नहीं, नित गुणिये
नवकार || अर्थ. २ || उलट[८] बंधे सुलटा कियां, वो है
द्वादस प्रकार | अर्थ. | सुलटा[९] सूं उलटो नहीं, उलटो[१०]
धर्म सुधार || अर्थ. ३ || ऊंधावृक्ष[११] री ओपमा, उलटा[१२]
मर न निवार | सुलटा[१३] सूं उलटा टले, ओ जैन धर्म को
सार || अर्थ. ४ || एन छोड़ दे आपरी, फिर छोडो
मांड फकार[१४] | मांड चकार[१५] होसी तुम्हें, सुन जिन मांड
वकार[१६] || अर्थ. ५ || उलटा सुलटा[१७] सबका रहो, जद मिले

स्तवन नम्बर ३६वां का अर्थ इस प्रकार है
१ समता २ तामस ३ करन-(इन्द्रिय) ४ नरक ५ याद ६ दया
७ दरद ८ पत, तप ९ लोभ, भलो १० भलो ११ कल्प वृक्ष
की धर्म उपमा है सो १२ पलक भर भी छोडना नहीं
१३ नरम, मरन १४ फैन १५ चैन १६ वैन १७ दास सदा

सर्व अधिकार । ओ कामों करियों विना, कांई करसी [१८] कूंच अकार [१९] ॥ अर्थ. ६ ॥ म्हारी उलटी पाप में, कांई [२०] सुलटी गुरु चरणां र । नथमल्ल शिष्य "चौथू" कहे, अहो गुरुवर म्हांने तार ॥ अर्थ. ७ ॥

स्तवन नं. ३७

तर्ज—आखिर नार पराई है

गम खाऊ का गुण गाया है, सोही अमर पद पाया है ॥टेर॥

गम खाई थी गजसुखमाल, छिन भर मांही हुआ निहाल । पड़ी रही सो काया है ॥ गम. १ ॥ वृधर पूज्य बड़े बड़भागी, जिनकी लिव मुगती सूं लागी । पूज्य आनन्दपुर में आया है ॥ गम. २ ॥ सरिता मांही आप सदा ही, आतापना लेते मुनि आई । नर नरछी घाव लगाया है ॥ गम. ३ ॥ उसके ऊपर क्रोध न करिया, फिर छौडाया समता दरिया । भव्य जीवों के मन भाया है ॥ गम. ४ ॥ नाथ मुनि शिष्य "चौथू" गावे, गम खाऊ ने शीश नमावे । 'मेसिये' स्तवन बनाया है ॥गम.५॥

---

१८ धिक्कार १९ मूत २० नमूं

स्तवन नं. ३८

तर्ज—पूर्ववत्

वह नर खूब नचीता है, जो काम देव ने जीता है ।।टेर।।

काम जीतना मुश्किल भाई, रामचन्द्र मोटा जग मांई । उनके संग पिन सीता है ।। वह. १ ।। ब्रह्मा विष्णु और महेशा, राखे नारी साथ हमेशा । मोटी जिणरी गीता है ।। वह. २ ।। कुण हो ? हम तो साधु भाई, रखे राम की घर के मांई । वे फिर वजे अतीता है ।। वह. ३ ।। नेमिनाथजी जग में नामी, धन्य २ वह अन्तर्यामी । ज्यों के समुद्रविजयजी पिता है ।। वह. ४ ।। मम गुरु "नथमल्लजी" ब्रह्मचारी "चौथमल्ल" कहे मैं बलिहारी वे पिन विश्व विदिता है ।। वह. ५ ।।

स्तवन नं. ३९

तर्ज—हां सगीजी ने पेड़ा भावे

हां सभी स्वारथ का मेला, आखिर में तू होय एकेला । मुलक खजाना छोर होसी जंगल में डेरा रे ।टेर।

लालच में निकमो ललचावे, गहिला नर क्यों ? जन्म वितावे, आवे न तन धन लार तार नहीं संग चलेलारे ।। सभी १ ।। सागर–लोभ कियो मन चायो, पुत्रवधु जल

में डबकायो । लियो न सुकृत लार लालच पिन चलेन लेरारे ॥सभी २॥ अष्टम चक्री के मन आइ, सप्तम खण्ड साधन के तांइ । बरजे सब नर नार नाथ नहीं खण्ड सजे लारे ॥ सभी ३ ॥ हटकर लस्कर लेकर हाल्यो, पल २ सुर नर सगला पाल्यो । डाल्यो सागर बीच देवता होकर भेलारे ॥ सभी ४ ॥ लोभ थकी उण ज्ञान गमाइ उणरे सम्पत काम न आइ । कौणिक चेड़ा राय किया वमसान वर्णरा रे ॥ सभी ५ ॥ स्वामी श्री नथमाल मुनि को, "चौथमल" है दास उन्हीं को । साल चहोत्तर भादु ग्यारस गांव कुचेरा रे ॥ सभी ६ ॥

स्तवन नं. ४०

तर्ज—आखिर नार पराई है

जो दगा बाजी से दूरा है, वह नर पुण्यवन्त पूरा है । टेर। बडे २ मुनिवर जग मांही, कोइयन छोडी इण कपटाइ । वे निपट बादर से ऊंरा है ॥ जो. १ ॥ करे कपट चेला के तांई, अथवा अपनी करत बढ़ाई । नहीं संयम मांही शूरा है ॥ जो. २ ॥ श्रावक देख्या बड़ा विवेकी, जिनकी देखी धन की नेकी । इनसे वही अधूरा है ॥ जो. ३ ॥ शेष तीर्थ की वातां न्यारी, जन्म थकी कपटाई प्यारी । स्त्री पन का एह अंकुरा है ॥ जो. ४ ॥ नाथ शिष्य चौथू का

कहना, मुनिपनो कपटी में है ना। बिन कपट वेवर पर बूरा है ॥ जो. ५ ॥

स्तवन नं. ४१

तर्ज—धूंसो बाजे रे

कुण त्यागी रे तृष्णा कुण त्यागी ॥ टेर ॥

क्या गृहवासी क्या बनवासी, सबही कूं कर देगा रागी ॥ कु. १ ॥ जोशी मुल्लां पीर पेगम्बर, क्या अवधु क्या बैरागी ॥ कु. २ ॥ देव दानव मानव हरि चक्री, वहां पिण ममत्व जाय लागी ॥ कु. ३ ॥ तृष्णा रूप तरंग भवोदधि पारल है इक वैरागी ॥ कु. ४ ॥ " चौथमल्ल " कहे इनसे बचिया, नाथ मुनि गुरु बड़भागी ॥कु. ५॥

स्तवन नं. ४२

तर्ज—फागण री

चेतन चूक्यो जाय, वो अपना घर की प्रीत पुरानीरे ॥टेर॥

सुमति से रिसायो चेतन, कुमति रो बहकायो रे। काल अनन्तो चेतन यूंही, व्यर्थ गमायो रे ॥ चेतन. १ ॥ तूं है असंख्य प्रदेशी आतम, आछा गुण को रागी रे। कुमति के परताप तेरी सद्‌बुद्धि भागी रे ॥ चेतन. २ ॥ निज गुण कूं निहार चेतन, पुद्‌गल से सुख पासी रे।

सुमति दूरी ऊभी देखे, करसी हांसी रे ॥ चेतन. ३ ॥
कुबुद्धि कूं छोड़ चेतन श्री जिन शरणो लीजे रे।
दिव्य नैन से देखे क्युं नहीं, निज गुण छीजे रे ॥चे. ४॥
ज्ञान तो अनन्तो थारे. परदेशों में फावे रे। नाथ ध्यान
से चौथमल्ल कहे शिवपुर जावे रे ॥ चेतन. ५ ॥

स्तवन नं. ४३

तर्ज—तांवड़ा धीमो सा पड़जा रे

प्यारे ! परपरनी परहरनी रे २ करनी करनी करनी
कही जिनवरनी उर धरनी ॥ टेर ॥

सारी नारी नागन कारी, प्यारी नहीं परनी । सारी
नारी को मुख्त्यारी, श्रोपमलहै खरनी ॥ प्यारे. १ ॥
नौरी गौरी टोरी खांसी जगत कहे धोरी । होरी मांहे
डोरी जोरे, फोरी जन तोरी ॥ प्यारे. २ ॥ नरक सरक
नहीं फरक तरक कछु, हरक सरक जावे । थरक धरक तन
छतियो करसी, एम उदे आवे ॥ प्यारे. ३ ॥ ठाकर
काकर वहाकर दिलगी, चाकर से करदी । आखिर जाकर
ठोकर खाकर, घर आयो जरदी ॥ प्यारे. ४ ॥ हटकी
जद उन मटकी पटकी, खटकी उर चटकी । चटकी
बटकी भटकी नटकी, नारी थी नटकी ॥ प्यारे. ५ ॥

ऐसी जान कर कबहु न करनी, नारी से यारी। चौथमल्ल कहे धन्य नाथ मुनि वाले ब्रह्मचारी ॥ प्यारे. ६ ॥

स्तवन नं. ४४

तर्ज—पन्नजी मून्डे बोल

पइसो प्यारो रे २ दुनियां ने लागे मोहनगारो रे ॥टेर॥

पइसा से नर प्यारो लागे, जो काजर से कारो रे।
अजब चीज दुनियां में पइसो, कहे जग सारो रे ॥प. १॥
पइसा खातर परमेश्वर की, सौ सो सोगन खावे रे।
प्राणप्यांरी को छोड पुरुष परदेशां जावे रे ॥पइसो. २॥
पइसा सूं दुनियां दे आदर, आगा आप पधारो रे।
निर्धन ऊभो टुग मुग जोवे, लागे खारो रे ॥पइसो.३॥
पइसा आगे पतो न लागे, जो परमेश्वर आवे रे।
महादेव ने पारवती क्या बाहिर कढ़ावे रे ॥ पइसो. ४ ॥
काणा खोड़ा लूला बोला, ने पइसो परणावे रे। निर्धन जग में छल भंवर पिण, नार न पावे रे ॥ पइसो. ५ ॥
मात पिता पइसा बिन बोले, है बेटो दुःखदाई रे। बिन पइसा थी बेनड़ बोले, ओ कांई भाई रे ॥ पइसो. ६ ॥
बिन पइसा थी पड़ो धेड़ में, बोले सगी लुगाई रे। सासु सुसरा बोले, मिल्यो बुरो जमाई रे ॥ पइसो. ७ ॥
मुरदा ने पिण कोईयन बाले, काग कुत्ता मिल खावे रे।

साव सगो भाई पइसा विन, नहीं बतलावे रे ॥ प. ८ ॥
तालाव पानी रो सीर घर में, आतां भावज पाले रे, तर-
कारी नहीं घाले बोले, आइजे काले रे ॥ पइसा. ६ ॥
पइसा ने जो धूल बरोबर, समझे सो नर ज्ञानी रे ।
"चौथमल्ल" नथमाल शिष्य कहे सुनो भवि प्राणी रे ॥
॥ पइसा. १० ॥ उगणीसे की साल अस्सी में, गांव
विसलपुर मांई रे । पोष वदी द्वितीया के दिवसे, जोड़
सुनाई रे ॥ पइसा. ११ ॥

स्तवन नं. ४५

तर्ज—पूर्ववत्

क्रोध पर हरवो रे २ इण क्रोध तणो फल लागे
करवो रे ॥ टेर ॥

निम्बोरी को करवापन कहां, जहर जवर झक मारे
रे । क्रोध कर्म को बीज भवोभव शान बिगारे रे ॥ क्रोध
१ ॥ क्रोड़ पूर्व की तपस्या पापी, निर्फल सर्व गमावे रे ।
चार गति चौगान बीच में, ओही भमावे रे ॥ क्रोध. २ ॥
वारे अगन अवल निज घर, पुनि पाड़ोसी ने बारे रे ।
नीर मिल्यो उपशान्त हुवे, नतु नगर उजारे रे ॥क्रो. ३॥
क्रोध कियो गुरु शिष्य ऊपरे, मिण्डक पाप मिटातां रे ।
थम्भारी लागी गुरु शिर शिष्य कूटण जातां रे

॥ क्रोध. ४ ॥ क्रोध कियां भयो चण्ड कोशियो, वीर प्रभु प्रति बोध्योरे। प्रथम कषाय छोर तिरी भो तज सुरपद सोध्यो रे ॥ क्रोध. ५ ॥ अचंकारी भट्टा देखो, क्रोध धणी पर करियो रे। सेवट रीस तजी जद उणरो, आतम तरियो रे ॥ क्रोध. ६ ॥ क्रोध कर्म बन्धन को कारण, तज ले भवजल पारो रे। नाथ शिष्य चौथू कहै मोने 'जयगच्छ' प्यारो रे ॥ क्रोध. ७ ॥

स्तवन नं. ४६

तर्ज—पूर्ववत्

जोवन थारो रे, ढ़ल जासी वालो डूंगर वारो रे ॥टेर॥

ज्यों करिवर को कान अथवा, प्रेम विटल वनिता रो रे। पीरो पान पीपर को परतां, लगे न वारो रे ॥जोवन १॥ इनके कारन केम करे तूं आंख मींच अंधियारो रे। लाभ खर्च सव सोचले, नहीं हुवे विगारो रे। जोवन. २॥ आंखों ऊपर एनक थारे, कानां ऊपर मोती रे। एनदार पतलून चढा कर, तजदी धोती रे ॥ जोवन. ३ ॥ वोली में वेड़ाई थारी आंखों में अकड़ाई रे । धर्म कियां विन दुःख देवेला, या करड़ाई रे ॥ जोवन. ४ ॥ टेडी निगाह लगा कर तूं तो; वड़ी देर से वोले रे। आकर जो वतलावे तो तूं नयन न खोले रे ॥ जोवन. ५ ॥

नहीं पूछण की बात पछे कोई, एल. एल. बी. होजावे रे। हम चौड़े और गली सकड़ी; किसमें मावे रे ॥जोवन ६ ॥ नाथ मुनि शिष्य "चौथमल्ल" वे कीधो धन्य जमारो रे। जीके जवानी जीत गया, वन वन अनगारो रे ॥ जोबन. ७ ॥

स्तवन नं. ४७

तर्ज—है मुश्किल जैन फकीरी

मेरी तो यही सलाह है, तुम छोडो चार कषाय ने ॥टेर॥

है क्रोध बड़ा दुःखदाई, सुन लेना सारे भाई, अंचंकारी भट्टा दुःख पाई। हुवा क्रोध तज्यां से भला है, सुख पाई क्रोध खपाय ने ॥ मेरी. १ ॥ जो होता नर अभिमानी, उसका नहीं रहता पानी, रावण की कथा न छानी। दुर्योधन इनसे गला है, गये नरक कुजश फैलाय ने ॥ मेरी. २ ॥ नर करता है कपटाई, वो मर होता है लुगाई, औरत मर हींज होजाई। मल्लीनाथ से भी न टला है, हुवे वनिता जिन पद पाय ने ॥ मेरी. ३ ॥ लोभी नर प्राण गमावे, फिर मर कर प्राण गमावे, फिर मर कर नरकां जावे. वहां मार गुरज की खावे। सागर सागर में मिला है गयो नरक आखिर पिछताय ने ॥मेरी. ४ ॥ मेरी नसीहत यह सुन लीजो, प्यारे चार कषाय न

कीजो, स्वामीनाथ नो ध्यान धरीजो। कहे चौथू मिले कमला है, शिव जावो गुरु गुण गाय ने ॥ मेरी. ५ ॥

स्तवन नं. ४८

तर्ज—आखिर नार पराई है

जहां जाता हूं वहां ही पाता हूं राग द्वेष की बातां हूं ॥टेर॥

जोधपुर पाली अजमेर जोय लीनो, नवा शहर मांही राग द्वेष डेरो दीनो। जैसी देखी वैसी गाता हूं ॥जहां.१॥ मारवाड़ छोड़ बीकानेर में गयो, वहां ही डंको राग द्वेष जाय वजा दियो। भलां सांची बात सुनाता हूं ॥जहां.२॥ राग द्वेष रात दिन फैल रयो सारे, जाऊं बलिहारी वांरी जो ए शत्रु मारे। ज्यांरे चरणां शीश नमाता हूं ॥ जहां. ३ ॥ राग द्वेष दोनों कर्मा के जानो, कर्म काटवे की चाय थांरे हुवे तो मानो। तज इन दोनों का नाता हूं ॥ जहां. ४ ॥ स्मामी नथमाल नो विनय दरसावे, शहर बीकानेर मांही चौथमल्ल गावे। मैं सबका तिरना चाहता हूं ॥ जहां. ५ ॥

स्तवन नं. ४९

तर्ज—पूर्वोक्त

पाप घणो पर-निन्दा में, तूं मत पड़ इनके फन्दा में ॥टेर॥

निन्दा सम कोई पाप नहीं है, निन्दक सारा नरक लही है। वो मार खावे घणी खन्दा में ॥ पाप. १ ॥ जमाली गुरु निन्दाकारी है, भव भव मांही विपत परी है। वो तो हो अपछन्दा में ॥ पाप. २ ॥ निन्दा जो करता है भाई; उसको शर्म रति भर नांई। ज्ञान हीन है अन्धा में ॥ पाप. ३ ॥ नेम धर्म तप संयम नांही, जिसका चित्त पर-निन्दा मांही। दिन खोवे इसी के धन्धा में ॥पाप. ४॥ अपनी थाप ऊथापे परकी, खबर नहीं उनको निज घर की। वो है इन्सान ढूंढा में ॥ पाप. ५ ॥ निन्दक की विगड़े सब सेखी, केई जिणोरी निजरों देखी। वे पहूंचे लोक रे पिन्दा में ॥ पाप. ६ ॥ गांव विसलपुर मांही आया, पौष बदी पांचम दिन गाया, चौथमल्ल कहे आनन्द पाया, स्वामी नथमल्लजी गुण वृन्दा में ॥ पाप. ७ ॥

स्तवन नं. ५०

तर्ज—सांसुजी थे मोरा थोंरा जाया ने

सुनो सकल श्रोतागण सज्जन ! आज पजूषण लागेजी।
आठ दिनों तक धर्म करो थे आनन्द होसी आगेजी ॥टेर॥

ऊठो प्यारे ! त्याग करो तुम, निशि भोजन करने का जी। करो सज्जन जीवों की करुणा, मारग यह तिरने का जी ॥ सुनो. १ ॥ झूठ जरा मत बोलो प्यारे !

साच सांई कूं प्यारा रे। चौरी चुगली आठ दिनों तक इनसे रहिजो न्यारा रे ॥ सुनो. २ ॥ क्रोध-मान का मुंह कर काला, दीजो देश निकारो रे। कपट लोभ छल छिद्र किसी का, निजरां मति निहारो रे ॥ सुनो. ३ ॥ परतिरिया से महोबत प्यारे, भूल चूक मति कीजो रे। शील रतन को जतन करो, फिर दान सुपातर दीजो रे ॥ सुनो ४ ॥ गाजर, मूला, कांदा, आलू, जीव अनन्ता इणमें रे। श्रावक होकर खावे लिलोती, पाप घणो छै तिणमें रे ॥ सुनो. ५ ॥ उगणीसे की साल छियन्तर, जोधपुर चौमासो रे। नाथ मुनि शिष्य 'चौथमल्ल' कहे, धर्म कियां सुख पासो रे ॥ सुनो. ६ ॥

स्तवन नं. ५१

तर्ज—कांगसीयारी

शुद्ध स्याद्वाद सिद्धांत को कोई विरला ही जाणे रे।
जाण लियो फिर वो नर तो अनुभव की मोजां माणे रे ॥टेर॥

अनन्त धर्म मय एक वस्तु को, एक दृष्टि मत देखो रे। अनेकान्त है नाम इसी का, ज्ञानी गम है लेखो रे। मन ऊंधी ताणे रे ॥ शुद्ध. १ ॥ कृषिकार मिल सात जणे आपस में करे लड़ाई रे। दूजा री तो बात न माने, करे अपनी ही बडाई रे। निज मति ने ठाणे रे ॥ शुद्ध. २ ॥

एक पुरुष ने आय बहुत नर, तात भ्रात बतलावे रे। कहो इणी में झूठो कुण है, स्याद्वाद समझावे रे। निश दिन पहिचाणे रे ॥ शुद्ध. ३ ॥ इण पर स्याद्वाद सिद्धांत को जाणे कोई विवेकी रे। "चौथमल्ल" नथमाल मुनि शिष्य, कहे इन्हीं को नेकी रे। बगड़ी में बरवाणे रे ॥ शुद्ध. ४ ॥

स्तवन नं. ५२

तर्ज—ख्याल की

जिनराज प्रभुजी थांरी वानी पर जाऊं वारियों ॥टेर॥

ऐसी वानी तीन लोक में, जोई पिन नहीं लाधे इन्द्र इन्द्राणी वन अनुरागी, नरभव लही शिव साधे रे ॥ जिन. १ ॥ चार ज्ञान चौदह पूर्वधर, गणधर आप खानी। ऐसे वानी पुण्यवन्त प्राणी, सुने सदा हित आनी रे ॥ जिन. २ ॥ रोग शोक दुःख दारिद हरता दिव शिव सुख की दाता। अप्रतिहत अविरुद्ध कथक प्रभु, केवल ज्ञान के धाता रे ॥ जिन. ३ ॥ जिन वाणी के एक अच्छर का, अर्थ जो केवल भोगी। करे कोड पूर्व लूं कोई, पार न पावे जोगी रे ॥ जिन. ४ ॥ निर्दूषित भूषित गुण गण मुनि, अनुभव रसमें राता। "चौथू" कहे 'नथमाल' गुरु जिनवानी के वक्ता विख्याता रे ॥ जि. ५ ॥

स्तवन नं. ५३

तर्ज—सलूनारी

ममता तज समता गही, रमता ज्ञान आराम सुज्ञानी ।
दमता चमता आदरी, कुमता जानी हराम सुज्ञानी ॥
पावन गुरु पद वन्दिये ॥ टेर ॥

काम क्रोध मद लोभता, मच्छरता नहीं मूल सुज्ञानी सुन्दरता उर शोभती, करतां काम अनुकूल, सुज्ञानी ॥ पावन. २ ॥ विचरे मुनि महिमण्डले, नव कल्पी निकलंक । सुज्ञानी । आदर मन उपगारता, तारता भविय निशंक । सुज्ञानी ॥ पावन. ३ ॥ साधे नित शुद्ध साधुता, धरता आतम ध्यान । सुज्ञानी । अलख लख्यो इण खलक में, वारु नेह विज्ञान । सुज्ञानी ॥ पावन. ४ ॥ ऐसे शुद्ध अनगार ने, मान्या छै भगवान । सुज्ञानी । नाथ मुनि ने हूं नमूं, पलक पलक जोड़ी पान । सुज्ञानी । ॥ पावन. ५ ॥ गातां शुद्ध गुण मुनितणा, मिलसी सारा थोक । सुज्ञानी । 'चौथमल्ल' री तेहने, है चरणां में धोक सुज्ञानी ॥ पावन. ६ ॥

स्तवन नं. ५४

तर्ज—तांवड़ा धीमो सो पड़जा

लुगाई मतलब की गरजी रे २, जिससे मोहब्बत भूल
न करनी जिनवरजी वरजी ॥ टेर ॥

कोड जतन कर राखो इनकूं, कदी नहीं है अपनी । स्वारथ विन उन सार न पूछी, परदेशी नृप नी ॥ लुगाई. १ ॥ गाणो रोणो सब मतलब को, जाणे सकल जहान । छाने नहीं वा चवड़े केवे, सुनो जरा दे कान ॥लुगाई. २॥ लंका जाइजो सोनो लाइजो, सगी नणंद रा वीर । अवर अनोखी चीजां लाइजो, लाइजो दिखनी चीर ॥ लुगाई. ३ ॥ काग उड़ासूं बैठी घर में, इसी जमावे पेठ । वेगा पाछा आवजो सरे, थे हिवराणी रा जेठ ॥ लुगाई. ४ ॥ मतलब थो जद गावती सरे, भालोंछूं घर आव । आंख्यां भर भर डुसक्यां खाती, जो चढ़ जातो ताव ॥लुगाई. ५॥ मतलब बन्द हुवा सूं देखो, गजब करी उण नार । उंधी माला फेरन ढूंकी, कद मरसी भरतार ॥ लुगाई. ६ ॥ उगणीसे बहोत्तर खजवाणे, जेठ पंचमी सुदी जाण । "चौथमल्ल" नथमाल मुनि शिष्य, कियो सत्य ए गान ॥ लुगाई. ७ ॥

स्तवन नं. ५५

तर्ज—बिन ऋतु वर्षे मेह

जिन जप वादे जा परी हैक. नींदड़ अलग अठा सू ऊठ नहीं तर में जिन नाम री हैक, नींदड़, मार देऊंला मूठ क निगुणी नींदड़ी हैक बैरण मति सन्तावे मोय ॥ टेर ॥ १ ॥

तू मतवारी हो रही है क, नीं. नयनों में लपटाय, नीकी हगकी की ग्रही है क. नी. जरान जोयो जाय । ॥ क. नि. २ ॥ कह तूं किणकी अंगजा है क नीं. किसने परणी तोय । किन कारण फिरती फिरे है क, नीं. किणे बतायो मोय क. ॥ नि. ३ ॥ राम दुहाई है तुझे है क नीं. सांच बतादे बात । दंशनावरणीय पिता होक चेतन, परणाई नहीं तात क. नि. ॥ ४ ॥ वेनड़ म्हारे चार छेक होक चेतन, म्होटी म्हांसू जान । तीन अपरणिता है तिका होक चेतन, लेवे जोवन पान क. नि. ॥५॥ कुम्भकरण सुखियो हुसी होक चेतन, तसु परणाई एक । थीनद्धि तसु नाम है होक चेतन, विवरा तनो विवेक क. नि. ॥ ६ ॥ आज पछे आइजे मति है क, थांने जोग माया री आन । नथमल्लजी गुरु भेटिया है-क गावे चौथमल्ल मुनि गान क. नि. ॥ ७ ॥

स्तवन नं. ५६

तर्ज—हो सरदार थांरो पचरंग पेचो भींजे०

हे जिनराज ! तेरे चरणों में मन मोहन म्हारो मन छै ॥टेर॥

अश्वसेन सुत पास कुँवरजी, जन्म लियो जग धन छे, धन छेक तेरे. ॥ १ ॥ पतित उद्धारण भविजन तारण, दुख तप टारन धन छे धन छेक. तेरे. ॥ २ ॥ कमठ विदारण नाग उद्धारण. अमित सुजन को वन छे वन छेक तेरे. ॥ ३ ॥ कठिन कर्म को जाल निवारण, पारस आप पवन छे पवन छेक तेरे ॥ ४ ॥ रीयां पिचन्तर नाथ मुनि जग चौथमल्ल कहे धन छे धन छेक तेरे. ॥ ५ ॥

स्तवन नं. ५७

तर्ज—तूं ही २ याद प्रभु आवे रे दरद में

जैसे बने तैसे मौने तारो रे सांवरिया ॥ टेर ॥

तारण तिरण प्रभु विरुध तिहारो. चौर लियो चित्त ते ते म्हारो रे सांवरिया ॥ जै. १ ॥ कोई माने ब्रह्मा कोई कृष्ण मुरारो, म्हारे तो शरण इक थारो रे सांवरिया ॥ जै. २ ॥ तू ही मेरे तात मात भ्रात सुखकारो, तू ही मेरे प्राण पियारो रे सांवरिया ॥ जै. ३ ॥ समुद्र विजय सुत नेमि कुंवारो, दास की अरज अब धारो रे सांवरिया ॥ जै ४ ॥ पतित उद्धारन विरुध तिहारों, भव

जल पार उतारो रे सांवरिया ॥ जै. ५ ॥ चौथु नथमाल शिष्य गावे जश थारो, गांव कुचेरे सुख सारो रे सांवरिया ॥ जै ६ ॥

स्तवन नं. ५८

तर्ज........ ....

श्री शांतिनाथ भगवान अब मेरी अरजी लो नी मान नौकर थांरो ऊभो आगे कर जोड़ी गुण गाय रयो ॥टेर॥

थे तो अचिरादेजी रा लाडला, थांरो नाम लिया दुःख जाय ॥ नौकर. १ ॥ म्हांने भवजल पार उतारिये, म्हारे दूजी नहीं कोई चाय ॥ नौकर. २ ॥ इन्द्र चन्द्र नर देवता थांरे, लुल २ लागे पाय ॥ नौकर.३॥ मैं तो ओलख लीना आपने, म्हारे दूजो न आवे दाय ॥नौकर.४॥ स्वामी नाथ शिष्य चौथू कहे, म्हारे शांतिनाथ वरदाय ॥नौकर.५॥

स्तवन नं. ५६ (अ)

तर्ज........ .....

आज मैं कहो अब कैसे ! छोरूंरी मां सांवरियां को साथ ॥ टेर ॥

म्होटे २ जानी आये, जिसमें जादु नाथ । कारे गोरे हरि बलदेवा, वो भी उनके साथ ॥ आज. १ ॥ भोले २ जानवरों की, कानां सुनली बात । तेज चढ़ी को छोड

चले पियु' ताते चित्त अकुलात ॥ आज. २ ॥ लारे २ मैं पिण जावूं पाले मत मुझ मात । राजुल नारी गढ़ गिरनारी भेट लिया जग तात ॥ आज. ३ ॥ नाथ मुनि को शिष्य कुचेरे, चौथमल्ल गुण गात । उन्नीसे चिमन्तर आसु, वर पंचमी परभात ॥ आज. ४ ॥

स्तवन नं. ५६

तर्ज............

खबरियां मोय लागी रे प्रभु गिरनारी ॥ टेर ॥

जावो रे जावो कोई नेम मनावो, जेजन लावो रे सुनो नर नारी ॥ ख. १ ॥ खबर लावे जो कोई प्रेम पीया की, सांची कहूं देख रे मोतियन की मारी ॥ख.२॥ पाछा नहीं जो प्रभु आप पधारें, पतियां लिखाई रे देवो प्रभु थांरी ॥ ख. ३ ॥ ऐसी रेवतियां जाय कहो प्रभु छाती भर आवे रे इन्ह अबलारी ॥ ख. ४ ॥ पशुवन के शिर दोष दई प्रभु, राजुल क्यों छोरी रे कांई मन धारी ॥ ख. ५ ॥ एकर सां फिर पाछा आवो, अरज करे थांरी रे दासी चरणां री ॥ ख. ६ ॥ चौथू कहे नथमाल तणो शिष्य, गांव कुचेरे रे प्रभु बलिहारी ॥ ख. ७ ॥

स्तवन नं. ६०

तर्ज—दलोली लालन की

मनाई ईश्वर की रे बाबा सुनजो थे कान लगाय ॥ टेर ॥

काम क्रोध से अलगा रहना, नहीं करनी मगरूर। सत्य धर्म का शरणा लेके, नहीं कहना कोई कूर ॥ मनाई १ ॥ नहीं सताना किसी जीव को, करना पर उपकार। नहीं करना बकवाद फजूली, बोलो सो पहीला विचार ॥ मनाई. २ ॥ नहीं लेना अदत्त कहे इमं, सुत्र रु वेद कुरान। इनसे जाय आबरू सारी, परतख लोनी पिछान ॥ मनाई. ३ ॥ पर नारी की ओर झुकाना, दिल कूं है बेठीक। उनकी तूं दरकार करे पिन, उसके जरा न पीक ॥ मनाई. ४ ॥ धन मोहब्बत तुमसे तोड़गो रे, तुम हरगिज तोड़ा नांय। आखिर काम न आसी तेरे, तूं जासी छिटकाय ॥ मनाई. ५ ॥ इनसे जरा बर खिलाफ करोगे तो, पासो सजा जरूर। आम सभा में जाहिर करता हूं, जो हुक्म दियो है हजूर ॥ मनाई. ६ ॥ चौथमल्ल नथमाल शिष्य कहै, सुनिये सब नर नार। हुक्म एह परमेश्वर का है सान्यां खेवो पार ॥ मनाई. ७ ॥

स्तवन नं. ६१

तर्ज—अह्लो म्हारी जोड़ रो उदियापुर०

दया दिल राखलो, शिवपुर मिल जासी रे ॥ टेर ॥

जैन सिद्धांत में देखलो रे, अवल दया अधिकार। वेद कुरान ने जोवतां, दया लाधेला श्रेयकार ॥दया. १॥ पांचसो पठ जीवां की काय छेरे. पांच है तेहनी जात। तेपठ भेद है मत करो पर प्राणी की घात ॥ दया. २ ॥ अंगुल एक प्रमान को कांटो, पैर में जो लग जाय। अर र र हाय सिसका करो, जद डग भर चलियो न जाय ॥ दया. ३ ॥ आ हालत होवे आपरी प्यारे, करिये जरा विचार। कैसी होवे वेदना जहां पे, मारो थे तलवार ॥ दया. ४ ॥ किंचित सुख के कारण प्यारे, बांधो क्यों पाप री पोट। जम राजा रे जावते रही, चवड़े खास्यो चोट ॥ दया. ५ ॥ जल थल अग्नि आकाश है रे, सब जग विष्णु समान। विष्णु नाम है जीव का ताते जैनी भी करते प्रमान ॥ दया. ६ ॥ क्या जैनी क्या शैव है रे, क्या वैष्णव क्या और। हाय सतावे जीव ने वे, है ईश्वर का चोर ॥ दया. ७ ॥ स्वामी श्री नथमल नो शिष्य' चौथू दियो उपदेश। मूण्डवे मध्य बाजार में दया राखो दिल हमेश ॥ दया. ८ ॥

स्तवन नं. ६२

तर्ज—रूड़ो वधुवो

प्यारे नही करवो रे २, कोई नारी को विश्वास ॥ टेर ॥

रहना सहु हुंसियारी करके, वनिता जाल फैलावे । आडी टेडी आंखन से वा, बढा २ ने ढावे ॥प्यारे. १॥
कामनगारी बड़ी धूतारी, मनमोहन मतवारी । लाख टकारी इज्जत विगारी, देखो रावन वारी ॥ प्यारे. २ ॥
लागो तीर कलेजे खटके, निकले नहीं निकार्यो । रोम २ में रम जावे मानूं, कोई जादु कर डार्यो ॥ प्यारे. ३ ॥
सुपना केरी सुन्दर सेठ ने, कूवा में पधरायो । दूध छाछ में भेल कर्यो जद, घर घर में भटकायो ॥ प्यारे. ४ ॥
नृप परदेशी ने विष दीनो, फिर फांसी दे डारी । करो खातरी फरक हुवे तो, जो नहीं माने म्हारी ॥प्यारे. ५॥
जुठल धर्म ध्यान ने ध्यातां, आधी रात मझारी । आई लाय लगाई देखो, रचनाए वनितारी ॥ प्यारे. ६ ॥
ऐसी जान करे नहीं उत्तम, नारी को विसवासो । चोथमल्ल नथ मुनि को चेलो, सादड़ी शहर चौमासो ॥ प्यारे. ७ ॥

स्तवन नं. ६३

तर्ज—परस्तान से उतरी परी

बातों मांय ऊमर गमाय देस्यो कांई,

देव गुरु धर्म को मनाय लेस्यो कांई ॥टेर॥

हाटां मांही वात ओ हवेली मांही वातां, वातां मांही दिवस गमाय दीवी रातां । म्हारी भी सिखामण एक मान लेस्यो कांइ ॥ वातां में. १ ॥ वातों में ही जिन्दगानी धूरधानी करदी, तिरवारी तरकीब सारी खूंटी ऊपर धरदी तावे जिन्दगी आरीत चलाय देस्यो कांइ ॥ वातो. २ ॥ साधुजी पे आवे तो बनावे वात वाई, आज तो न हुइ म्हारे पैसां की कमाइ । स्वामी कमाइ को जन्त्र लिखाय देस्यो कांइ, ॥वातों में,३ ॥ मक्की मूंग मोठ जव वाजरी रु चीना, रुई ने कपास मन्दो हुवो पार विना । म्हारे सो सो मण पड़ियो विकाय देस्यो कांई ॥ वातों में. ४ ॥ धर्म के री वात हांरे दाय नहीं आवे, केई छेड़ देवे तो वे ऊठ परा जावे । थे नरकां विच डेरा टेट जाय देस्यो कांई ॥ वातों में. ५ ॥ ऐसो उपदेश सुन भविमन भावे स्वामी नथमाल शिष्य " चौथमल्ल " गावे । वातों छोड़ चित्त ज्ञान में लगाय देस्यो कांई ॥ वातों में. ६ ॥

स्तवन नं. ६४

तर्ज—कव्वाली

श्री महावीर पुत्रों में वीरता हो तो ऐसी हो ॥ टेर ॥

होवे जहां धर्म की निन्दा, और गुरुराज की

गरहा। वहां वनराज वन जाना, वीरता हो तो ऐसी हो ॥ १ ॥ करे आक्षेप कोई झूठा, खड़े मैदान के अन्दर। होजाओ बेस करने को, वीरता हो तो ऐसी हो ॥ २ ॥ हजारों आपत्ति आवे, उन्हीं का सामना करलो। हटो ना कदम भर हरगिज़, वीरता हो तो ऐसी हो ॥ ३ ॥ करे कुरबान अपनी जान, धर्म निज जैन के ऊपर। मिटादे जन्म मरणों को वीरता हो तो ऐसी हो ॥ ४ ॥ स्वामी नथमलजी के जैसे, खजाना ज्ञान का भरले। "चौथमल्ल" सत्य कहता है, वीरता हो तो ऐसी हो ॥ ५ ॥

स्तवन नं. ६५

तर्ज—मेरे मोला बुलालो

मेरे मन को मनोरथ पूर प्रभो !
म्हाने चरणों से राखो ना दूर प्रभो ! ॥ टेर ॥

दास की अरदास ऊपर खास मरजी कीजिए, नास कर भव पास को मोय बास अविचल दीजिए। मेरे कर्म करो चकचूर प्रभो ॥ मेरे. १ ॥ कौन पे जाकर कहूं मन की विगर तेरे प्रभो ! निगाह कर तू देख दूजा अगर मेरे है प्रभो ! नहीं जान इसी में कूर प्रभो ! ॥ मेरे. २ ॥ तात तूं ही मात तूं ही भ्रात तूं ही है प्रभो ! दीन दायक दास के शिर नाथ तूं ही है प्रभो ! म्हाने अब तो बुलालो

हजूर प्रभो ! ॥ मेरे. ३ ॥ जिगर मेरा जा लगा तेरे ही कदमों में प्रभो ! हरगिज न मेरा जी लगे जग जाल धन्दा में प्रभो ! । म्हाने दो सुख अत्र भरपूर प्रभो ! ॥ मेरे. ४ ॥ चौथमल्ल नथमाल मुनि नो खड़ो तेरे चरण में, सदा आनन्द सुख मंगल होवे तोरी शरण में । मेरी वन्दन ऊगन्ते सूर प्रभो ! ॥ मेरे. ५ ॥

स्तवन नं. ६६

तर्ज—कव्वाली

आज हम याद करते हैं उन्हीं महावीर जैनों को ।
आज हम शिर झुकाते हैं, उन्हीं महावीर जैनों को ॥टेर॥

गमाते थे सदा जीवन धर्म के बीच में अपना । सदा हम गुण ही गाते हैं ॥ उन्हीं. १ ॥ खड़े थे रात दिन बहादुर, धर्म की बाहर में हरदम । दास बन कर मनाते हैं ॥ उन्हीं. २ ॥ हुवे थे धर्मसिंह जैनी, अहमदाबाद के अन्दर । पीर आशिर नमाते हैं ॥ उन्हीं. ३ ॥ पूज्य श्री धर्मदास कैसा, दिपाया धर्म दुनियां में । सभा में हम सुनाते हैं ॥ उन्हीं. ४ ॥ पूज्य जयमल्लजी जिन्होंने, जैन को खूब फैलाया । सदा हम ध्येय बनाते हैं ॥उन्हीं. ५॥ गुरु नथमलजी स्वामी, हरिपुर नाथ हरिसिंह को । दिया

उपदेश गाते हैं ॥ उन्हीं. ६ ॥ सदर बाजार के अन्दर गांव यह खास महा मंदिर, चौथमल्ल तो बताते हैं ॥ ७ ॥

स्तवन नं. ६७

तर्ज—ख्याल की

थे सुणो श्रावकजी, निद्रा मत लेवो भर्या व्याख्यान में ।टेर।

आश्रव कर्म बन्धन को कारण, वीर प्रभु फरमाई ।
वीर प्रभु इन चिरताली ने, मुखड़े नहीं लगाई जी ॥ १ ॥

मुनिराज सुनो थे, वर्जी नहीं माने निद्रा पापणी ॥टेर॥

करूं किसो उपचार गुरुजी ! बिना बुलाई आवे । ध्यान करूं तो ध्यान चुकावे, सुनता सुरत भुलावेजी ॥ मुनि. २ ॥ सामायिक या चीज अमोलक, जिणमें दोष लगावे । जभ्क के इधर उधर पड़ जावे, निकमा लोक हसावेजी ॥ थे. ३ ॥ लाख कहूं पिन एक न माने, जबरो जोर जतावे ।। ज्यूं ज्यूं बरजूं त्यूं त्यूं पापण, अधिकी मोय सतावेजी ॥ मुनि. ४ ॥ घर को काम छोड थे आया, सुनवा जिनवर वैन । साव सामने बैस हमारे, क्यूं मीचो थे नैनजी ॥ थे. ५ ॥ प्रवर दिगार परमेश्वर के रे, आ कांई मन में आइ । आप बहिश्त में जाय विराज्या, दुनियां में नींद फैलाई जी ॥ थे. ६ ॥ गुरु आज्ञा ले साल इकोत्तरे, शहर सादड़ी

आया । नाथ शिष्य "चौथू" चौमासे में, आनन्द रंग वर्षायाजी ॥ थे. ७ ॥

स्तवन नं. ६८

तर्ज—पूर्ववत्

मत बोलो बायों ! बरजीं २ ने काया में हुवा ॥ टेर ॥

बरज्योड़ी नहीं रेवो थांरी, आदिज आदत खोटी । सुणो न सुणवा दो दूजां ने, मांडी हतायो म्होटी रे ॥ मत १ ॥ ज्यूं २ बरजां त्यूं २ बायां वातां घणी घणाओ । बिना पइसे बातां इतरी, कठूं उधारी लावो रे ॥ मत. २ ॥ मुख पर मुख पति बांधता सरे थे सभा मांय शर्मावो भरी सभा में वातां करतां, लाज जरा नहीं लावोजी ॥ मत. ३ ॥ ऊगाड़े मुख वातां मारो, आ कांइ करी समाइ । त्याग करी ने भांग दिया क्यों ? आ कांइ मन में आइजी ॥ मत. ४ ॥ गीत गालियों गावण में थे, काढ़ो मनकी हूकी । मुह बांधण में वाइ अनोखी, लाज लावस्र ने टूकीजी ॥मत. ५॥ इकोतार श्रावण सुदी आठम, समचे बात सुणाइ । 'चौथमल्ल' नथ मुनि को चेलो, भरी समा में गाइजी ॥ मत. ६ ॥

स्तवन नं. ६९

तर्ज—पूर्ववत्

धर्म ध्यान करो नी आया पजूषण भरिया भाद्रवे ॥ टेर ॥

पर्व पर्यूषण आविया सरे, खूब करो धर्म ध्यान। आठ दिवस लग शीलज पालो, देवो सुपात्र ने दानजी ॥ धर्म. १ ॥ लीलोती नहीं खानी प्यारे। निशि भोजन परिहार। रगड़ो झगड़ो न करनो किसी से, रहना शुद्ध आचारजी ॥ धर्म. २ बारह महिनां मांयने सरे, जो हुई किनसे रार। क्षमा करीने तास खमावो, ज्यूं उतरो भव पारजी ॥ धर्म. ३ ॥ श्रावक नी करणी जो प्यारे, करनी करो कबूल। निन्दा विकथा लारे नाखो, पनरे धोबा धूलजी ॥ धर्म. ४ ॥ सीरो पुड़ियां और रावड़ियों, धाया पांच पकवान। लपटां सू जो नीचे उतरिया तो परमेश्वर की आन रे ॥ धर्म. ५ ॥ स्टेशन पर यह रेल खड़ी है, टुगर २ क्या जोवो। लेना टिकट हुवे सो लीजे, भरी नींद क्या सोवो रे ॥ धर्म. ६ । इकोत्तर भादु वदी बारस. शहर सादड़ी आया। स्वामी श्री नथमाल मुनि को, शिष्य चौथू सुख पाया रे ॥ धर्म. ७ ॥

एकलविहारी मुनियों को शिक्षा

स्तवन नं. ७०

तर्ज—आखिर नार पराई है

जो एकलमल अनगारी है. उनसे अर्ज हमारी है ॥टेर॥

आप एकला फिरो मतीना, कल्प नहीं है जैन जतीना।

म्हारी सीख थारे गुणकारी है ॥ जो. १ ॥ लोक कहेला एकल खोरो, वचन एह लागेला दोरो । कोइ कहसी ए अहंकारी है ॥ जो. २ ॥ एकल मुनि कहे क्रोध न करस्यो, रख खामोस वेग शिव वरस्यो । तो संतांरी कांई ख्वारी है ॥ जो. ३ ॥ तिरनो है आज्ञा के मांही आज्ञा बाहिर तिरनो नांही किरिया, ज्ञान विनारी है ॥जो ४ ॥ सुणी हुसी बातां ए सारी, बाहुबली कैसा था तपधारी । कछु न लागी कारी है ॥ जो. ५ ॥ जमाली की करणी देखो, केई मुनि शिव जावे पेखो । आखिर मौत विगारी है ॥ जो. ६ ॥ चौथमल्ल की अरज मंजूरी, करलो सारे सन्त हजूरी । स्वामी नथमाल उपगारी है ॥ जो. ७ ॥

स्तवन नं. ७१

तर्ज—ख्याल की

म्हांसू मत बोलो आछो रहनो है जग में एकलो ॥टेर॥

अहिपुर मांही सन्त एकला, मिलिया था इक म्हांने सहजे में पूछियो सन्तां ने, किया अलग कुण थाने हो ॥ म्हांसू. १ ॥ मनकी चाही मौज उडावां, रहवां अपने दावे । नहीं किसी का कहना सुनना, लावां चीज जो चावे हो ॥ म्हांसू. २ ॥ मौज करो मन चाही थे तो,

भेष लियो क्यूं भोला । मोडा होकर मोजां करतां, करसी लोक कितालांजी ॥ ३ ॥

मुनिराज जैन का आछा नहीं लागो फिरता एकला ॥टेर॥

जीव एकलो सुखी जगत में, नमीराजजी केगा । जिनसे मैं तो फिरां एकला, जास्यां शिवपुर वेगा हो ॥ म्हांरा. ४ ॥ देखो कैसो जवाब दियो है, एकलमल अनगारी । नमीरायजी की होड करे वो, हास्यास्पद बलिहारी हो ॥ मुनि. ५ ॥ काम क्रोध मद लोभ विनाश जीव एकला सुखिया । साथ सन्त बिन सन्त एकला, देख्या केई दुखिया हो ॥ मुनि. ६ ॥ फेर याद कर संत बोलिया, कयो एकलो रेणो । पंच महाव्रत शुद्ध पालणा वीर आज्ञा में वेणो हो ॥ म्हांरा. ७ ॥ नाम कयो जद सूत्र को स कांई, ठवण अंग बड़भागी । सुन कर सोच हुवो दिल मारे, जैन देशा अब जागी हो ॥ मुनि. ८ ॥ ठवण अंग नहीं ठाणांग है, दोय पाठ है तामे । गुणी और अवगुण को धारी किसा बोल है थांमें हो ॥मुनि.९॥ चुपका होय मुनि तब चाल्या, मैं आयो निज ठौर । "चौथमल्ल" नथमाल तणो शिष्य, झूठे कीनी जौर हो ॥ मुनि. १० ॥ उन्नीसे गुनीयासिये चैत सुद, चोथ शनिवार । एकल वचन प्रहारिका सरे, एकादशी उदार हो ॥ मुनि. ११ ॥

स्तवन नं. ७२

तर्ज—मांड री

विश्वसेन सुत अचिरानन्दन, सोवन वर्ण शरीर हो प्रभुजी सोवन ॥ हथनापुर में जन्म प्रभु को, खट कायों के पीर हो प्रभु खट० ॥

मृग लंछन जिनराज के, शांतिकरण प्रभु नाम ।
भवजल से तिर शिवपुर लह्यो, सिद्ध किया सब काम ॥
नाम प्रभु को जय कारी । श्री शांति जिनन्दजी इच्छा तो पूरो म्हारी साहिवा ॥ टेर ॥

तारण तिरण है विरुध तिहारो, मोसम अधम उद्धारो हो ॥ प्र. मो. ॥ जिनकी भवथिती पाकी, उनको तार्या नहीं जश थांरो हो ॥ प्र. नहीं. ॥

तारक जो तूं है प्रभो, क्यों नहीं तारे मोय ।
म्हारे तो थांरो आसरो स कांई, दूजो न मानू कोय ॥
जोय शुभ नजर निहारी ॥ श्री. २ ॥ जन्म लियो शांति करी तुम मृगी रोग निवार हो ॥ प्र. म. ३ ॥ शांति करो अघ दूर हरो प्रभु म्हारी अरज अवधार हो ॥प्र.अ.

उन्नीसे छियन्तरे, महा मन्दिर के मांय ।
नाथ शिष्य चौथू कहे स कांई शांति सदा सुखदाय ।
पाय प्रणमूं सुखकारी ॥ श्री. ३ ॥

स्तवन नं. ७३

तर्ज—लावणी

महावीर के पुत्र बने फिर कायरता का काम किसा।
होजाओ हुंशियार सभी अब धर्मसिंह मुनिराज जिसा ॥टेर

दया धर्म दिपावो प्यारों! जो हो असली जैन जती। क्षमा खड्ग खड़े होजावो, कमर कसो अब डरो मती। दो उपदेश निशंक दया का, इनसे भवजल तरना है। महावीर का जो फरमाना जाहिर करो, क्या डरना है जो मरणांत कष्ट हुवे तो क्या भय आखिर मरना है। असली धर्म दिपा कर प्यारे, अमर नाम अब करना है। आपस की या फूट मिटा कर प्रेम करो मज़बूत इसा आजाओ मैदान बीच में, मत घबराओ एक रती। ज़हां तहां अपनी विजय हुइ है अपने पख तिहू लोकपति। नहीं किरियावर अपना इसमें अपना हक्क बजा देना। आम सड़क पर सदर बाजारो असली धर्म बता देना। हेमाचार्य लवजी ऋषि, धर्मपास हुवे 'जयमल्लजी' जिसा कठिन परिषह सहन किया मुनि धर्म दिपायो चारों दिशा माधव मुनि जयपुर के मांही, धर्मी किया प्रधान जिसा ॥ महा. २ ॥ कहदो! मैं नहीं निन्दा करता, हुक्म सुनाऊं जिनवर का। कहो किसी का मैं डर राखु मेरा

फर्ज उमर भर का ॥ स्याद्वाद शुद्ध धर्म मिला फिर कसर कांइ पुण्यवानी में । सुस्ती मत रक्खो मेरे सज्जन ! हुवो सिरे अगवानी में । इधर उधर क्या निगाह फैलावे जैन रसातल गिरता में । नाथ शिष्य चौथू सब संघ से, नम्र निवेदन करता है । गांव कुचेरे भरी परपदा, जोड़ सुनायो स्तवन निशा ॥ महा. ३ ॥

स्तवन नं. ७४

तर्ज—पूर्ववत्

श्रावक धर्म करो मेरे सज्जन, जन्म मरन का मिटे कलेश । गुनवन्तों का गुन ही लेना, उत्तम का आचार हमेश ॥ टेर ॥

श्रावकपन में पहिले समकित, ओलखलो भिन्न २ करके मोह कर्म की हैं सात प्रकृति जिनके तो हैं दो फिरके ॥ उपशम चायिक भेद पिछानो, वो नर नहीं जावे नरके । जो पहीला बंध हुआ सो पीछे, आगा पाछा नहीं सरके उपशम में ले जल की औपम, निर्मल चायिक कही जिनेश ॥ श्रावक. १ ॥ समकित पन का निर्णय करके फिर श्रावकपन लेवो धार । तीजे भव या पनरे भव में निश्चय करलो खेवो पार ॥ पांच अनुव्रत सात शिक्षा इम द्वादश व्रत कथा जगदाधार । गुरुमुख से ही निर्णय

करके, निन्नाणू टालो अतिचार । नर तिरि देव डिगावे तदपि "अरनक" जिम न डिगे लव लेश ॥ श्रावक. २ ॥ ऐसी दृढ श्रद्धा कर पीछे करे त्याग तप जे पच्चक्खान । ग्रन्थी भेद हुआ फिर करनी कियां हुवे निश्चय निर्वान ॥ उद्र विकारी मदन मंजरी गुटिका लेवे विन अनुपान । कहोनी इच्छा निरुज होने की वो कैसे होवे बलवान ॥ सम्यक्त्व बीज श्रावकपन साधन, तप किरिया मुक्ति की एस ॥ श्रा. ३ ॥ लौंकाशाह कैसा था लायक कैसा धर्म दिपाया था । तन मन धन सब किया समर्पण, लाखों जन समझाया था ॥ दलपतराय दया धर्म रागी सिमंधर गुन गाया था । श्रुत उपयोग देखन के तांई इन्द्र आप चल आया था ॥ बम्भन भेष किया फिर पूछा आयु अपना आदि सुरेश ॥ श्रा. ४ ॥ सांच झूठ की मुझे न मालुम मगर असम्भव है नांही । जात श्रावगी शम्भुमलजी, हुआ कुचेरे के मांही । श्रावकपन उन्ह खूब दिपायो, करणी कीनी मन चाही । तत्व केवली गम्य सुनीवा देखी जैसी मैं गाई । चौथू कहे गुरु नथमालजी को निकट भवि को ओ उपदेश ॥ श्रा. ५ ॥

स्तवन नं. ७५

तर्ज—आसावरी

जाऊं मैं तो वां पुरुषांरी वारी, त्रिकर्ण शुद्ध ब्रह्मचारी ।टेर।
सुर नर पशु पंछी इन आगे, तीनों देव गये हारी।
त्रिकर्ण शुद्ध जे नर पाले शील वरत सुखकारी ॥जाऊं. १॥
मेरु गिरी को दण्ड बना कर छोनीको छत्राकारी । करन
हार बहुतेरे हैं पिन, छोर सके नहीं प्यारी ॥ जाऊ.२ ॥
हरि हरावन हार हजारो, नर सुर लियां निहारी । मदन
को मारनहार मुलक में, नींठ मिले नर नारी ॥ जाऊ.३ ॥
आज गयो मैं त्याग करावन, डोसी उदय के जारी । बाई
का भाव विलोक हिया विच, मैं हर्ष्यो अनपारी ॥ जाऊ.
४ ॥ पति व्यथा में हर कोऊ पठमणि रोवे आंसू डारी ।
साज देवण में कोई नहीं समझे, जिम समझी यह नारी
॥ जाऊ. ५ ॥ दे उपदेश पति ने दीरायो, ब्रह्मव्रत उन
भारी । चौथमल्ल जावे बलिहारी, पल पल उस वनिता
री ॥ जाउं. ६ ॥ उगणीसे इकराणू वरसे, चारस काती
उजियारी । स्वामी श्री नथमाल मुनि शिष्य, कहत है
जोधाणे मझारी ॥ जाऊ. ७ ॥

स्तवन नं. ७६

तर्ज—परिस्थान से उतरी परी

स्वारथ विन कोई नहीं ऐसी जिनवानी, कूवा में डबकायो एक सेठ ने सेठानी । स्वारथ री सगाई दुनियां में रही रे, विन मतलब नारी कोई नहीं रे ॥ टेर ॥

कयोड़ो तो काम म्हारो एक ना करो, एड़ो धणी म्हारे भावे धेड़ मांही परो । देखो फेरां री परणयोड़ी नार कांई कही रे ॥ विन. २ ॥ कियोड़ी कमाई सारी म्हांकने धरो खाली पड़ी म्हारी पेटी रुपैया से भरो । केण सू कमाई धणी लाय दही रे ॥ विन. ३ ॥ देख रुपैया नारी राजी हुई है घणी, ऐसो पति फेर दीजो माता गौरजा धणी । चरण पखालूं थारा दूध दही रे ॥ विन. ४ ॥ ऐसी ज्ञान नर सज्जन नेह तोड़ डालो, जिको काम सिद्ध कर आत्मा कू तारो । नथमल शिष्य चौथू सांच कही रे ॥ विन. ५ ॥

स्तवन नं. ७७

तर्ज—मेरे मां बापने रे मुझको

मुक्ति ना मिले रे, सम्यग ज्ञान क्रिया विन भोला ॥टेर॥

काशी जाओ मथुरा जाओ चाहे जाओ गंगा, खाख लगाओ भगवा पहिनो, चाहे पहिनो अंगा ॥मुक्ति. १॥

चाहे धोला वस्त्र पहिनो, चाहे पहरो रंगा । चाहे कर लोह कड़ा पहिन लो, शिर पे रखलो कंगा ॥मुक्ति. २॥ चाहे एक लंगोटी लगालो, चाहे रहलो नंगा । सम्यग ज्ञान चरण विन चेतन, चित्त नहीं होवेगा चंगा ॥ मुक्ति ३ ॥ दोनों मिलकर गांव पहुंचगा, अंधा और अपंगा । ज्ञान अपंग है किरिया आंधी, शिवपुर शहर सुरंगा ॥ मुक्ति. ४ ॥ भाव ज्ञान अरु शुद्ध क्रिया को, नमिये नित्त उत्तमंगा । स्वामी नाथ ने चौथमल्ल का, सहज किया सुढंगा ॥ मुक्ति ५ ॥

शुद्ध जैन साधुओं के लक्षण

स्तवन नं. ७८

तर्ज—पन्नजी मून्डे बोल

पांच महाव्रत पाले मुनिवर, टाले दोपण सारा रे । सब जीवां ने साता कारी, सो गुरु म्हारा रे ॥ साधु जैन का २ मुखड़ा रे ऊपर मुखपति बांधे रे ॥ टेर ॥

सीयाला में सीयां मरे पिण, धूणी नहीं धुकावे रे । कारण अग्नि देवता ने नहीं सतावेरे ॥ साधु. २ ॥ उन्हाला में बीजणा से, वायरो नहीं खावे रे । वायु कायरा जीव वले माछर मर जावे रे ॥ साधु. ३ ॥ हेटे तो आकाश ऊपर, पवन ऊपरे पानी रे । पानी रे ऊपर है

पृथ्वी, सांची मानी रे ॥ साधु. ४ ॥ तुलछी के नहीं फेरा खावे, पत्तो पिण नहीं तोड़े रे। गऊ बन्धन में पड़ियो पछे, अन्न जल छोडे रे ॥ साधु. ५ ॥ रात पड़ियां अन्न-जल रो खेरो, मूण्डा में नहीं नाखेरे। सुई जितरो ही पिण धातु रात न राखे रे ॥ साधु. ६ ॥ लीलोती रे भेला साधु भूल कदी नहीं होवे रे। विषयां के वश होय नार के सांमां न जोवे रे ॥ साधु. ७ ॥ भांग धतुरा गांजा रे तो, नेडा ही नहीं जावे रे। तन्दुरा पर-मुख कोई बाजा, नहीं बजावे रे ॥ साधु. ८ ॥ पोहर रात गयां के पीछे, ध्यान वा शयन लगावे रे। पिण नहीं गाय बजाय के वे रात जगावे रे ॥ साधु. ९ ॥ पग उर-वाणे चाले किंचित, करडावन नहीं करता रे। पर उप-कार के कारणे दुनियां में फिरता रे ॥ साधु. १० ॥ हाथी, घोड़ा, रेल, मोटर की, नहीं करे असवारी रे। दूर २ देशावर देखे, पांय विहारी रे ॥ साधु. ११ ॥ बोली तो नहीं बोले ऐसी, खटके जैसी खारी रे। अमृत वोली बोल माणे मौंज मजारी रे ॥ साधु. १२ ॥ गृहस्थी के घर नोतियोडा, जीमण ने नहीं जावे रे। लूकी सूकी लायने थानक में खावे रे ॥ साधु. १३ ॥ होली चौमासो "नानणा" में, दोय ठाणे सु आया रे। नाथ शिष्य चौथु पंचाणवें, स्तवन बनाया रे ॥ साधु. १४ ॥

स्तवन नं. ७६

तर्ज—पन्नजी मून्डे बोल

पन्थ पनरी

चालो पन्थ में, उजड मति चालो वरज्यो ग्रन्थ में ॥टेर॥ परथम तो रास्ता रो प्यारे ! सघलो निर्णय करणो रे । आडो अवलो छोड पछे पाऊएडो भरणो रे ॥ चालो १ ॥ शुद्ध साधु जो जैन का सो रस्ते २ चाले रे । ऊजड़ रस्ते चालतां औरां ने पाले रे ॥ चालो. २ ॥ ऊजड २ चालतां तो, डांडा कांटो भागे रे । तीकोड़ा भाटा री भाई ठोकर लागे रे ॥ चालो. ३ ॥ पड़ जावे उजाड में तो, चौर सांसी मिल जावे रे । धन माया तो जाय वाजे जीव गमावे रे ॥ चालो. ४ ॥ ओ तो उजड़ पन्थ द्रव्य है सो भी वन भटकावे रे । कहू कांई तज भाव पन्थ ऊजड पड जावे रे ॥ चालो. ५ ॥ दान तो देवण रो पेलो, पन्थ वीर बतलायो रे । वो दश विध है दान सूत्र ठाणांगे गायो रे ॥ चालो. ६ ॥ उपादेय इक हेय दान इक शेष दान समझीजे रे । पात्र भलो जो होय उसी को दान प्रदीजे रे ॥ चालो. ७ ॥ दान के देवा में भाई पाप कहै सो पापी रे । नहीं सूत्र की साख बात या मन सूं थापी रे ॥ चालो. ८ ॥ दूजो पन्थ शील को दाख्यो पाले सो बडभागी रे । अंगदान सो गंगदान कहे निर्भागी

रे ॥ चालो. ६ ॥ तीजो पन्थ तपस्या को है, पिण विन ज्ञान न करणी रे । ज्ञान सहित तप कह्यो जिनेन्द्र, शिव स्वर्ग निसरणी रे ॥ चालो. १० ॥ सत तपस्या को करे अनादर, मुख सू करे मखोली रे । तो समझो विगड़ेल साध विटलांरी टोली रे ॥ चालो. ११ ॥ भाव पन्थ जिन चौथो भाख्यो, सत अरु असत उभेदेरे । असत छोड सत ग्रहण कियां, भव सन्तति छेदे रे ॥ चालो. १२ ॥ पन्थ चार यह साव पाधरां, रति एक नहीं वांका रे । इण विन जो कोई पन्थ बतावे, वे हैं मजाकोंरे ॥चालो. १३॥ इण मारग में चालेला वो, सीधो शिवपुर जासी रे । चौथू का नथमाल जनम अरु मरण मिटासी रे ॥ चालो १४ ॥ उन्नीसे छीन्नू की चैत सुद तीज ने स्तवन बनाया रे । मेला वाला बिरांठिया में बांच सुनाया रे ॥ चालो. १५ ॥

स्तवन नं. ८०

तर्ज—आखिर नार पराई है

जन्म कल्याण मनाओ आज, वीर नो मिल कर
जैन समाज ॥ टेर ॥

जन्म लियो जग अन्तर्यामी, क्षत्रिय कुण्ड नगर बहु नामी । करे सिद्धार्थ राजा राज ॥ जन्म. १ ॥ दीक्षा ले

प्रभु वन में आया, ग्वाल बाल प्रभु ने भोलाया। नींगे राखजो थे महाराज ॥ जन्म. २ ॥ चरवा वलद गया वन मांही, ग्वाल प्रभु पे मार मचाई। सहन करी त्रिभुवन शिर ताज ॥ जन्म. ३ ॥ पूर्व वैर उतारन चाया, कानों में खीला ठचकाया। तिण पर भी नहीं हुवे नाराज ॥ जन्म. ४ ॥ पगल्यां ऊपर रांधी खीर, सही पीर वाभी महावीर। संगम कष्ट ने समज्यो साज ॥ जन्म. ५ ॥ इन पर कष्ट अनेक सया है, कल्प सूत्र के मांय कह्या है। प्रभु पाया भव सिंधु पाज ॥ जन्म. ६ ॥ उगणीसे इकावन साल, गुरु हमारा श्री नथमाल। चौथमल्ल कहे गांव नीमाज ॥ जन्म. ७ ॥

(अथ स्वारथोपरि धर्मदत्तस्य व्याख्यानकं लिख्यते)

स्तवन नं. ८१

तर्ज—नेमजी की जान बनी भारी

जगत में स्वारथ है प्यारो, सुगुरु कहे मान वचन मांरो ।टेर।

शहर इक 'भूमण्डन' भारी. 'शत्रुजय' राजा सुखकारी, वसे जित 'वसुदत्त' व्यौपारी, 'धर्मदत्त' सुत है गुणधारी।

पुत्र गयो परदेश में, द्रव्य कमावन काज।

पाछो आतां पन्थ में सकांई, मिल्या एक मुनिराज ॥

आज तो धन्य दिवस म्हारो ॥ जगत में. १ ॥ अमीरस

मुनिवर की वानी, सुनी पिन सांची नहीं मानी। चालतां निज घर के कानी मिल्यो इक केहर भय दानी॥

धर धर लागो धूजवा, ओ खाजासी मोय।
दाय उपाय चले नहीं मेरो. डरते दीनो रोय॥

केहर कहे आयो काल थारो॥ जगत में. २॥ कुंवर कहें आंखों भर आंसू, करूं मैं कोल वचन शांसू अभी मैं पाछो आजासूं, मिली पितु अरु धण माता सूं॥

एकरस्यां घर जान दो, जोवे घर का वाट।
विना गयां मुझ घर का सघला, मरसी छाती फाट॥

पाप तुझ लागेला खारो॥ जगत में. ३॥ कोल कर निज घर को आवे, पिता सुत देखी सुख पावे। उदासी देखी बतलावे तनय! किम उर तव घबरावे॥

पिता हकीकत पाछली सुन बहु कीधो सोच।
एकाकी कुल दीपक म्हारे, मरियां हुवे आलोच॥

कहो क्यों भरियो होंकारो॥ जगत में. ४॥ कोमल तन फार खाय लेतो, मरियो सुत थांने कुण केतो। अवे इसो उपाय कोई हुवेतो, कहो सुत शीघ्र करूं मैं तो॥

कर जोड़ी सुन वीनवे, अछे एक उपचार।
कर किरपा पितु आप पधारो, मिट जावे जंजार॥

नामणो राखूलां थांरो॥ जगत. ५॥ पिता कहे सुनहु

पुत्र मेरी, अकल कित भाग चली तेरी। वचन कटु आक पत्र जहरी, बोल रह्यो पुत्र नहीं वैरी ॥

मत घबराओ तातजी, लेवो रुपैया लाख।

हाथ मांडियो राजी होकर, सुत गिण दीना नाख॥

जाऊ मन लेंऊ माता रो ॥जगत में. ६। तनय निज माता पे आयो, मुदित मन जोयो निज जायो। हाल सब हरि नो सुन पायो, अरे सुन! विपत संग लायो॥

म्हारे बदले मातजी क्यों नहीं जाओ आप।

सुन कर वचन माता बोले, मेले क्यूं नहीं बाप॥

बाप तो कर दियो नाकारो ॥ जगत में. ७ ॥ कन्थ ने निरख्यो कुंवरानी, कहे मृग नैनी मृदुवानी। उदासी आनन पे आनी, इसी कोई चिन्ता नहीं जानी।

विलख वदन कहे कुंवरजी, है तुझ लायक बात।

मम मूवां तव भल्लभास कांई, मैं मूवां नहीं नाथ॥

होसी तव सुभगे मुँह कारो ॥ जगत में. ८ ॥ नारी पिन नाकारो कीनो, तीनों पिन उत्तर देदीनो। कुंवर तब संयम ले लीनो, वैरागी सम दम में भीनो।

अनशन कर दिव लोक से करसी खेवो पार।

नाग मुनि को शिष्य चौथमल्ल, सोजत शहर मझार॥

लावनी गाई घर प्यारो ॥ जगत में. ९ ॥

॥ अथ तुम्बी का दृष्टान्त लिख्यते ॥

स्तवन नं. ८२

तर्ज—लावणी

श्रीकृष्ण से पांचों पाण्डव, कर जोड़ी ने अरज करे।
महाभारत का पाप कहो श्रीकृष्ण ! हमारो कैसे टरे ॥टेर॥

भूप युधिष्ठिर भीम रु अर्जुन नकुल अने सहदेव भला। नयनों से टप २ जर नांखत, श्रीकृष्ण से आय मिला। श्रीहरि कहे सुन भूप युधिष्ठिर ! क्यों पांचों दृग नीर भरे ॥ महा. १ ॥

॥ ढाल दूजी ॥

तर्ज—ख्याल की

कहो श्रीकृष्णजी ! किम कर छुटांला इतरा पाप से ॥टेर॥

भाई और भतीज भानजा, दादा, काका और मामा शालभद्र मैं मारिया, कर २ हृदय कठोर हो ॥कहो. १॥
ऐसा आप उपाय कहो कोई, पाप ऊतरे साफ। इतरो कियो अकारज सारो, म्हारो हुवे माफ हो ॥ कहो. २ ॥
कठिन कर्म काटन के तांई, है तीर्थ की स्नान। तिर गये जीव, तीरथ कर केई, बन गये खुद भगवान हो ॥ ३ ॥

कहे, श्रीकृष्णजी तीरथ करने से निर्मल आत्मा हो जासी तोरी ॥ टेर ॥

श्रीकृष्ण का वचन श्रवण कर, तीर्थाटन को त्यार।
हुवे युधिष्ठिर आदि पांचों, कहता ताम मुरार हो ॥कहो.४॥

॥ ढाल तीजी ॥

तर्ज—तू ही २ याद प्रभु आवे रे दरद में

लेजाओ हमारी आ खारी तुम्बरियां २ मत भूलना
राखो याद सुमरियां ॥ टेर ॥

जितनी वेर तुम न्हावो तीरथ में, न्हवालो इसे तुम उतनी ही विरियां ॥ले. १॥ आ मन-तीरथ इनको करना बीत गई मेरी इतनी उमरियां ॥ ले. २ ॥ पांचों पाण्डव अब तीरथ करन को, विहर हुवे कस काठी कमरियां ॥ले. ३॥ अड़सठ तीर्थ को कर फिर आन्या, भरी सभा में हरि पग-परियो ॥ ले. ४ ॥

तुम्बी भेंट करी तदा, हरि हरख्यों हिय मांही।
गिर जिह्वा पर धरत ही, मुरलीधर इम प्राही ॥१॥

॥ ढाल चौथी ॥

तर्ज—मोहनगारो रे

कहे गिरधारी रे, सुन राय युधिष्ठिर बात हमारी रे ॥टेर॥
तुम्बी का कड़वापन क्यों नहीं, गया हाल तक खारी रे।
सांच कहो संग लेय गया के, यहीं विसारी रे ॥कहे.
१ ॥ जितनी विरियां हम न्हाये थे, उतनी बार न्हाव

रे । कड़वापन किम जाय राय ! आ तुम्बी खारी रे ॥ कहे. २ ॥ तो कैसे कहो राय युधिष्ठिर ! शुद्ध आत्मा थांरी रे । हुई विचारो आप हिया में, कहन हमारी रे ॥ कहे. ३ ॥

आत्मा नदी संयम पुण्य तीर्थ
सत्पोदकं शील तटा दयोर्मिः ।
तत्राभिषेकं कुरु पाण्डु पुत्र !
न वारिणा शुद्धयति चान्तरात्मा ॥१॥

तर्ज—पूर्ववत्

इस सरिता में स्नान कियां शुद्ध आतम होय तिहारी रे । जल से तन का मेल मिटे नहीं, और विचारी रे ॥कहे.४॥ उगनीसे चौरासी पोह बदी, चवदश तिथी मझारी रे । महामंदिर में नाथ मुनि शिष्य, चौथू उचारी रे ॥कहे. ५॥

॥ इति ॥

॥ अथ भावनोपरि गौ-घातकस्य कथानकं लिख्यते ॥

स्तवन नं. ८३

तर्ज—नेमजी की जान बनी भारी

भावना भावो भवि प्राणी ॥टेर॥ जिन्हों से होवे निर्वाणी मिले सुख सम्पत सुखदानी कथा इक सुनिए हित आनी ॥

भाव शुद्धा शुद्ध दोय है, दूजो देहु विहाय।
देखो तन्दुल माछलोसरे, नरक सातमी जाय ॥
डेरावो देवे अभिमानी ॥ भावना. १ ॥ गुरु एक चेला
गुणधारी, उग्र नवकल्पी विहारी। आवे इक पुर में मुनि
चाली, पन्थ में वातां निहाली ॥

एक कसाई गाय पे, मार रयो तलवार।
शिष्य गुरु ने पूछियोस कांई, होसी प्रभो हवाल ॥
पालों आंपे होकर अगवानी ॥ भावना. २ ॥ ज्ञान से
जानी प्रभु भासे, प्रगट यों वातां प्रकाशे। जाणे कुण ओ
मरी किहां जासे, आपणी कहो सी गति थासे ॥

क्या इसकी क्या आपनी, जाने गत करतार।
इन पर कह कर गये मुनि तब, आये नगर मझार ॥
कसाई कर रयो मन मानी ॥ भावना. ३ ॥ कसाई तर-
वारी झरकी, गायकी छतियां तब धरकी। गाय के लगी
न शस्तर की, कटी है अंगुली निज कर की ॥

व्यापी सकल शरीर में, पीर महा विकराल।
मुझ तनसो सब जीव कोस में, दीना केई मार ॥
हाय मैं कीनी नादानी ॥ भावना. ४ ॥ जीव अणगिणती
का घाया, वछेरा मारिया गौ जाया। मिरगला सुसिया
मैं ढाया, इसा बहु अकृत कमाया ॥

कर२ अघ इण जीव ने, कर दियो कारो राख।
जब पाप ग्रह मिल करी सम्हांने नरकों देसी नाख ॥
बातां करी चवड़े सब छानी ॥ भावना. ५ ॥ इसी विध भावना भाई, निपट उर ऐसी नरमाई। बिना उपदेश उर आइ, इसीकी तो आहीज अधिकाई ॥

भाई निर्मल भावना, पायो केवल ज्ञान।
केवल महिमा कारणे स कांई, आये तब भगवान ॥
दुन्दुभि बाजी सुरबानी ॥ भावना. ६ ॥ दुन्दुभि सुन के सुख पाया, शिष्य तब निज गुरु पे आया। विनय कर पूछे शिर न्हाया, बजे कहां बाजा गुरु राया ॥

गौ-घाती वो आदमी, सारिया आतम काज।
केवल पायां खबर हुई जद, आया इन्द्र महाराज ॥
मिल्यो थो पूर्व दिशि कानी ॥ भावना. ७ ॥ चेलाजी सोचे मन मांही, केवली होगयो कसाई। कहो मुझ केवल क्यो नांही, अनित्य तब भावना भाई ॥

शिष्य हुवे तब केवली, गुरु पिण केवल ज्ञान।
अनुक्रमें लीनों भावथीस कांइ, वन गये खुद भगवान ॥
खपाई कोडी कर मानी ॥ भावना. ८ ॥ भावो शुद्ध भावना प्यारे, हुवे जिम करमों से न्यारे। भावना कही जिनवर वाहरे, भवी नर झट केवल धारे ॥

उन्नीसे चिहुत्तरे, गांव कुचेरे मझार ।
भावो शुद्ध मन भावनास कांई 'चौथमल्ल अनगार' ॥
नमो मुनि नथमलजी गुरु ज्ञानी ॥ भावना. ६ ॥

॥ इति ॥

स्तवन नं. ८४

तर्ज—पूर्वोक्त

बोलो श्री जैन धर्म की जै, पहीला कहो
जयजिनेन्द्र जै जै ॥ टेर ॥

अरिहर अरिहन्त गुनधारे, अष्टादश दोप से न्यारे ।
भला वे तिरे और तारे, इसा जिनदेव है म्हारे ॥
अगर तुझे इतबार है, तिरे सो तारनहार ।
तो छोर अनेरा देखने स कांइ क्यूं न भजे करतार ॥
वानी जिनराज की सुन लीजे ॥ बोलो. १ ॥ सुत्तागम
अत्थागम दूजो तदुभय आगम है तीजो । गुरुमुख निर्णय
कर लीजो, इन्हीं में शंका मत कीजो ।
साधु सूत्र छकाय में, करसी शंका कोय ।
जिनके समकित है नहींस कांई लीजो समकित जोय ।
अमीरस वाणी को पीजे ॥ बोलो. २ ॥ सुत्तागम गणधर

रचवावे, अत्थागम अरिहन्त फुरमावे । माली की मिसाल लगवावे, तदुभय दोनों कहिलावे ॥

नयतो उसमें सात है, धार निक्षेपा चार ।
धरो चार अनुयोग ने सरे, पीछे करो उचार ॥

सार जिनवानी सुन लीजे ॥ बोलो. ३ ॥ सुनो समवाय पांच प्यारे, चार फिर प्रमान है न्यारे । नियत व्यवहार धरन वारे, नमो जिनवानी तुम सारे ॥

स्याद्वाद पुनि ओलखो, उत्सर्ग ने अपवाद ।
मुख्य गौणता कहे इसी कू धारो तज परमाद ॥

याद उर बार २ कीजे ॥ बोलो ४ ॥ ऐसी जिनवानी नहीं दूजी, इसी कू इन्द्रादिक पूजी । इन्हीं की होड करे कोई, हुवे नहीं होसी नहीं होई ॥

श्रुत देवी वा शारदा, नमो नमो तिहूं काल ।
ऐसी जिनवानी का वक्ता, नमो गुरु 'नथमाल' ॥

चौथभज्ञ कहे शीव दीजे ॥ बोलो. ५ ॥

स्तवन नं. ८५

तर्ज—फागण की

चेतन चेतेनी पाणी में पतासा जैसे आयु छीजेरे ॥ टेर ॥

कोई जीव कूं दुःख नहीं देणो, ओ सतगुरु को कहणो

रे । उजड़ मारग छोड चेतन रस्ते वेगो रे ॥ चेतन. १ ॥ झूठ जरा मत बोले चेतन, जालसादी मत कीजे रे । झूठ आप को आप चेतन, छोड दीजे रे ॥ चेतन. २ ॥ पड़ी चीज बिन दियां चेतन ! भूल हाथ मत घाले रे । महा नीच ये काम कुल में लागे कालो रे ॥ चेतन. ३ ॥ पर नारी का त्याग करले, जो हुवे मरजी थारी रे । निजरां देखी नार चेतन ! है दुःखकारी रे ॥ चेतन. ४ ॥ परिग्रह को पचखान प्यारे ! सतगुरु पासे लेवो रे । परभव खरची साथे हाथे दान देवो रे ॥ चेतल. ५ ॥ ए काम तू करले चेतन ! अजर अमर पद पासी रे । तीन लोक को नाथ जिनी से तू होजासी रे ॥ चेतन. ६ ॥ उन्नीसे बहोत्तर सुद पंचम, जेठ मास खजवाने रे । 'चौथमल्ल' नथमाल मुनि नो शिष्य बखाने रे ॥ चेतन. ७ ॥

स्तवन नं. ८६

तर्ज—जोधाणा अजमेर बीच में आडी सड़कां डाली रे

चौरी मति कीजो या सुमति सखीकी शिक्षा सुन लीजो ।टेर।

चेतनजी थे म्हारा थांने सुमति सखी समझावे रे । छाने सेक चीज लेतां, स्यान जावेरे ॥ चौरी. १ ॥ और तो थे थांरे प्यारे, दाय पड़े ज्यूं कीजो रे । पिस कर्म बंध को काम चेतन छोड दीजो रे ॥ चौरी. २ ॥ लाख

टकां री इज्जत प्यारें, दमड़ी में बिक जावे रे। बेइमान यूं गाल ताने, दुनियां गावे रे ॥ चौरी. ३ ॥ हाथ कड़ी पग बेड़ी तोखों गधा की सवारी रे। नीला पग ने मुख केरी तो मुद्रा कारी रे ॥ चौरी. ४ ॥ चौवटा में फेरे थांने, पौलिस साथे चाले रे। माजना में धूड़ लोक चवड़े घाले रे ॥ चौरी. ५ ॥ तीन खण्ड को राजा रावन चोर लायो पर नारी रे। लिछमण हाथे मरण लयो गयो नरक मझारी रे ॥ चोरी. ६ ॥ लेणी ना छदाम छाने आ सुमति नी केणी रे। चोरी करतां कुल में चेतन ! लागे म्हेणी रे ॥ चोरी. ७ ॥ पर उपकारी सत गुरुजी का वचन हिया में धारो रे। चौथमल्ल नथमाल मुनि रो अनुचर चरणां रो रे ॥ चौरी. ८ ॥

स्तवन नं. ८७

तर्ज—आऊवो आसोप धणी मोतियें की माला रे

जतना सु तो जितनो कोई काम करे सोई सागे हो
तीन बातां में दोष सन्तां, चवड़े लागे हो ॥ १ ॥

सन्तां सुन लीजो वा वा सगला सुन लीजो, निरपक्षी पन्थ म्हारे दाय आवे रे, रीसां मत बलजो ॥ टेर ॥

पातरा ने पाणी जागा, निज़रां देख लोनी हो। सुनजो सन्तां मन सु चौरी छांनी कीनी हो ॥ सन्तां. २ ॥ जती

सम्वेगी साधु आये, पातरा में खावे हो । घरवासी रे बोलो कांई, काम आवे हो ॥ सन्तां. ३ ॥ आधा कर्मी दोष सन्तां ! चवड़े हेला पाड़े हो । मोल लियोड़ा लेवां आंपे, पंचम आरे हो ॥ सगला. ४ ॥ पहिली वार में जावे साधु वास २ में डोले हो । पातरा में पाणी केरी, डब डब बोले हो ॥ सगला. ५ ॥ श्रावकजी ने बोले साधु, धोवण ओछो आयो हो । गांव सारा में डूंडी पीटे भोलो भाग्यो हो । धोवण कर दीजो वा वा पाणी धर दीजो ॥ निरपक्षी. ६ ॥ दूजी वार में जावां आपां, पातरा भर लावां हो । नाहक आपां यथा ख्यातरीं, खोड़ खुडावो हो, दोषण लागेला ॥ नि. ७ ॥ साधुजी री जांची पूंजी साधु जागा सोवे हो । भाड़ा रीतो चार चीजां साधु न लेवो हो, असली जैन का ॥ नि. ८ ॥ स्थानक में तो दोष साधु "परदेशी" फुरमावे हो । हवेली में दोष वे तो क्यूं नहीं गावे हो, वांने पूछोनी ॥ निर. ६ ॥ आप में जो रेलो आवे, दीज्यो आगो टेली हो । हवेली में दोष लागे, *सगेला पेली हो ॥ सगला. १०॥ परना अवगुण काढ़ो सन्तां, घर का अवगुण ढांको हो । सांची बात जोगारम्भ को, मारग वांको हो ॥ सगला. ११ ॥ स्थानक

---

* उनरियां पेली हो ॥ पाठान्तरे—

वाला बोले प्यारे ! स्थानक है निर्दोषी हो। जानन वाला सब ही जाने, आ कद होसी हो ॥ सघला. १२ ॥ असल फकीरी को पेंडो न्यारो, जानन वालो जाने हो। असल फकीरी में जद जाणू निंदा नाखे हो ॥सघला.१३॥ नथमलजी महाराज स्वामी, निरपत्ती गुणधारी हो। "चौथमल्ल" कहे ऐसी मैं पिण मन में विचारी हो ॥ सघला. १४॥

स्तवन नं. ८८

तर्ज—नाथ कैसे गज को फन्द छुड़ायो

ऐसे मुनि कैसे धर्म दिपासी, सुनो तुम सारे
भारतवासी ॥ टेर ॥

जै जै तत्व जिनागम मांही, गणधर किया प्रकाशी। उन तत्वन की ए वडभागी, करे निरंकुश हासी ॥ऐसे.१॥ जिन वचनों का जान पना से, अलग सो कोशां जासी। [1] अर्जुन भारतमित्र मिले तो, मृत शमसान से आसी ॥ ऐसे. २ ॥ जीव भेद गुण ठाणा प्रमुख की; भेद श्रेणी प्रभु भासी। तिसकी मखोल उडावे मूरख ! सुबुद्धि जसु नासी ॥ ऐसे. ३ ॥ याते होत भ्रमन भव मांही, ताको धर्म दृढासी। जा बिच लेशन पावे समकित, उनको ध्यान

---

१ अखबार का नाम है।

लगासी ॥ ऐसे. ४ ॥ हे अर्हन् ! हे अर्हन् ! करिये, मोपे किरपा खासी । नाथ मुनि शिष्य 'चौथू' को मन, रहे नित समत्त सुविलासी ॥ ऐसे. ५ ॥

स्तवन नं. ८९

तर्ज—चलित

हे अर्हन् ! तव प्रतिपादित मग, भूला केई
मुनि भारतवासी ॥ टेर ॥

तन पर मुनिवन मन मुनि मग तज, देश कथा को करत प्रकाशी । हे. १ । श्रमण धर्म पुनि श्रमण उपासक धर्म दोय जिन वचन विलासी । जिनके तत्त्व पिछान जान कर पाले जो है जैन संन्यासी । है.२ । भाषा भेद विज्ञान भान तज दे उपदेश कृषि करवासी । के गायों का गोकुल भर कर ताहित रुपियन संत भेजासी । है. ३ । कतिपय मुनिजन हे अर्हन् ! तव कथित तत्त्वन की करत है हांसी । 'चौथू' कहे नथमाल मुनि शिष्य, ये मुनि शिव गति केम सिवासी ॥ हे. ४ ॥

स्तवन नं. ९०

तर्ज—कयामती

उपदेश प्रणाली, कतिपय सन्तों की बिगरी जैन में । टेर ।

जीव प्रान के घातक जो जो वचन महा बलवान। जैन मुनि को बोलन तांइ, वरज दिया भगवान रे।उप.१। परवाह नहीं करसां ऐसा पाप की, जिनधर्म दिपासां।।टेर।। अल्प पाप ने बहुत निर्जरा, वालो काम करोला। भगवती सूत्र पाठ अनुसारे चवड़े में तो चालों हो। उप. २। परवाह नहीं राखे पाप री स वे, कैसे धर्म दिपासी। जो विपरीत औषधि खासी, रोग कहो किम जासी हो। उप ३। धर्म हेत धन कमावण रो, नीति को नाकारो। कीचड से पग भर कर धोना, वर ताते करटारो हो। उप. ४। भगवती सूत्र में पाठ लिख्यो सो, सावल बैठ विचारो। साधु ने सब पाप करन को है बिलकुल नाकारो हो। उप. ५। मृग पृच्छा को पाठ बतावे, उत्सर्ग ने अपवाद। करे अर्थ विपरीत पाठ को, नहीं है असली थाद हो। उप. ६ ॥ गृहस्थी ने जो नहीं समझावो तो कहो समझे कैसे। नाथमुनि शिष्य चौथमल्ल तो, नहीं बोलेला ऐसे हो। उप. ७।

स्तवन नं. ६१

तर्ज—चालो जल्दी बहीली

मेरे प्यारे ऐसे मुनि कांई काम का जो तिरे न आप
तिरावे चऊ गति में गोता खावे ॥ मेरे ॥ टेर ॥

इरिया भाषा ऐषण समिति, पडिलेहण पहिचानो। पड़िठावणिया पंचमी समिति, नहीं पाले लेवानो ॥ मेरे. १ ॥ अपना नाम बधावन तांई धर्म मेल दे ऊंचो। जो कोई सत् शिक्षा देवे तो, बने क्रोध को कूंचो ॥मेरे. २॥ रसना के वश होकर गृद्धि, निकमो दोष लगावे। अभिमानी जिन सन्त सेवियो, नहीं लावे नहीं खावे॥मेरे. ३॥ बोलन चालन देखन में तो खूब भरी कपटाई। कपटाइ के कारण भाई, धार लिवी नकटाई ॥ मेरे. ४ ॥ भण्यो पढियो व्याख्यानी मैं हूं, होड करे कुम्ह म्हारी। घोर घमण्ड हिये घर घाल्यो, सुधरी बात बिगारी ॥मेरे. ५॥ सबसे ऊंचा बणवा सारु निज व्याख्यान लिखावे। चवदे तो नहीं आवे पोथ्यां छांने खूब छपावे ॥ मेरे. ६ ॥ शुद्ध समकित धारी है ब्रह्मचारी, तिनको सुर शिर नावें। "चौथमल्ल" "नथमाल" मुनि का, गुण देखी गुण गावे ॥ मेरे. ७ ॥

स्तवन नं. ६२

तर्ज—ख्याल की

सुनजो तुम सन्तों ! चूको मति रे अपनी चाल में ॥ टेर ॥

प्रवचन माता आठ है सरे, जिनसे धरिये प्रीत। दोष लगावे नहीं इसी में, याही साधु की रीतजी ॥सुन. १॥

इर्या समिति ओलखोस रे, चार भेद उर धार । दिन रा देखी चालणोस रे, रात्री पूंजे अणगार रे ॥ सुन. २ ॥ कठिन वचन नहीं कोमल केवे, निरवद्य वचन विचार । सावद्य सांच जरा नहीं बोले, झूठ तणो परिहार रे ॥ सुन. ३ ॥ आहार तणी समिति है तीजी, पिडए विशुद्धि नाम । दोष न लागे इनमें उनकू, हूं वन्दू शिर नाम रे ॥ सुन. ४ ॥ पडिलेहण विधि चौथी में चावी, उनका भेद पचवीश । याम भाग चौथा में करवी, भाखी श्री जगदीश रे ॥ सुन. ५ ॥ परिस्थापनिका पंचमीसरे, दस भेद कर मान । ज्ञान भणी जो परठे मूरख, तांको नहीं निर्वान रे ॥ सुन. ६ ॥ गुप्ति नाम गोपवे ताको, मन वच तृतिया तन्न । चार भेद तीनूं का चावा, धारक छे तसु धन्न रे ॥ सुन. ७ ॥ ए आठ प्रवचन मात आराधे, जघन्य ही माधु जान । ए अधिकारि है उत्तराभ्भयणे, भाख्यो छ भगवान रे ॥ सुन. ८ ॥ स्वामी श्री नथमाल मुनि कहे, नावे अभव्य ने दाय । 'चौथमल्ल' कहे धन्य मम गुरु मुझ, दीनो भेद वताय रे ॥सुन. ६॥

स्तवन नं. ६३

तर्ज—परिस्थान से उतरी परी

जैन मुनि से म्हारी अरजी है मानो न मानो थांरी मरजी है ।टेर।

पक्षपात छोड हियो साफ थे करो, एकान्त में बैठ हियो ज्ञान से भरो। जैसे भरियो थो जयमल्लजी है ॥ जैन. १ ॥ प्रथम है ज्ञान पछे दया कही अरे, सारा सूत्र वांचियों थी खबर परे। वीर कांई २ बातां वरजी है ॥ जैन. २ ॥ पछे वेस परिषदा में वाणि ललकारो, आपरो परावो प्यारो! करो निस्तारो, वो आनन्द आले दरजी है ॥ जैन. ३ ॥ स्वामी नथमाल शिष्य मेसिया में गावे, स्याद्वाद धर्म की वो उन्नति ने चावे। "चौथू" असल ज्ञान को गरजी है ॥ जैन. ४ ॥

स्तवन नं. ६४

तर्ज—एक तीर फेंक ताजा

इस आत्मा का अर्हन्! कैसे उद्धार होगा ॥ टेर ॥

शुद्ध धर्म को न रसियो. जग जाल बीच फसियो। जिन धर्म देख हंसियो ॥ कैसे. १ ॥ साधु का सांग धरके खाया में माल पर के। दूंगा कैसे भरके ॥ कैसे. २ ॥ क्रोधी अरु मैं कामी, हा हा बड़ो हरामी। नीचों में नीच नामी ॥ कैसे. ३ ॥ धन ते न नेह तोड़ियो। मन मान ते न मोड़ियो। छल आजलों न छोड़ियो ॥ कैसे. ४ ॥ शुद्ध आहार का न भोगी, वाजू मैं जैन जोगी। हा हा दशा क्या होगी ॥ कैसे. ५ ॥ इतका रहा न उतका, यह

रहत सोच नितका। मैं रहा न एक गत का ॥ कैसे. ६ ॥ गुरु का कहा न माना, कीना मैं पाप छाना। मुश्किल है बोध पाना ॥ कैसे. ७ ॥ गुरु "नाथ" ने पढ़ायो, पद 'चौथमाल' गायो। जिनराज ने सुनायो ॥ कैसे. ८ ॥

स्तवन नं. ६५

तर्ज—आसावरी

आतमा किम सुधरेला मोरी, जिन आगल
कहूं कर जोरी ॥ टेर ॥

कान निरन्तर गान चहत है, गजल दादरा होरी। नयनेन्द्रिय नित्य होय रही है, खेल तमाशा खोरी ॥ आ. १ ॥ अत्तर तेल फुलेल वासना नाक चहै नित नोरी। कबहु कलाकंद कबहु कचोरी चाहत जीभ चटोरी ॥ आ. २ ॥ वर अनुकूल स्फर्श की भूखी, वपु इन्द्री या भोरी। "चौथू" की आतम इम सुधरेली, जो नाथ मुनि ने भजोरी ॥ आ. ३ ॥

स्तवन नं. ६६

तर्ज—बन्धव बोल मानो हो

जिनन्द में जग किम तिरसूं हो, तिरसूं ने किम तारसूं
जो जिण २ से लड़सूं हो ॥ टेर ॥

साध पधारो सांग ले घर २ में फिरसूं हो। भवजल

तिरवारी भली, किरिया नहीं करसूं हो ॥ जिनन्द. १ ॥
क्रोधादिक नवि काटसूं, जव लग मैं जड़सूं हो । तब लग
इण त्रिलोक के, माथे किम चड़सूं हो ॥ जिनन्द. २ ॥
इंगलिस हिन्दी फारसी, भख २ उर भरसूं हो । जिन
आगम जचियो विना, हूं खोटो खरसूं हो ॥ जिनन्द. ३ ॥
विविध प्रकार व्याख्यान दें, वर शोभा वरसू हो । पिण
समकित पायां विना, कहो कैसे सुधरसू हों ॥ जिनन्द. ४ ॥
परनिन्दा पर ईर्षा, नहीं छोडी जिगरसूं हो । तो किम
मरणो मेठ सूं, अघ से जो न डरसूं हो ॥ जिनन्द. ५ ॥
परगुण निज अवगुण भणी, नहीं देखूं निजरसूं हो । जोलों
आपो नहीं मरे, तोलों मैं मरसू हो ॥ जिनन्द. ६ ॥
नाणादि विनय करी, भव सन्तति हरसू हो । "चौथू"
शिष्य नथमाल नो; कही जिनवरसूं हो ॥ जिनन्द. ७ ॥

स्तवन नं. ९७

तर्ज—चौक की

ज्ञान दर्शन चारित्र तपस्या शिवमग चऊ जिनवानी है ।
निज गुण चेतन का अछा ए कर्म हटावन कानी है ॥टेर॥

जिन कर जान्यो जाय जगत में ज्ञान सो ही प्रभु
गाते हैं, पंच भेद प्ररूप्या, उन्हीं का भिन्न २ भेद बत-
लाते हैं । मति श्रुत्या ऽवधि मनपर्यव अरु केवल ज्ञान

कहलाते हैं । अनुयोग द्वार में श्री जिनवर वचन सुनाते हैं ॥ १ ॥

तर्ज—शेर

पांचू तो इन्द्री मन प्रयोगे उपजे तो ज्ञान जी, शंका तो नांही सत्य सेना ज्ञान तो मतिमान जी, श्रुति तो होवे श्रवन करतां जेहतो श्रुति जानजी ॥ जाति तो स्मरन ज्ञान यामें ऊपजे मनम्यानजी ॥ २ ॥

तर्ज—लावणी

प्यारे ! भाजन है मतिज्ञान श्रुति वस्तु जानो है सहचारी यह दोय, श्रुति अधिकानो ॥ हिव चार गति में मर्यादा से मानो । सो ज्ञान अवधि से रूपी द्रव्य न छानो ॥३॥

तर्ज—दौड़

ढाई द्वीप के प्रमान, संज्ञी पंचेन्द्री के मान, जाने मन अहिनाण[1], ऐसो ज्ञान सही होवे सत्तम गुण स्थान[2], धर्म जैन हुके म्यान, दोय वेदहु में जान, स्त्री वेद में नहीं २ सन्ना सन्नी सब थोक, रुप्या ऽरूपी अवलोक, जिन जाने लोक ऽलोक अन्तज्ञान[3] लही २ ॥ सर्व ज्ञानी

---

१ मनपर्यवज्ञान २ अप्रमत्त ३ केवल ज्ञान

है जिनेश[4], चार धारक गणेश[5], कलि कालहु में देश[6],
जिन आप कही २ ॥

तर्ज—मिलत

एकाऽपरवाई प्रतच्छ[7] तीन[8] ताते छद्मसे ज्ञ[9] अगवानी है
निज गुन चेतन का अच्छा यह कर्म हटावन कानी है ॥

॥ इति प्रथम चौक ॥

॥ अथ द्वितीय दर्शन चौक ॥

तर्ज—मिलत

करो पिछान प्यारे दर्शन[10] की, जगत जाल सब झूठा
है, जिन कथिता बानी जिन्हीने दिल डुलावो मत पूठा
है ॥ नियत[11] व्यवहार उभय शुद्ध भेदे दो "डाला" तसु
छूटा है, निश्चय की बातां उच्च आपां पे श्री जिनवर
जी तूठा है ॥ १ ॥

तर्ज—शेर

देखातो दी सब बातीं व्यवहारनी भगवन्तजी, भेद

४ जिनानाइन, ५ गणनाइश, ६ हिन्द स्थानि द्वीप,
७ केवल ज्ञान, ८ अवधि मनपर्यव और केवल, ९ ज्ञान
१० समकितपणा, ११ निश्चय,

१२
तो सिडसठ जांका पाले को पुण्यवन्तजी ॥ पहिला तो भाषी "सरदणा" चउलिंग त्रय ओलखन्तजी, विनय तो दस भेद भाख्यो, शुद्धता तीन कहेन्तजी ॥ २ ॥

तर्ज--लावणी

समकित का लच्छन पंच "दूषत" पिन जानो ।
इम "भूषण" पंचरू आठ 'प्रभाविक' आनो ॥
खट् जान "आगार" रु "जपना" ऋतु[६] बखानो ।
रस[६] 'भावना भेद' विचार; 'स्थान' खट् टानो ॥१॥

तर्ज--दौड़

इतो करियो है उच्चार, बाकी गुरुमुख धार सांची समकित सार, जासे कर्म कटे २ ऐसो दर्शन बयान, प्यारे कीजिये
१३
पिछान, सांचो शिव को सोपान, होवे ज्ञान भटे २ ॥
१ २
चर्ण केरो भृष्ट थाय, जोतो मुक्ति में जाय, दर्शन भ्रष्टहू को नांय, सब जान रटे २ । रसवती मां है लौन, परे नहीं जद पौन, समकित विन ज्ञान शुद्ध होत नटे २ ॥

---

१२ यह सड़सठ बोल व्यवहार समकितके थोकड़ा से जान लेना चाहिये, उनके नाम पुस्तक के विस्तार भय से न लिखे गये हैं, १३ पगतिया

॥ अथ तृतीय चारित्र चौक लिख्यते ॥

तर्ज--मिलित

तिरिया अनन्ता पुनरपि तिरसी, शुद्ध समकित जिन जानी है ॥ निज गुण. ॥

कर्म उन्हीं का चारा है प्यारे ! चरन कर्म को चरता है, जिन केवल ज्ञानी उन्हीं का भेद पांच शुद्ध करता है सकल जीव सत्व भूत[३] प्राणी पे तुल्य भाव जो धरता है, सो कही समाधी, वो[४] अव्वल गुरुजी, शिष्य भनी उचरता है ॥

तर्ज—और

दिरा तो दिन सात में गुरु, नहीं तो चउखट मासजी, छेदे[५] तो पेली चरन कूं देदे तो द्वितीया[६] वासजी, केदे तो मुख[७] से वार्ता अब जन्म लगे अघनाशजी[८], कलि तो काले

---

१ व्यवहार चारित्र को निश्चय के मुक्ति में जाते हैं इति रहस्य २ समकित साथै चलती है नन्यथेति गाथा यथा दंसण भट्ठो २ दंसण भट्ठस्स नत्थि निव्वाणं, सिज्झंति चरण रहिया. दंसण रहिया न सिज्झन्ति इति न्यायेन ३ प्राण विकलेन्द्री भूत वनस्पति. जीव पंचेन्द्री जान. चार स्थावर सत्व कया भगवंत इन व्याख्यान ४ दीक्षा समय चेला ने गुरुजी कहते हैं

दोय रहेगी, बाकी जम्बू पासजी[9] ॥

तर्ज—लावणी

परि सकल प्रकारे विशुद्ध करे कर्मों से,
निज चेतन को शुद्ध साधक चरन अभ्यासे।
गच्छ बाहिर होके ऋतु[6] मुनि रहे पासे,
वो ठारा[18] मासां तांई कर्म विनासे ॥

तर्ज—दौड़

क्रोध[10] मान माया और लोभ मोटो लाल खोर, चारूं (को) जाने मुनि चोर, यांने छिन्न करे २। ऐसे दशम गुण स्थान, होवे कर्मांहु की हान। सूक्ष्म सपराय जान, चौथी कर्म चरे २॥ जैसो कह्यो जिनाचार, ऐसो पाले अनगार यथाख्यात जान यार, भव दुःख हरे २। यांमें होवे[11] अन्तज्ञान, वो तो वाजे भगवान, वारु अमर विमान लहे कर्म डरे २॥

---

५ सामायिक चारित्र ६ छेदोपस्थापनीय ७ ऋजीवनी प्रतिज्ञा-धारे ८ पाप ९-१० चोलों की भरती में ११ कोहँ पियँ पिया सेई, माणं विणय नासीणो, माया मित्ताणी नासेई, लोहो सव्व विणासणो ॥

तर्ज—मिलित

जबर ज्ञान है जैन धर्म में, को न ही वातों छांनी है ॥ निज गुण ३ ॥

॥ अथ चतुर्थ तप—चौकमिदम् ॥

तर्ज—मिलित

पूर्व कर्म मय कठिन काठ को, तपस्या बालन गाई है छहु भेद कहा जिन उन्हीं को शास्त्र भरे उववाई है ॥ अनशन भेदयुत जानो इतरे अलप दिन गाई है, जिनवर जग मांही; उन्हीं में छट्मासी तप ठाई है ॥

(एवं खातरा) उवसमेण हणे कोहं, माणं मद्दवया जिणे, मायं चाज्जवभावेणं, लोहो सन्तो सजोजिणे। इनका सविस्तर वर्णन नवतत्व के निर्जरा द्वार में जाने। ? भिक्षाचरी- पांचों इन्द्रियों को वश में करें, पशु, स्त्री पडक रहित स्थानक भोगवे। मन, वचन, काया वश करे, काम, क्रोध, मान, माया लोभ वश करें। गोचरी (कान) अगोचरी (नयन) दुम्मई (नाक) निग्गही (जीभ) अचिरपडी (शरीर) इन्हीं को वश में करें। विणय जिण शासणं मूलो, विणय निव्वाण साहगो, विणयाउ विप्प मुक्को, कवो धम्मो कयं संजमो चेव। वैयावच्च, १० प्रकारे, गाथा अचिन्न बाल दुब्बलि, गिलाण वुड खमण पवत्ति आयरिए उवज्झाय से नहि साहंमिये तवस्सी ॥१॥ कुल, गण, सम चेइय ठेय निजरठी वैयावच्चं अणिस्सियं दस विहं बहु विहं करेइ। इति व्याकृति

तर्ज—शेर

सुना तो दियो आव दूजो, जन्म तो पर्यन्तजी, पूरो तो नांही भेट भरियो, ऊनो तो दरी करे सन्तजी; लेवे तो दोषन टाल मुनिवर, आहार शुद्ध एकन्तजी. नीवी तो आयंबिल करत मुनि नित, कोइक रस त्यागन्तजी।

तर्ज—लावणी

तन कष्ट करी मुनि द्वादश प्रतिमा साजे,
मुनि करे चौरासी आसन नींद निवाजे।
मुनि 'पडि संलीनता', करके सन्त शुद्ध वाजे,
वो 'विवित्तशयनासन' जोग 'कषाय' इन्द्राजे॥

तर्ज—दौड़

दोष लाग्यो हुको दण्ड, नहीं लेवे खण्ड २, प्यारा गुरु पे प्रचण्ड सब जहार करे २॥ विनय मूल जिन धर्म से ना मति रक्खो शर्म, करियों तुटे वसु कर्म, मन मान हरो २॥ करो व्यावृत्ति विशाल, फेरू देखी शुद्ध काल[1] पंच स्वाध्याय[2] रसाल दोय ध्यान[3] धरो २॥ विउसग्ग

१ चौतीश असज्झाय टाल २ वायणा-पूछणा-पर्यटणा अनुपेक्षा-धम्म कहा ३ धर्म ध्यान-शुक्ल ध्यान

यूं विचार, 'चौथमल्ल' अनगार, चावा ज्ञानादि ए चार, डेह ग्राम खरो २ ॥ साल छासठो है एस, बीज माघ कृष्ण पेस, एतो मारवाड़ देश, गुरु पाय परो २ ॥

वर्ज—मिलित

स्वामी श्री 'नथमाल' मुनिश्वर, अगनित गुन धर ज्ञानी है। निज गुण चेतन का; अछाए कर्म हटावन कानी है ॥

॥ इति ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप-मय चौक सम्पूर्णम् ॥

स्तवन नं. ६८

तर्ज—बार बार मैं क्या तुझ बोलूं मान कहा मेरा

काशी देश 'बनारसी' नगरी, अश्वसेन राया, वामा राणी निज-कुल दीपक, पास कुंवर जाया। भर जोवन में आये लालजी, नारी परणाया, एक दिवस गंगातट ऊपर गेरक चल आया। पंचाग्नी तो धूनी तापे, सब जन भरमाया, ऐसे जोगी आये अवलिया, अति सुन्दर काया। गलि २ में वातां फेली माता सुन पाई, वार २ तुम जपो जिनेश्वर पारस सुखदाई। तीन लोक गो साहिब पूरे आवां मन चाई ॥ टेर. १ ॥

माताजी के संग लालजी कर गज असवारी, तापस

दर्शन करवा देखो जावे अवतारी । खबर हुइ जब सकल नगर से आये नर नारी, हलकारा कहे आगे जाकर करलो हूंसियारी, आते हैं महाराज कुंवरजी करवा दीदारी तापस कहे हमको है मालुम मत करो गलफा री, भूत भविष्यत वर्तमान मैं सब जानू भाई ॥ बार ॥ २ ॥

गंगा तट पर आये प्रभुजी जोगी निहाला, सब जन सुनतां सुन जोगी तू बोले किरपाला । तेरी धुनी में नाग जलत है काला फुन वाला, ऐसी तू क्या तपस्या तापे रे रे ! मतवाला । गुस्से होकर गेरक बोले, कहां जलता काला, गैर वाजबी हमसे प्यारे ! मत करना वाला, हम हैं जोगी जंगलवासी तुम छेड़ो नांइ ॥ वार. ३ ॥

तेरा हुनर कोइ मेरे ऊपर एक नहीं हाले मिजाजी एक नहीं हालें । मन का लड्डु चाहे जितना खाखी तू खाले, राइ भरोसे मिरचां प्यारे ! चायो मुह बाले, करना हो कर गैर अभी तू कौन तुझे पाले, हुक्म दिया तब उठे नौकर पारस जिन वाले, नौकर लक्कर फार निकाले फणि धर ततकाले देखी दुनियां बोली तेरी उड़ गई सिद्धाइ ॥ वार. ४ ॥

फणिधर कूं अ-सि-आ-उ-सा प्रभु श्रीमुख फुरमाया पंचाक्षर सुन फणिधर मरने सुर पदवी पाया, होगई निंदा

अब क्या करना, गेरक घबराया, क्यों इत आउं जस फैलाउं, होगये हम काया, माता कहे अब चलो लालजी जोगी रिसाया, इतरे बाबो बोल्यो खारो सुन वामा जाया मुझ तपस्या का ऐ ही फल तोकू होइ जो दुःखदाइ ॥५॥

दुनियां सुन कर अर्ज करी इम माफ करो सारी यह है राजा बनारसी के पारस बलधारी। पारस कहे क्या मुझ दुःख देसी ताकत है धारी। नगर निवासी साथे जिनवर आये निज द्वारी। केई दिन पीछे गेरक मर कर हुवो मेघमारी, वर्षी दान तब देई जिनवर होगये अनगारी। कर्म अरि मारन के तांई गये प्रभु बन मांई ॥६॥

इक दिन जिनवर शिव दग वन में ध्यानाचल ठायो दश भव को वैरी कमठासुर दौड़ उठे आयो, मुझ धुनी में से नाग दिखा कर मन आनन्द पायो, अब कहो कित जास्यो तुम्ह वाहाला थयूं मुझ मन चायो, जोरदार सुर पवन चला कर पाणी बरसायो, बिन २ विजुरी चमके उजरी काली घटा लायो, नाक लगे प्रभु डूब गये पिण ध्यान चल्यो नांई ॥ वार. ७ ॥

नाग इन्द्र का आसन चलिया अवधी से जाना, जिन अपराधी कमठासुर को जा बरजूं छांना, तीन लोक के नाथ निरंजन अतुली बलवाना, ऐसी तुझ क्या मुझी

मूरख अब तो हठ जाना, इन्द्राणी को लेकर प्रभु पे आये मघवाना, अधर लिए प्रभु ऊपर फुण से मानूं तम्बू ताना ते सुर आखिर में शर्म कर बोल्यो शिर नांई ॥ वार ८ मैं तुझ तावेदार प्रभुजी अरजी सुन मेरी, कुमति रे वश होय अज्ञानी अभक्ति केरी तेरी, खमो अपराध प्रभो ! अब मैं नहीं तुझ बैरी, दास दास को दास समझ कर मेटो भव फेरी; नाग इन्द्र अरु सुचि सुर सघला राह ली घर केरी, निर्मल केवल ज्ञान प्रभुजी पाया शिव सेरी, 'नाथ' मुनि शिष्य 'चौथू' वीनती कुचेरे गाई ॥वार ९॥

श्रीमन्मान्य व्याख्यान वाचस्पति स्वामीश्री नथमलजी म. सा.

का गुणाष्टक

स्तवन नं. ६६

तर्ज—तोटक छन्द

सुख सम्पति दायक सन्त सिरे मुनि नायक पायक जेह तिरे। उपसर्ग सदा सब दूर हरे 'नथमाल' सुकोटि कल्याण करे ॥ १ ॥ नर्जे निशि में अथवा मग में, डर पे चलवो मन नांही गमे। डर भो मन में न रहे जिसमें नित जे नर नाथ मुनिन्दन में ॥ २ ॥ मुख फार फिरे विकराल अही, डर पै नर नयन निहारत ही। तिनको डरभो रति एक नहीं, मुनि नाम लियो अहि जात

वही ॥ ३ ॥ अति तिच्छन दाढ भयानक जो, दृग देखत ही दुःख दायक जो। हरि होत अजा सम पायक जो तित याद करे मुनि नायक जो ॥ ४ ॥ करिके शिर पे अलि आप भमें, निज बन्धन तोड़ भयो मद में। बकरी सम होय निकेत रमें, 'नथमाल' तपोधन जेह नमे ॥ ५ ॥ छल छिद्र निहारत नैनन ते, वच दुष्ट वदे अति बेनन ते। अरि पाय परे बिन केनन ते, मन है जिनको मुनि ध्यानन ते ॥ ६ ॥ असराल कृशानु लगी वन में, नर देखत ही थरके तन में। तिनको पिन राख सके रिन में मुनि आय बसे जिनके मन में ॥ ७ ॥ जल में नर जोर न चालत है पुनि चोर मिन्यों दुःख मालत है। तन रोग सुसाध्य उचारत है, मुनि ए सबला दुःख टालत है ॥८॥ इम अष्ट महामुनि कष्ट हरे, मुनि अष्टक पापज नष्ट करे। यह तोटक छन्द सदा उचरे, अपि "चौथमल्ल" तुम ध्यान धरे ॥ ९ ॥

स्तवन नं. १००

अथाग्रे सवैया

[१]

मन्त सु आनन व्योम महि घट ज्ञान भवि शिखि शब्द करे हैं। सात नयों चमके बिजुरी वनगाज आवाज प्रमोद धरे हैं ॥ जासु आवाज में अन्यमति सु संकेत गिरें

अघ पंक हरे है। जायु अम्बू भवि के उर में, तरुता समता फल मुक्ति वरे है॥

[२]

शांति सुधा उर में निशि वासर हंसमति अति केल करे है। ज्ञान तरंग उत्तंग उत्तंग चढे, सुमति अलि आय के अम्बु भरे है॥ सात नयां एक वृक्ष बडे जहां चार निक्षेप की गुल्म सरे है। ऐसे दयानिधि राजत है, ऋषि चौथ सदा तस पाय परे है॥

[३]

चन्द्र की ओपम नींठ घटे नहीं कारो कलंक कहे सब कोई, सिन्धु को वार तो खार समो तिय कारण ओपम झूठी ज कोई। गंग को धार तो नार को चेरो सु ऊपम नोपत सन्त कूं सोई, चौथ कहे ताते सन्त अनू-पम सन्त कूं ओपम सन्त की होई॥

[४]

शान्ति दशा मुखता पर शोभत है मुनि की मन मोहन हारी। कोमल कैन से वैन उचारत जैन के जैन दिखात उघारी॥ मान को मार निकार दियो कोपन लोभन चोर न यारी। सन्त इस्या महिमण्डल राजत "चौथु" कहे हुय वन्दन म्हारी॥

[५]

वन ताप सहे वनवास रहे निज द्वार थकी तो करे विछुना। केई ध्यान धरे मठ काम करे, जट धार फिरे सब शील छुना ॥ केई वाप भखे तन छार ढके केई आसन धार रहे घिछुना। यदपि 'चौथ' कहे सब कष्ट करे जिन मग्ग विना कछुना कछुना ॥

[६]

केइके राम रटे निशि वासर केइक कृष्ण हुको गुण गावत। कोइक जाप जपे जगन्नाथ हुको, कोइक नाम अल्लाहु को ध्यावत। कोइक दादु जपे तुलछी पुनि केइक राधा रु स्याम रटावत। 'चौथ' कहे सब जाप भला, पिन मोक्ष तो जैन विना नहीं पावत ॥

[७]

एक अलिसो चलि घट लेवन नाम विचार कियो मन भारी। गौर रु सुन्दर देख लियो कर अंगुरी वंक के टाट में मारी। चन्द्रमुखी चट के घट लाय के दाम चुकाय दिया तिन वारी। त्यपि 'चौथ' कहे इम धर्महु की पहिचान करो नर ज्ञान विचारी ॥

॥ इत्यर्हम् ॥

ॐ

श्री वीतरागाय नमः ।

श्री जैन भजन तरङ्गिणी ॥

स्तवनः—देशी रावन सुनो सुमति हिय धार, सती सीता के चुराने वाले ।

श्री शान्तिनाथ महाराज, सदा शान्ति के करने वाले । शान्ति के करने वाले, मृगी के मिटाने वाले ॥ टेर ॥ माता के उदर में आया, स्वपने उत्तम चौदह पाया । नाम शान्ति कुंवर कहलाया, स्वार्थ सिद्ध से आने वाले ॥ १ ॥ सब इंद्रादिक मिल आवे, मेरुगिर ऊपर लेजावे । नाटक गीत वाजिन्त्र बजावे, जन्म कल्याण के करने वाले ॥ २ ॥ पद चक्रवर्त्त का लीना, जब राज प्रभुजी कीना । दान वर्ष एक का दीना, फेरी संयम के लेने वाले ॥ ३ ॥ प्रभु पाया केवल ज्ञान, हटाया मिथ्या पाप अज्ञान । आप हो शान्तिनाथ भगवान, जगत् की विपति हरने वाले ॥ ४ ॥ बल गुण रूप अनंत, कहिये भय भञ्जन भगवंत । तुम हो शिव रमणी का

कंथ, हमारी करुणा करने वाले ॥ ५ ॥ हीरालाल चरण का दास, पूरो मेरे मन की आश । मिलावो मोक्ष नगर का वास, मैं हूं अर्ज गुजारन वाले ॥ ६ ॥

स्तवनः-देशी मधुवन में जाय मची होरी ॥ तथा फाग में ।

चलि आती है वाणी जिनवर गङ्गा । चलि आती है ॥ टेर ॥ प्रभु मुख वाणी वहे, अति निर्मल । गुण दुर्गुण गूहे उपङ्गा ॥ १ ॥ द्वादश अङ्गी चङ्गी सरिता, चित्रक अनेक भरया भङ्गा ॥ २ ॥ घोर गुञ्जार शब्द करि गुञ्जे, वाक वदे अति मृदु चङ्गा ॥ ३ ॥ या जिन वाणी, दुख दाग मिटानी करत किलोल मची विहङ्गा ॥ ४ ॥ कहे हीरालाल सब शास्त्र प्रमाणिक यामें जीवदया रस मातङ्गा ॥ ५ ॥

देशी पूर्ववत्

साधू आयाजी भविक जीव तारन को, साधूजी आयाजी ॥ टेर ॥ ज्ञान सुणावे और मार्ग बतावे, मोक्ष मार्ग पंथ धारण को ॥ १ ॥ सुमति सखी को सङ्ग मिलावे, क्रोध लोभ परिहारन को ॥ २ ॥ जन्म मरण का फंद छुड़ावे, दुर्गति दूर निवारन को ॥ ३ ॥ सब जीवों का प्राण बचावे, राग द्वेष दोही टालन को ॥ ४ ॥ पांचों इंद्रिय का दमन करावे, मान माया मद गारन को ॥ ५ ॥ कर बहु तपस्या जोर लगावे,

अष्ट कर्म रिपु मारन को ॥ ६ ॥ स्वर्ग गति का सब सुख मिलावे, दया मार्ग दिल धारन को ॥ ७ ॥ कहे हीरालाल ऐसा संत मिलावे, भवदधि पार उतारन को ॥ ८ ॥

देशी पूर्ववत् ।

कलियुग में पाप अति छायो ॥ टेर ॥ मात पिता गुरू देव की भक्ति, घट गई कलियुग जब आयो ॥ १ ॥ बेटी के सांटे बाप परणियो, न्हानी सी लाडी घर में लायो ॥ १ ॥ विक्रय करी पुत्री ब्याह रचायो, बूढो बींद परणवा आयो ॥ २ ॥ गौ घातक नर दुष्ट की सेवा, राज अनीति कर दुख पायो ॥ ४ ॥ मेघ वृष्टि दुर्भिक्ष दिखावे, अकाल वर्षे मन चायो ॥ ५ ॥ लाज शर्म नहीं रहीरे लोगां में, बोले वक जैसे मद पायो ॥ ६ ॥ कुगुरु देव भूत जिम नाचे, सत् पुरुषों को देखी घुर्रायो ॥ ७ ॥ इत्यादिक लक्षण कलियुग के, सत्पुरुषां के मुख फुरमायो ॥ ८ ॥ कहे हीरालाल अणी कलियुग मांही, जैन धर्म कल्प वृक्ष छायो ॥ ९ ॥

देशी पूर्ववत्

सती जावोजी नेम गिरनारनको । सती जावोजी ॥ टेर शीश शेवरो मुकुट विराजे, नवलख हार हृदय धारनको ॥ १ ॥ बनकर दुल्हा दुल्हिन के कारन, उग्रसेन दरबारनको ॥ २ ॥

तोरण आये पशु बिरलाये, दया मार्ग दिल धारन को ॥३॥
हरिहलधर दोनों आडाफिरिया, अनेककरत पीछावारनको ॥४॥
नव भव स्नेह छेह नहीं दीजे, मेहर करो मुझ तारनको ॥ ५ ॥
विपत विदारण सबजगतारन, जल मिथ्यात्वनिवारनको ॥६॥
संयम धार्यो अरु कारज सार्यो, जन्म मरण दुखटारनको॥७॥
कहे हीरालाल जिनराजकी करणी, हमको पार उतारण को ॥८॥

देशी पूर्ववत् ।

लेता जावोजी पिया संग गिरनारी, लेताजावोजी ॥ टेर ।
मुझको त्याग वैराग्यमें बसिया, नाथ निरंजन व्रतधारी ॥ १ ॥
मनकी आश पूरो मेरे साहिब, प्राणपति पर जाउं वारी ॥ २ ॥
पशुओंकी करुणाकरी जगनायक, मेरीकरुणाक्यों नहींविचारी ॥३॥
तुम तो छोडचले प्रभु मुझको, हमनहीं छोडत संग थारी ॥४॥
कंकण मोतीहार उतार्या, और आभूषण दियो डारी ॥ ५ ॥
आपही लोच करीलियो संजम, संग सहेल्यांके परवारी ॥६॥
कहे हीरालाल पियुजीमिलनको, उमंग लगी मनशा म्हारी ॥७॥

स्तवनः—देशी महाक राग में

म्हारो [illegible] हीनदयाला [illegible] थांकी [illegible] ॥टेर॥
[illegible]र जोडी राजुल बोले, [illegible] श्रीजगन[illegible]र । नव भव स्नेह छेह
नहीं दीजे मानो मारी या [illegible] । म्हारो [illegible] दीन

दयाला, चालां थांकीजी लार ॥ १ ॥ जान सजी सब साथ बुलाया हरि हलधर दोही लार । पाछा फिरता लाज न आवे, यो नहीं कुल आचार ॥ अहो अलबेसरवाला, दीनदयाला, लेसांजी संजम भार ॥ २ ॥ पशु देखी करुणा तुम आणी, मेरी करुणा की न ठोड़ । बिल बिल करती राजकुमारी, पल मांहि दीनी छोड़ । अहो अलबेसर वाला, दीनदयाला, चालां थांकीजी लार ॥ ३ ॥ राजुल की या विनतीरे, सुणो श्री जगन्नाथ । मैं नहीं छोडूं संग तुमारो, शिव पुर केरो साथ । अहो, अलबेसरवाला, दीनदयाला, चालां थांकीजी लार ॥ ४ ॥ सातसो सहेली साथ में लेके, आप चढ़ी गिरनार । राजुल कहे नहीं रहसुं घरमें, लेसुं संजम भार । अहो अलबेसरवाला, दीनदयाला, चालां थांकीजी लार ॥ ५ ॥ कंकण मोती हार उतार्या, और सबही श्रृङ्गार, सहेल्यां का परिवार से, कांई चढ़गई गई गिरनार । अहो अलबेसरवाला दीनदयाला, चालां थांकीजी लार ॥ ६ ॥ आप तर्गी रहनेम को तार्या, जग तार्यो महाराज । यादव वंश अतिही उज्वल सार्या आतम काज । अहो अलबेसर वाला, दीनदयाया, चालां थांकीजी लार ॥ ७ ॥ हरिलाल की विनतीरे, सुणज्यो श्री जिनराज । आशा पूरण अंतरयामी नेमीश्वर महाराज । अहो अलबेसरवाला, दीनदयाला

झालो भांकीजी लार ॥ ८ ॥

देशी पूर्ववत्.

सुण चेतन प्यारा, मोहनगारा, साता फेरोजी राज ॥ टेर ॥ दृढ आसन दृढ मन करीरे, दृढही ध्यान लगाय ॥ जाप जपो जिनराज कारे, जन्म मरण मिटजाय ॥ १ ॥ यो अवसर चूको मतीरे, जिम पारधिको बाण । कर्म रिपु के कारणेरे, कीजे यह परमाण ॥ २ ॥ मन वच कायास्थिर करीरे, लव लागी एक ठोर । गगन गमन पतंग की रे जैसे, हाथ में लीजे डोर ॥ ३ ॥ चंचल चित्त तुरंग जिमरे, चाले चाल विकट । ज्ञान बंधन करि एक ही ठामे, स्थिर करले झटपट ॥ ४ ॥ मधुकर मालती दल विषेरे, कुञ्जर कजलीवन । या विध ध्यातम आणीरे, कीजे राम रमन ॥ ५ ॥ जैसे नटवो नाचतोरे, धारे एकण चित्त । हीरालाल सिद्धपद को पावो, एम राखो चित्त ॥ ६ ॥

देशी पूर्ववत् ।

श्री जिनराज की वाणी, सुणो भवप्राणी, आणी मन हुल्लास ॥ टेर ॥ मानव भव उत्तम कुलपायो, फलियो जिम सहकार । ज्ञान सुणावे सतगुरु थांने, लेले हृदय धार ॥ १ ॥ ज्ञानी हुवे सो ज्ञान सुणावे, अज्ञानी अंधार । जिम दीपक विन मंदिर सूनो, उदर सूनो विन अहार ॥ २ ॥ अंधा मार्ग दो-

लतारे, फिरता बन मझार । अंधाने अंधो मिले जब, कौन लगावे पार ॥ ३ ॥ साधु संग सदा अति नीको, मेटे क्रोड अपराध ।नुगरा नरकी संगति कीजो न, वधे घणो विषवाद ॥ ४॥ शीतल चंदन सारिखारे, ऐसा है अणगार । आप तिरे औरां को तारे, जूं जहाज समुद्र मझार ॥ ५ ॥ साधू साधे मुक्तिमार्ग, कनक कामण से दूर । काम क्रोध औरं माया त्यागी, इंद्रियां जीतण शूर ॥ ६ ॥ जीवदया दिलमें नहींरे, वो नर मूढ गँवार । भवसागर मांही गोता खावे, यमदूतों की मार ॥ ७ ॥ इंद्रियां वल हीणो नहींरे, तबलग करिये काम । जरा रोग आवे नहींरे, भज भगवंत को नाम ॥ ८ ॥ उगणीसे गुणंतर मांही, चारभुजा की धाम । हीरालाल कहे दश ठांणा सुं, पाया सुख आराम॥६॥

देशी पूर्ववत् ।

सती ने नहीं लागे कलंक लगार, जांको शील रत्न सिर दार ॥ टेर ॥ सोकां मिल सल्ला करीरे, लीनी सीता को घेर रावण पद पूजा करे, इम बात चलादी शहेर ॥ १ ॥ रामचंद्र जी सामलीरे, सीता करी वनवास । अग्नि कुंडमें धीज कराई जांकी देवता पूरी आश ॥ २ ॥ सुभद्रा के ऊपरेरे, सासु कलंक चडाय । समता कर बैठी रही, जद देवता प्रगट्या आय ॥३॥ द्वार जड्या नगरी तणांरे, चालनी बांध्यो तार ।सुभद्रा जाकू छांटियो, झट खुल गया नगरी द्वार ॥ ४ ॥ चंदनबाल

बालकुमारी, वेची ऊभे बाजार । हाथ पकड़ लेइ चाली कं-रगा, जद देवता लागा लार ॥ ५ ॥ कलावति राणी तणांरे, कर काट्या भूपाल ! शील तणां प्रभावथीरे, प्रगट्या कर ति-णवार ॥ ६ ॥ इत्यादिक सतियां घणांरे, शील तणों शृङ्गार । विपत्ति मांहीं डोले नहीं, जांका दुःख टल्या तत्काल ॥ ७ ॥ सोने काठ लागे नहींरे, मोती न मैलो होय, हीरालाल कहे आदर पावे, मोल में महँगा जोय ॥८॥ उगणीसे अडसठ में रे, कोटा शहर मझार । नंदलालजी महाराज विराजे, आठ ठाणां परिवार ॥ ९ ॥

देशी पूर्ववत् ।

पंथीड़ा थारो पंथ घणो छे दूर, तूं तो ले ले खर्ची भर-पूर ॥ टेर ॥ लख चौरासी योनि में रे, पंथ रह्यो छे डल । उत्तम कुल मानव भव पायो, अब मारग मत भूल ॥ १ ॥ आगे छे अटवी घणीरे, विषम वन उजार । सिंहादिक सा द घणांरे, क्रोधमान चंडार ॥ २ ॥ मारग चाल्यो दूर कोरे, खर्ची न लीनी लार । भूख तृषा दुख सहे दुर्भागी, थांरी कोण करगा सार ॥ ३ ॥ खर्ची विना सारसी नहीं रे, जोवो हृय विचार । कोण छे सज्जन आगे थांरे, करसी सार संभा- ॥ ४ ॥ जंबू स्वामी पूंछियांरे, मोक्षमार्ग प्रकाश । भवजीवां तिरवा काजे, पासे मुक्ति वास ॥ ५ ॥ छ काया ने भांत-

खोरे, यो छे ज्ञान को सार । थोड़ी भी नहीं करणी हिंसा, यो तप संयम भार ॥ ६ ॥ मार्ग यही मोक्ष कोरे, मत चूको सुजाण । वार बतावे सत्गुरु थांने, करना वचन प्रमाण ॥७॥ सत्गुरु तो मिलिया नहींरे, मिलिया मूर्ख जाट । अंधा को अंधा मिले तो कौन बतावे बाट ॥ ८ ॥ इन्द्रियां जीते आश्रव टारे, धरे बावन मान । हीरालाल कहे सत्गुरु सांचा, मेले मोक्ष स्थान ॥ ६ ॥

स्तवन रावन सुनो सुमति हिय धार सती सीताके चुराने वाले ।

पापी करे जीवों की घात, दुष्ट दुर्गति के जाने वाले दुर्गति के जाने वाले, नरकों में रहने वाले ॥ टेर ॥ गरीबों की जान सताते, कई मांस पचा कर खाते । खुद तन की खैर मनाते, बिगाना गोश्त काटने वाले ॥ १ ॥ ये नीच से नीच है खाना, देखो शास्त्र वेद पुराना। किसके लगे आप बहकाना, कुराह के बताने वाले ॥२॥ प्राणी का प्राण लूटेगा, बदला कभी नहीं छूटेगा, उनको यम के दूत कूटेगा, वे हैं नर्क पालने वाले ॥ ३ ॥ जंतु छिप कर तृण वह चरता, छिप जंगल बीच वह फिरता । किसको देख के दिल में डरता, अपनी जान बचाने वाले ॥ ४ ॥ गरीबों को सताने वाले, वो अपनी जान को पाले, पकड जंजीर में डाले, जो हड्डी के चाटने वाले ॥ ५ ॥ सब जीवों पर रखना महर, यह होगा तुम को खैर, मत रखना

रकिसी से बैरं, दया जो दिल में जमाने वाले ॥ ६ ॥ जीवों का बचावो प्रान, मत करना तुम नुकसान, हीरालाल सभा दरम्यान, हित उपदेश सुनाने वाले ॥ ७ ॥

देशी पूर्ववत् ।

कन्हैया करत ख्याल कमाल, कंश का मान हटाने वाले मान हटाने वाले, दुश्मन को जीतने वाले ॥ टेर ॥ जमना के घाट पर आया, सब लड़कों को संग लाया । ख्याल गैंदका खूब मचाया, कालीनाग नाथने वाले ॥ १ ॥ गोकुल से गुजरी जावे, राह बीचमें लूट मचावे । धोबा भर भर दधियां खावे, बंसरी राग बजाने वाले ॥ २ ॥ ब्रजवासी बसे गवाल, संग में चलते है नंदलाल । भक्त की करते हैं प्रतिपाल, केसरी सिंह विडारन वाले ॥ ३ ॥ सोते शेष नागकी सैया, फणपर नृत्य करे है कन्हैया । गोपियां रमती रास हसैया, गजके दंत उखाड़न वाले ॥ ४ ॥ वसुदेव पिता कहलाते, माता देवकी के घर जाते, जादू वंशपति विख्याते, अपना कुल बधाने वाले ॥ ५ ॥ सोलह वर्षों के मांही, मल्लों से युद्ध किया है आई, बलवंत हुवे दो भाई, गोवर्धन गिरके उठाने वाले ॥ ६ ॥ कई लिया हरि अवतार, लिखते वैष्णव शास्त्र सुभकार । लीला कीनी अपरमपार, जगत् को विष्णु बताने वाले ॥ ७ ॥ परणेगा राजकुमारी, भामा खास पटरानि तुम्हारी । हीरालाल कहे गिर-

।री, धर्म्म की उन्नति करने वाले ॥ ८ ॥

देशी पूर्ववत् ।

अब तुम होजाना होशियार, खबर है लश्कर आने वाले।
।श्कर है आने वाले, तुमको पकड़ लेजाने वाले ॥ टेर ॥
ाय पूर्वजन्म में कीधा, इस भव में आके लीधा। लेखा करले-
ा तुम सीधा, अरे कलियुग के रहने वाले ॥ १ ॥ या वक्त
मोलक पाई, नाहक इश्कमें देत गमाई। बोझा सिरपर लेत
ठाई, दिल दुनिया में फंसाने वाले ॥ २ ॥ तुम कहते ये
ाया मेरी, नहीं छोडूं इसको देरी। मौत से जोरी चले नहीं
ारी, अरे मायाके लुटाने वाले ॥ ३ ॥ जैसी बादल की छायां
लजाती सूर्य के आयां, क्यों रूप देख गर्वाया, अहो मगरूर
े करने वाले ॥ ४ ॥ कोई कहते हम बलवान, जीते कुल
ृथ्वी को जान। करते दुनियां में तोफान, जुल्म की पोट
उठाने वाले ॥ ५ ॥ बड़े इन्द्र चन्द्र भूपाल, रहते हरदम वेखुश
हाल। उनपर भी आता है काल, वे दुनिया में रहने वाले ॥६॥
सब जीवों की दयापाल, जिससे टलजाता है काल, इम कहते
हीरालाल, मोक्ष की राह बताने वाले ॥ ७ ॥

देशी पूर्ववत्.

सत्यपर चलो सबही संसार, जो हो लज्जा के रखने
वाले। लज्जा के रखनेवाले, सत्य को पार लगाने वाले

। टेर ॥ जो सत्य पर रहे नरनार, वे होजाते हैं पार, होवे दुनिया में जसधार, जो हो नेकी पर रहनेवाले ॥ १ ॥ हरिश्चन्द्र राज तज दीना, पर घरका काम जो कीना। रोहितास कुंवर संगलीना, तारा रानी के बेचने वाले ॥ २ ॥ ब्राह्मण घरका पानी, नित उठ भरती थी वो रानी, राजा भी सत्य को टानी, अपने शील को रखने वाले ॥ ३ ॥ विपति जब दूर हरानी, मिले पुत्र राजा और रानी। जिनकी है बहुतसी कहानी, सत्य और कुल के बढ़ाने वाले ॥ ४ ॥ द्रोपदी का चीर उतारा, पांडवों को देश निकाला। रामचन्द्र सत्य नहीं हारा भरतको राज्य दिलाने वाले ॥ ५ ॥ जो विपति के मांही, रख मर्यादा दृढ़ताई। जो होवे लोग लुगाई, सत्य की नेग उठाने वाले ॥ ६ ॥ हुवे बड़े बड़े भूपाल, पकड़ी सत्य शील की ढाल। राह पर चलता हीरालाल, सूत्र की वाणी सुनानेवाले ॥ ७ ॥

स्तवन देशीः—इशू भगवान मेरा मान बचैयो.

तरंग का नीर जिम जावेरे जोबनियो ॥ टेर ॥ बालपणो हंस खेल गमायो, कूदत फिरे ज्यों जंगल हिरणियो ॥ १ ॥ देख जवानी भयो अभिमानी, लिपट रह्यो संग तरनि तुरनियां ॥ २ ॥ काम कमाई ये करीरे करम की, पाप का पुंज की नाव भरनियो ॥ ३ ॥ बरस पचासा भई मन आस

शेवरो बांधिने बूढो परनियो ॥ ४ ॥ धर्म विना सब जन्म गमायो, भार क्यों मारी नाहक जरानियो ॥ ५ ॥ जिनवर जहाज पाज शिवपुरकी हरिलाल प्रभुपद शरनियो ॥ ६ ॥

देशी पूर्ववत्

खेलत जमना तट जावेरे सांवरियो ॥ टेर ॥ मात यशोदा दहीरे विलोवे, मांखण मांगी खावेरे कँवरियो ॥ १ ॥ दधि दूध बेचने जावेरे गवालिन, मार्गमेंरोढ मांडेरे पाथरियो ॥२॥ धेनु चराई बंसरी बजाई, गोवर्द्धन नाम गिरवर धरियो ॥ ३ ॥ लेकर दण्डा मिलकर संडा, कानकुंवर जद रमण निसरियो ॥४॥ खेलतर गेंद गई यमुनामें, जाय पड़ी जिहां काली दह भरियो॥५॥ कोई नहीं का उस के सब ठाडे, कानकुंवर जद झटजाय पड़ियो॥६॥ नागनाथ गेंद लायोरे गोविंदो, देखरह्या सब गायाको गवारियो॥७॥ वरषज सोलह करि रंगरोल, नामजगतमें अहीरको छगियो॥८॥ कंस विडारी मथुरा धारी, रूपसुन्दर मंडपने भामाजीवरियो॥९॥ जगत् वल्लभ जगनाम धरायो, पूर्व पुन्यको संचय करियो॥१०॥ कहे हीरालाल सबही यश गावो, कीर्त्ति को जल जगत प्रसरियो ॥ ११ ॥

स्तवनः—देशी पूर्ववत्

श्री जिनराजहो शरण धर्मको ॥ टेर ॥ संसार सागर घोर

अवरथा, नीर तरङ्गना भरयोजी भरमको ॥ १ ॥ रागद्वेष दोई मगर मोटका, पाने पड्यां गिलजावे उननको ॥ २ ॥ भवसागरमें भटकत भटकत धर्म जहाज मिली तरण-तारणको ॥ ३ ॥ भव्यजीव प्राणी बैठाआणी, सतगुरु मिलिया नाव खेवणको ॥४॥ कहे हीरालाल सुणो भव्य जीवां चालो रे मुक्ति में ठाम आनंद को ॥ ५ ॥

देशी पूर्ववत्

गुणपेरी मैया हूकम करैया अवहम संयम भार धरैया। टेर।
प्रभु मुख वाणी पापहरानी, अमृत प्याला भरके पिलैया । १ ।
भवसागर भयंकर आगर, ताते हमको पार करैया ॥ २ ॥
राजा के पुत्र और रइसोंके कुंवर, सूरवडे षटखंड धरैया ॥ ३ ॥
करीअगवानी बोलेइमवाणी, आपो आपोमें कंवर कन्हैया ॥ ४ ॥
सिंहजिम सूरा माक्रमपूरा, भवसागर से पार पहुंचैया ॥ ५ ॥
आनमतारी कार्य सुधारी, त्यागदिया सब सोना रुपैया ॥ ६ ॥
करि तपभोग माक्रम सेरा, अष्टकर्म रिपु दूर करैया ॥ ७ ॥
कहे हीरालाल संयम शुद्ध पाली, केवल लही शिवपुर सिधैया ॥ ८ ॥

देशी पूर्ववत् ।

अहो रे चेतनियां भ्रमण करनियां, लख चोरासी में फिरन फिरनिया ॥ टेर ॥ कोई दिन राजा भयो महाराजा, सिर

पर चंवर छत्र धरनिया ॥ १ ॥ सुर-पुर धारी इन्द्र अवतारी, असुर जाति का भयारे भवनियां ॥ २ ॥ कभी तो कुंथु कुञ्जर काया, कोई दिन जंगल भयोरे हिरनियां ॥ ३ ॥ रूप कुरूपो पामर मानी, कोई दिन फिरतो कंवर कन्हैया ॥ ४ ॥ नर्क निगोद की धरी देह जनकी, जन्म मरण किया है घरनियां ॥ ५ ॥ उत्तम काया नर देह पाया प्रभु का भजन तुम भजोरे भजनियां ॥ ६ ॥ जिनवर वाणी सुणो भव प्राणी इनसे ओर नहीं जगत तिरनियां ॥ ७ ॥ कहे हीरालाल जीव दया पालो पार उतरजावो मोक्ष वरनिया ॥ ८ ॥

स्तवनः—राग आशावरी ८

गुरूजी माने मुक्ति को पंथ बतायो, जन्म मरण को दुख मिटायो ॥ टेर ॥ अंतर भ्रम मिटायो मन को, कुगुरु को संग छुडायो । काल अनन्त को भूल्यो भम्यों, अब ही मार्ग पायो ॥ १ ॥ लख चोरासी का फेरा फिरता जीव बहु दुख पायो । श्री जिन धर्म लख्यो निज नयण आनंद को दिन आयो ॥ २ ॥ सतगुरू वचन हृदय में सूरज, मिथ्यात्व तिमिर नसायो । पट प्रगट मार्ग मुक्ति को, दर्पण जिम दिखलायो ॥ ३ ॥ अब के आणि भवमांही आई, धर्म घणो ही सुहायो। हीरालाल कहे गुरू चरणों में, झुक झुक शीश नमायो ॥४॥

देशी पूर्ववत् ।

अब देखो खुल रही अंखियां हमारी, लियो मुक्ति पंथ मैं भारी ॥ टेर ॥ काल अनाद अज्ञान उदयसुं, दपट रही थी सारी । निर्मल नीर ज्ञान शुद्ध करने, धोय कियो मल न्यारी ॥ १ ॥ मोह मिथ्यात्व पडल करीने, छाय रहो अंधियारी । जिन वाणी को अंजन आंज्यो, चौदह ही लोक निहारी ॥२॥ नर अज्ञानी को ज्ञान नहीं है, कहां लग कहे उपकारी । संशय मिथ्यात्व मिटे नहीं मनको, मृग जिम वात निहारी ॥ ३ ॥ हीरालाल कहे हृदय जगो, समकितभानु भारी । गुरु को ज्ञान दीपक कर लीधो, दुर्गति गई सब टारी ॥ ४ ॥

देशी पूर्ववत् ।

जिनंद म्हारा जन्म मरन दुख मेटो, मैं तो पकड्यो पल्लो सेटो ॥ टेर ॥ कभीयक स्वर्ग गति लही ऊंची, कभीयक नर्क में हेटो । ऊंच नीच तो नृत्य करायो, बाजीगर को टेटो ॥ १ ॥ कभीयक भूप भयो छत्रधारी, मांग भरयो कभी पेटो । कुमंत नर कोई दिन पायो, कोइ घर हुवो नर घेटो ॥ २ ॥ या विध मुझको चतुर्गति को, कर कर कर्म खेटो, । भ्रमण कर-गयो किम नतायो निज आरहट को एटो ॥ ३ ॥ सेवक थांरो मन में विचारे, न किम करियो छेटो । मात तात बहु माम देवे तो, नहीं तजे बालक बेटो ॥ ४ ॥ तुम विन तारण तिरण

मुझको, और नहीं कोई जेठो । हीरालाल कहे अणी भव मांहीं पकड़यो धर्म अति सेंठो ॥ ५ ॥

देशी पूर्ववत् ।

नींदडली घुलरही आखियां मांई, तूं तो बिना बुलाई क्यों आई ॥टेर॥ ख्याल तमाशा जोबन जावे, जद कहांगई थी गमाई । धर्म करण को आयो स्थानक, तूं साथ की साथे आई ॥ १ ॥ प्रभु भजन करन को बैठा, जपणी हाथ के मांहीं । निद्रा आई घेरो घाल्यो माला परी छिटकाई ॥ २ ॥ धर्म कथा सुणबाने बैठो, झुक २ झोला खाई । विकथा करते ऊंघ नहीं आवे, यह कर्म गति है भाई ॥ ३ ॥ पांच जणां की शंका न राखे, पलक तूं दिया मिलाई । ऊंच नीच नहीं गिणे साथको, दियो गुर्डिदो लगाई ॥४॥ निद्रा दासी जिन पुरुषों की, चरण रही लिपटाई । दासी का दासा सब जग वासा, सोते सेज बिछाई ॥ ५ ॥ कहे हीरालाल या दर्शना वरणी घातक कर्म हटाई कैवल्य ज्ञान और कैवल्य दर्शन, प्रगटे पलक में आई ॥ ६ ॥

देशी पूर्ववत् ।

फोकट बादलिया जिम गाजे, तूं तो हृदय निपट नहीं लाजे ॥ टेर ॥ मुख से बचन कहे अति मीठो, काज सुधारूं आजे । दमड़ी देतां जिवड़ो दूखे, परमार्थ ने काजे ॥ १ ॥ पांच जणां में बैठो आगे, बात बणावे ताजे । धर्म्म क्रिया में कुछ नहीं

जाणे, सुखियो सब में वाजे ॥ २ ॥ धर्म उन्नति करने निमित्त कार्य करता लाजे। मृत्यु कार्य ब्याह वगैरह, मान वड़ाई छाजे ॥ ३ ॥ गर्व लाकर बोले पागल, वांदूं समुद्र पाजे। काम तणो कोई अवसर आया, पाछो फिरने भाजे ॥ ४ ॥ स्वधर्मी कों साज नहीं देतो, अधर्म में दिल राजे। हीरालाल कहे एवो माणस, केम सुधारे काजे ॥ ५ ॥

स्तवनः—राग खमाचमें।

नारी को संगपण काचोरे, मती कांई राचो ॥ टेर ॥ रूप शृङ्गार विलास वनिता, देखन लागे आछोरे ॥ १ ॥ फल किंपाक विपाक कहिया, भोगवियां नहीं आछोरे ॥ २ ॥ नारी नीर तणी गति नीची, या की परख करीने जाचोरे ॥ ३ ॥ चावण नारी एक विचारी, प्राण हरण फाडे कांचोरे ॥ ४ ॥ रत्न द्वीप में रयणा देवी, खेल मचायो सांचोरे ॥ ५ ॥ परदेशी भूपकी सूरी कंवा, नेह कर्यो तेहने काचोरे ॥ ६ ॥ हीरालाल कहे तजो संग नारी, शील रत्न जाणो सांचोरे ॥ ७ ॥

देशी पूर्ववत्।

कुमति नार पुरानीरे, तजिये इसे दूरी ॥ टेर ॥ काल अनन्त दिया बहु फेरा, करी २ वार्त्ता सूरीरे ॥ १ ॥ जन्म गमायो इसके संग, विपत्ति सही जीव पूरीरे ॥२॥ कईयक भूप करे हैं लड़ाई धाज रही रण तूरीरे ॥ ३ ॥ कुमति के सङ्ग लगा प्राणी, जिनकी वात रही अधूरीरे ॥ ४ ॥ जन्मके अंधे

दर्शन नहीं पावे, मोह निद्रा रही घूरीरे ॥ ५ ॥ कहे हीरालाल तजो तुम कुमति, पावोगा मुक्ति पूरीरे ॥ ६ ॥

देशी पूर्ववत् ॥

या कामणी मोहन गारीरे, मोहलियो संसारो ॥ टेर ॥ सुरनर किन्नर इंद्र विडंबा, हरिहर ब्रह्म मुरारी । कथा न्यारी न्यारी ॥१॥ योगी यती का योग लुटाया, छत्र पती छत्र धारीरे । गयो कोणकहारी ॥ २ ॥ रावण पद्मोत्तर मनोरथ राजा, मुंज राजा राज हारीरे । पडियो भ्रमनामभारी ॥ ३ ॥ अरणक मुनिवर गोचरी आया, या नारी नजरां डारीरे । चूका संयम क्यारी ॥ ४ ॥ कुंवर एलायची को नाच नचायो, बारह बरस गुजारीरे । फिरियो घर घर द्वारी ॥ ५ ॥ रह नेमिजी ध्यान से चूका, राजमति रूप भारीरे । डगिया दीठा नारी ॥६॥ कहे हीरालाल यों फंद बचावो, पाओगा मोक्ष द्वारीरे । शिवपुर सुखभारी ॥ ७ ॥

देशी पूर्ववत् ।

शील बडो सुखकारीरे, पालो नरनारीरे ॥ टेर ॥ अभिया रानी रूप मोहानी, सुदर्शन की वलिहारीरे ॥१॥ पौषध शाला में पौषध ठायो, उठा लायो महल मझारीरे ॥ २ ॥ कहे राणी मुखसे अमृत वानी, आशा पूरो हमारीरे ॥ ३ ॥ मन वच काया डिगे नहीं डिगाया, रानी राजा से पुकारीरे ॥ ४ ॥ त्रिया की

आल पड़यो महिपाल, या सेठमें विपति डारीरे ॥ ५ ॥ सेठ सुदर्शन सूली चढावे, या दुनियां उलटी विचारीरे ॥ ६ ॥ ध्यान धर्यो नवकार मंत्र को, त्रिदशा हुवा रखवारीरे ॥ ७ ॥ किये सिंहासण फूलकी वर्षा, या शील महिमा विस्तारीरे ॥ ८ ॥ कहे हीरालाल सबही आलम में, यश हुवो जय जय कारीरे ॥ ९ ॥

देशी पूर्ववत् ।

देखो माया थारीरे, ताके पर की नारी ॥ टेर ॥ सुग्रीव राजा की तारा रानी, वह रूपवती अति भारीरे ॥ १ ॥ रूप करी राजा सुग्रीव को, साहशक्र कियो अविचारीरे ॥ २ ॥ महेलां पर आय दिया दरवाजा, यह न्याय पड़ा दरबारीरे ॥ ३ ॥ रामचन्द्रजी के पास आया, या भीड़ मिटावो हमारीरे ॥ ४ ॥ राम कहे त्रिया घर की गमाई, मैं शोध करूं हूं तिहारीरे ॥ ५ ॥ मुझ दुःख काटो थे अन्तर्यामी, मिलसी सीता थारीरे ॥ ६ ॥ पर उपकारी दया दिलधारी, आया किष्कंधा मझारीरे ॥ ७ ॥ धनुष चढ़ाई टंकार बजाई, साहशक्र कंवक्त गयो हारीरे ॥ ८ ॥ कहे हीरालाल दयाल है ऐसा, भक्त की विपति विडारीरे ॥ ९ ॥

स्तवनः—देशी पद्म प्रभू पावन नाम तिहारो पे ।

वीरा म्हांसूं वेगो मिलवा आजे, पीहरिया का विरत नताजे । वीरा म्हांसूं वेगो मिलवा आजे ॥ टेर ॥ मात पिता

के पांवां पड़ने, नम्र भाव कहवाजे। भूआ भतीजी और सहेली, इमनीं याद दिवाजे ॥ १ ॥ पीहरिया के पीछे पुत्री सासरिया में गाजे। बहिनडी के मन आश तुमारी, बोल भूल मत जाजे ॥ २ ॥ वार त्योहारां याद करीने, चीर चूंदड़ मोकलाजे। भोजायां मन हर्ष धरीने, सयणाणी भिजवाजे ॥ ३ ॥ मिलनी में मिलवा के काजे, आछा भोजन लाजे। पहरण या वस्त्र अनुपम वहिनडी मंगल गवाजे ॥ ४ ॥ कर जुहारी साला बहिनोई, अपना काम समाजे। कहे हीरालाल हुई पटरानी, हरिजी को घर बसाजे ॥ ५ ॥

देशी पूर्ववत्।

चेतन यों सुधरेगा जन्म तुम्हारो, आरत रुद्र को दूर निवारो ॥ टेर ॥ शुभ शब्दादिक योग मिल्यां सो, पावे हर्ष अपारो। कवहू वियोग पडे नहीं इनको, दुःख को दूर निवारो॥ १ ॥ बंधिया आऊखाना दलिया, भरिया जितना भंडारो। तेमां अधिको ऊणो नहीं थावे, इम समतामन धारो ॥ २ ॥ अपने मनमें करे मन शोभा, होवे होवणहारो। निश्चल चित्त धरो चित्त सज्जन, जब सुधरेगा थांरो जमारो ॥ ३ ॥ चिंता रूपिणी अग्नि बुझावो, जिनवाणी अनुसारो। हर्ष शोक नहीं कीजे चित में, पूर्व संचित न्यारो ॥ ४ ॥ सुकृत संचो दुष्कृत टालो, गावो मंगलाचारो। ध्यान अटल तुम धरो मनमांहीं,

डूबो भव जल से पारो ॥ ५ ॥ हिंसा झूठ अदत्त निवारो, कीजो कुमति टारो । कहे हीरालाल उपशम आया, जिन वचनो आधारो ॥ ६ ॥

देशी पूर्ववत् ।

किसी की परवाह नहीं है हमारे, ऐसा देव अरिहंत को धारे ॥ टेर ॥ दौलतवंत देख्या बहु तेरा, माया में गर्व न वारे । दीर्घ बदन बलवंत जो पूरा, काम के केलन हारे ॥ १ ॥ हरि हलधर रुद्रादिक देवा कामण मोहन गारे । आप ही विश्व तणे वश पड़िया, कैसे करे निस्तारे ॥ २ ॥ व्यंतरादिक कोई सुरपद धारी, विस्मय बताने वारे । यो जग भूलपड्यो भ्रमनां में, जैसो कुरंग सुमारे ॥ ३ ॥ अष्टादश दोष से न्यारे, द्वादश गुण भंडारे । हीरालाल कहे ऐसे को ध्यावो, छिन में पार उतारे ॥ ४ ॥

देशी पूर्ववत् ।

कामण कोई नयना ललचावे, थारे शूरवीर हाथ न आवे ॥ टेर ॥ पञ्च वरन का वस्त्र पहरी, गहनां पहरी रिझावे । काजल सार के बिंदी नीकी, घुंगरिया घमकावे ॥ १ ॥ मस्तक गूंथी मन हर्षावे, मेंहदी राच दिखावे । मुख तंबोल दांत चित्र चूंपा, द्वितिया जिम चमकावे ॥ २ ॥ हाव भाव विलास ली- लाकर, कामी नर को डिगावे । नाटक गीत वाजित्र बजावे,

थई २ शब्द सुनावे ॥ ३ ॥ इंद्रादिक कई सुरनर जग में, तें पिया विषे वरतावे । ब्रह्मा विष्णु महेश जगत में, तीन लोक गुण गावे ॥ ४ ॥ ध्यानारूढ ऋषिराज देखने, नारी डिगावन आवे । हीरालाल कहे मुनिवर मोटा, मेरू से दृढ रहावे ॥५॥

देशी पूर्ववत् ।

मूर्ख नर माया में गर्व रह्योरे, सत्गुरु को नहीं मान्योरे ॥ टेर ॥ कर २ कूड़ कपट ठग बाजी, माया को मेल रह्योरे । काल बलेश्वर थांरे माऊभो, जद माया को मेल गयोरे ॥१॥ आवत लक्ष्मी देखी घर में, मनमें उमङ्ग रह्योरे । बांकी गर्दन आंखियां ऊंची, तन से अकड़ गयोरे ॥ २ ॥ अपना स्वार्थ केरे काजे, पर को दुःख दियोरे । थापण मोसो साख भरे झूंठी, निर्दयी हुवो हियोरे ॥ ३ ॥ सुपात्र दान दियो नहीं कोई, कुपात्र को पोष रह्योरे । रुदिरं वस्त्र रुदिर में धोवे, विष अमृत जिम पियोरे ॥ ४ ॥ अस्थिर माया संसार को सगपण, कौन के सङ्ग गयोरे । हीरालाल कहे रत्न चिंतामणि, वंछित सुख लह्योरे ॥ ५ ॥

स्तवन—राग बनजारा में ।

अर्जी सुनजो नाथ गुजारी, तेरे दर्शन की दिलधारी ॥ टेर ॥ चरणों की लगरही आशा, जैसे चातक चंद दिलाशाजी । ऐसे हुल रह्यो हियोसारी, तेरे दर्शन की दिल

धारी ॥ १ ॥ करुणा निधि दर्शन दीजे, दुखियों को शरण धरीजेजी । ऐसी आश करत नरनारी, तेरे दर्शन की दिल धारी ॥ २ ॥ क्रोधादिक चारों जीते, जिनराज तेज आदीतेजी । शशि शीतल चंद्र उजारी, तेरे दर्शन की दिलधारी ॥ ३ ॥ संसार सागर से तारो, सुदृष्टि करके निहारोजी । और कोई न दीसे धारी तेरे दर्शन की दिलधारी ॥ ४ ॥ इंद्राणयां नाटक नाचे इंद्र नयन जोई जोई राचेजी । जय २ कार करत नरनारी, तेरे दर्शन की दिलधारी ॥ ५ ॥ सुरङ्ग का राग उचारे, जिनके कंठ घोर गुञ्जारेजी । तिहां होत सदा झणकारी, तेरे दर्शन की दिलधारी ॥ ६ ॥ हीरालाल शरणागत आयो, जिनराज से ध्यान लगायोजी । दीनानाथ दया कर तारी, तेरे दर्शन की दिलधारी ॥ ७ ॥

देशी पूर्ववत् ।

सुणो सुणो सूत्र की वानी, मतकरना खैंचा तानी ॥ टेर ॥ द्वादश अङ्ग फरमायो, केवल ज्ञानी मुख से गायोजी । जांके आगम अगोचर जानी ॥ १ ॥ यह आदि पुरुष से आई, परिचंत परियंत से गाईजी । निराग निरोग अघानी ॥ २ ॥ भवसागर तिरण नौका, बडी मुश्किल से मिला मौकाजी । आत्म बोध की ज्योति जगानी ॥ ३ ॥ कोई गावे वेद पुराना ज्योतिष शास्त्र में जानाजी । अष्टाङ्ग निमित्त ले ठानी ॥ ४ ॥

कई भाषा भेद को जाने, देश देशों का स्वांग पहचानेजी। अष्टादश लिपि के लिहानी ॥ ५ ॥ बनवास फिरे रहे नंगा, क्रिया कष्ट करें एक टंगाजी। फल फूल पीवे पानी ॥ ६ ॥ सम्यक्त्व धर्म सुधारे, महाव्रत अणु व्रतधारेजी। यही मं जाने की निशानी ॥ ७ ॥ हीरालाल आनंदमग्न आला, प्रभू चरणों से चित झालाजी। पुष्कल पुन्यांचि वृद्धि करानी ॥ ८ ॥

देशी पूर्ववत् ।

ऐसा संत जगत में कहना, मुख बोले अमृत बैना ॥ टेर ॥ जो पंच महाव्रत पाले, इरिया शोध के मार्ग चालेजी। करे छः काया की जयना, ऐसा संत जगत में कहना ॥ १ ॥ जो दोष बयांलिस टाले, आचार अखंडित पालेजी। जिन वाणी के परवीना ॥२॥ जो गुण सत्ताविस धारी, सब त्यागी है गृहनारीजी। भक्ति भाव भजन भज लेना ॥ ३ ॥ धन दौलत माया त्यागी, राव रंक चरण आई लागीजी। नहीं राखे कुत्ता तोता मैना ॥४॥ इनसान को ज्ञान सुनावे, हैवान को दाय नहीं आवेजी। काफिर दिल का है महना ॥५॥ जो ऐसा संत को ध्यावे, वह दोजख में नहीं जावेजी। नहीं पावेगा दुख देहना ॥६॥ जवाहिरलालजी गुरू गुनवंता, जिन मार्ग मांहीं महंताजी। जाके हरदम कदमों में रहना ॥ ७ ॥ हीरालाल ऐसे गुण गावे, सब संतों को शीश नमावेजी। चाले जिनमार्ग के ऐना ॥ ८ ॥

देशी पूर्ववत् ।

माया मत कर मेरी मेरी, क्या संग चलेगी तेरी ॥ टेर ॥ जो चक्रवर्त्ती छत्रधारी, छःखंड की संपति सारीजी । मेल गया न लेगया लेरी ॥ १ ॥ देखो रत्न द्वीप में आया, सागर सेठ रत्न भर लायाजी । बहुवां दिया समुद्र में गेरी ॥ २ ॥ कर कर कूड़ कपटाई, मांड मली निपट ठगाईजी । तेरा आतम कहे तूं वैरी ॥ ३ ॥ तूं देश प्रदेशां दौडे, भेली कर कर गठडी जोडेजी । जोड़ जोड़ हुवा कई ढेरी ॥ ४ ॥ नहीं शुकृत काम लगावे, माया देख देख हुलसावेजी । कंठी डोरा गले में पहरी ॥ ५ ॥ भूख तृषा दुःख सबही सहिया, नीच नरों की संग में रहियाजी । मूंजी करत पूंजी यों भेली ॥ ६ ॥ सुपात्र को दान न दीधा, कुपात्र को पोषण कीधाजी । ऐसे खर्ची माया बहुतेरी ॥ ७ ॥ हीरालाल कहे सुण लीजे, माया जाल जँजाल क्यों कीजेजी । जद मिले मुक्ति नहीं देरी ॥ ८ ॥

देशी पूर्ववत् ।

मुसाफिर चलने की है त्यारी, तेरी गठरी की कर रख-वारी ॥टेर॥ तूं इस नगरी में आया, तूंने क्या माल कमायाजी । मां हिसाब लेना मुरारी, तेरी गठरी की कर रखवारी ॥ १ ॥ तुम जो माल भर लीना, वह दाखिल घर को कीनाजी । तेरी आत्मा का उपकारी ॥ २ ॥ कई मुनियों से माल कमाया, रस्ते

के मांही लुटवायाजी। ऐसी जान रखो होशियारी ॥ ३ ॥ दृष्टि और मन वश कीजे, ध्याना रूढ थई इम लीजे। भरो अखूट खजाना भारी ॥ ४ ॥ सुमेरू शिखर के नांईजी सरल स्वभाव चढाईजी। जब होसी मुक्ति तुम्हारी ॥ ५ ॥ लिये व्रत को निर्मल पालो, शुद्ध मार्ग ढूंढ कर चालोजी। क्रोधादिक करो परिहारी ॥ ६ ॥ सुमति को घर बुलाना, कुमति को दूर हरानाजी। भव भ्रम मिटाना तुम्हारी ॥७॥ नर भव का लाभ कमाना, पद केवल ज्ञानी का पानाजी। हीरालाल कहे सुविचारी ॥ ८ ॥

स्तवनः--राग ठूमरी।

तारण तिरण जिनराज जगत के काज सुधारण ध्याते हैं रे॥टेर
च्यार गति को दुःख निवारण, तूंही जिनराज कहलाते हैं रे ॥ १ ॥ एकेंद्रियादिक कष्ट निवारो लख चौरासी गिनाते हैं रे ॥ २ ॥ लोका लोक बिलोकन काजे, ज्ञान अनंत ये चाहते हैं रे ॥ ३ ॥ अज्ञान पढल दुनिया में छागो, सूर्य सम दिखलाते हैं रे ॥ ४ ॥ क्रोधादिक शत्रु है योद्धा, इन को दूर हटाते हैं रे ॥ ५ ॥ ज्ञान के सागर गुण के आगर, नर नारी तेरे गुण गाते हैं रे ॥ ६ ॥ कहे हीरालाल टल जावे काल, जो प्रभु तुम को ध्याते हैं रे ॥ ७ ॥

देशी पूर्ववत्।

क्या कहना कभी कर्म गति, भुगते सबही जोगी जतीरे

॥ टेर ॥ वर्धमान स्वामी वंदो सिरनामी, सहे परिसह तीन भवन पतिरे ॥ १ ॥ राजन के राजा कृष्ण महाराजा, उनकी कहा भई देखो गतिरे ॥ २ ॥ गज सुखमाला सही तन झाला, तत् क्षण पायो मोक्ष गतिरे ॥ ३ ॥ सीता सती ने सत्य जो राख्यो, तो पिण कैसी आण खतीरे ॥ ४ ॥ हरिश्चंद्र राजा परदेश सिधारे, बेचदी राणी प्राण पतिरे ॥५॥ बड़े बड़े भूपति साधू और सती कर्म विटपणा पाया अतिरे ॥६॥ कहे हीरालाल टलजाता है काल, शत्रु को जीतो जब भागो मतीरे ॥७॥

देशी पूर्ववत् ।

कहां डोलत अभिमानी गुमानी, तेरा सिर पर काल निशानीरे ॥ टेर ॥ चउ गति भटकत पट नर अटकत, जैसे बैल वहे घानीरे ॥ १ ॥ तन धन जोवन छीजत छिन छिन, जैसे चपला चमकानीरे ॥ २ ॥ पलक में पलटे जोवन ढलके जैसा पूर चढे पानीरे ॥ ३ ॥ मात अरु तात भ्रात अरु सज्जन, जैसा वाट वटाऊनीरे॥४॥ कहे हीरालाल दयाल मयाल, पावत अमृत जिन वानीरे ॥५॥

अलपज्ञ मनुष्यों का मुनिराज से आके पूंछना ।

देशी पूर्ववत् ।

कहो मुनिजी हाल तुम्हारा, कहां रहना कहां ठिकाना टेर ॥ टेर ॥ कहां से आये कहां जावोगे, कहो कछु माल कमा-

ना है रे ॥ १ ॥ कौन वतन है खास तुम्हारा, जो तुम को वहां पर जाना है रे ॥ २ ॥ कहो कछु खाना कहो कछु पीना, कहो कछु लेना बिछौना है रे ॥ ३ ॥ काम चाकरी कहो कछु हमको, आज तो मेल मिलाना है रे ॥ ४ ॥ कहे हीरालाल पूंछे इम हाल, कहो अब उनको क्या कहना है रे ॥ ५ ॥

पूंछने वाले को मुनि उत्तर देते हैं।

देशी पूर्ववत्।

हांजी मुसाफिर थांरे हमारे, रहने का वही ठिकाना है रे। ॥ टेर ॥ पश्चिम से आये अगम को जाना, तकदीर सङ्ग ले आना है रे ॥ १ ॥ खास वतन है हमारा पुरका, ये दुनियाँ सराय कहलाना है रे ॥ २ ॥ खाना गमका पीना भजन का, दमका किया बिछोना है रे ॥ ३ ॥ शील संतोष दया मुनि वृत्ति, येही लाभ कमाना है रे ॥ ४ ॥ सराय सरकारी रहना रात को, हीरालाल ये गाया गाना है रे ॥ ५ ॥

स्तवन—जसोदा मैया अब ना चराऊं तेरी गैया।

अचलादे मैय्या शान्ति करन तेरा जैय्या ॥ टेर ॥ स्वार्थ सिद्ध थकी चवि आया, गजपुर भूप घरैय्या। सकल शान्ति करी लोकमें, मिरगी मार नसैय्या ॥ १ ॥ इन्द्रादिक मिल महोत्सव कीनों, मेरू शिखर लेजैया। छपन्न कुंवारी मंगल गावे, थइ थइ नृत्य करैय्या ॥ २ ॥ राज लीला सुख भोग भोगवे,

षट खंड आण धरैय्या । बरसी दान दियो जगनायक, सब को सुख करैय्या ॥ ३ ॥ सहस्र पुरुष सङ्ग सञ्यम लीनो, केवल ज्ञान जगैया । चौतीस अतिशय पैंतीस वाणी, अरिहंत पदके धरैया ॥ ४ ॥ हीरालाल कर जोड़ विनवे, चरणों शीस नमैया । प्रातः समय जे नित्यप्रति उठी, शान्ति को जाप जपैया ॥५॥

देशी पूर्ववत् ।

वलदेव के भैय्या कहां २ रमत कन्हैया ॥ टेर ॥ दधियां बेचन चली गूजरी, सिरपर धरी गगरियां । ठाडे नन्द किशोर देखते, पकड़ लेत है बैयां ॥ १ ॥ बांकी पगडियां हाथ लकड़ियां, बगुवा चाल चलैयां । जमना धोरे गैयाँ चरावत, वंशरी राग बजैय्या ॥ २ ॥ नन्द के ललुआ मोहन गारा, ठाडे कदम की छैय्या । काली दहमें कूद पड़े है, नागणी नाग जगैय्या ॥ ३ ॥ गोवर्धन पर्वत लेत उठाई, सहस्र नागकी सैय्या । नन्द महर की रानी कहाई, नाम यशोदा मैय्या ॥ ४ ॥ सोलह वर्ष रहे गोकुल में मामा कंस हतैय्या । हीरालाल कहे ऐसे गिरधारी, पूर्व पुन्य जगैय्या ॥ ५ ॥

देशी पूर्ववत् ।

तूं सुण मेरे जैय्या, काम को दनत सुनैय्या ॥ टेर ॥ प्राण से प्यारा हमको लागे, एकही मात के जैय्या । किसके कारण भये वैरागी, लालन लीला करैय्या ॥ १ ॥ द्वारापुरि

का राज को लेके, हुकम करो मेरे भैय्या। हाजिर खडा सब हाथी घोडा, भोगोनी भोग भूजैय्या ॥ २ ॥ किसके हाथी किसके घोडे, किसके बहिन और भैय्या। धरा रहे धरणी पर सज्जन, संग नहीं चलत रुपैय्या ॥ ३ ॥ कहां लग कहते कहने वाले, समझत नहीं समजैय्या। हीरालाल कहे मुनि पद धारो, बन बनवास बसैय्या ॥ ४ ॥

देशी पूर्ववत् टेर दूजी रंगत की।

बाईजी म्हारा प्रभुजी पधारया, उतरया बाग में। बंदवाने चालो दर्शन करस्यां, जो होसी भाग में ॥ टेर ॥ दर्शन करल्यो प्रश्न पूंछलो, बाणी सुणलो प्यारी। भांति २ का मुनि देखलो, खुली केसर की क्यारी ॥ १ ॥ इन्द्र इन्द्राणी देवी देवता, मिल २ मंगल गावे। निरख २ नयणा नाथ ने, हिये हर्ष नहीं मावे ॥ २ ॥ तीनलोक में मोहनगारा, प्यारा प्रभुजी लागे। मिरगी मार रोग नहीं आवे, सौ सौ कोसां आगे ॥ ३ ॥ हाथी घोड़ा रथ पालखी, कई गज ऊपर चढिया। वस्त्र आभूषण सोवे भारी, पहरया रत्नां जडिया ॥ ४ ॥ आपां चालो करो वंदना, करो प्रश्न का निरणां। हीरालाल कहे हर्ष धरीने, भेटो जिनवर चरणां ॥ ५ ॥

देशी पूर्ववत्।

म्हारी बंदना झेलो, मैं छू श्राविका सुन्दर शहर की।

टेर ॥ बांध मुखपति करूं सामायिक, राखूं पुंजणी आछी। प्रतिक्रमणों वेविरियां करती, तो मैं श्राविका सांची ॥ १ ॥ वास व्रत मैं करूं तपस्या, नहीं करणी में काची। पक्खी पर्व का पौषध करती, तो मैं श्राविका सांची ॥ २ ॥ भाणे बैठी भाऊं भावना, सांची शियल में राची। स्थानक जाऊं वेगी उठने, तो मैं श्राविका सांची ॥ ३ ॥ देवगुरू की कीनी ओलखना, लीनी जांची जांची। हिंसा धर्म के संग न जाऊं, तो मैं श्राविका सांची ॥ ४ ॥ हीरालाल कहे एहवी बाई, भणि गुणि पुस्तक वांची। विनयवंत गुणवंत गिणावे, सो ही श्राविका सांची ॥ ५ ॥

स्तवनः—राग धन्याश्री में।

कठिन धर्म मोक्ष मार्ग की चाल, आस पास विषय वन झाडी। बिच २ पंथी रयो हाल ॥ टेर ॥ क्रोधादिक चोर जोर है भारी। लूटत सब को माल। सिंहादिक सांपद भरया अति वन में, इत उत देत है फाल ॥ १ ॥ यो जुग काचो देख मन राचो, सांचो जिम जंजाल। धरत पांव धरण को देखी, कुपंथ फंटक टाल ॥ २ ॥ राग द्वेष सर्प है मोटा, विषधर विषम वि-याल। पाप रूप पृथ्वी पर डोले, कूकत फिर है सियाल ॥ ३ ॥ नटवो नृत्य डोर पतंग की, रहत सदा एक बाल। दुश्मण दाव चोर नहीं लागे, ज्ञान गुप्त की ढाल ॥ ४ ॥ रहत सदा

एक ध्यान लगाई, कंपत नहीं कोई काल । अचला अचल अटल मेरू जिम, मानत सुख दयाल ॥ ५ ॥ कहे हीरालाल चाल मत चूको, यह है धर्म की पाल । रत्न मुनि के रत्नचिन्तामणि शिष्य श्री जवाहरलाल ॥ ६ ॥

देशी पूर्ववत् ।

अब मेरी नैयां लगावोपार, कुपंथ वाटघाट है विषम । इनको दूर निवार ॥ टेर ॥ लालच नीर गंभीर भरयो है, नहीं कोई पाया पार । डूब गया कई योगी भोगी, जो नर होत गंवार ॥ १ ॥ मान मगर मदमच्छ मोटा, डोलत जग मझार । तृष्णा तरंग विषय विहंगा, पंखी भ्रमत अपार ॥ २ ॥ चोर लुटेरा ठगत ठगारा ठगत सबही संसार । काम क्रोध मोह मतवाला, यांको दूर निवार ॥ ३ ॥ भवसागर भव जल से भरियो, यामें कौन आधार । नाम लेत जिनराज तुम्हारो, विपति विडारन हार ॥ ४ ॥ दयाकी नाव सत्यको चाटू, नीर जापक अणगार । संयम माल भरयो अति सुन्दर, लीनो आपणी लार ॥ ५ ॥ शिवपुर मार्ग होत चढाई, लगत नहीं देर दार । हीरालाल सुख होत अनंतो, जन्म मरण दुःख टार ॥ ६ ॥

देशी पूर्ववत् ।

मिलत अब मुक्ति पुरीको राज, लियो अब राज सुधारयो काम । रही सब जन्मकी लाज ॥ टेर ॥ मन वच काया दृढ़

ठहरायो, निज घर आयो आज । अजपा जाप जपत आतम को, लीन भयो महाराज ॥ १ ॥ ज्ञान दर्शन चारित्र ये तीनो साधन सगलो काज । शैल अचल गुणस्थानके ऊपर, चढ़गयो महाराज ॥ २ ॥ शुक्ल ध्यान अपूर्व करणी, मिलिया दोनों ही साज़ । रवि प्रकाश आकाश जिम केवल, घातक कर्म गया भाज ॥ ३ ॥ दुविधा दुःख दूर हटायो, जन्म मरण की दाज । चौदह ही लोक ऊपर महाराजा, रहन सदा ही गाज ॥ ४ ॥ आवागमन दूर निवारो, माया अभ्यन्तर बाज । अवधि सुख अचल अनन्तो, होत सदा श्रीकाज ॥ ५ ॥ चार चौक रोक कर्मा को, या है धर्म की जहाज । हीरालाल पद उत्तम ऊंचो प्रगट भयो महाराज ॥ ६ ॥

देशी पूर्ववत् ।

अरे हां तृष्णा मोह्लियो संसार, राजा बुड्ढा युवक बाला । नहीं कोई पाया पार ॥ टेर ॥ राज करता राजा मोहा षटखंड का सिरदार । अकस्मात् बात नहीं भूले, न तजे टेक लगार ॥ १ ॥ कामण गारी है तूं नारी, मोह लिया भरतार । कर कर प्रीति तृप्ति नहीं पाई, तूं तरुणी त्रीकार ॥ २ ॥ तृष्णा तरंगनि है अति गहनी, इन्द्रादिक दीना हार । पार लहे पुरुषोत्तम कोई, कठिन अग्नि की झार ॥ ३ ॥ तृष्णा बेली सब जग फैली, फल लागे खग भार । खानेवाला जो पनवाला,

उनको डाले मार ॥ ४ ॥ त्याग तृष्णा सज्जन प्यारे, जो धन भरिया भंडार । अपने मन को वश कर लीनो, तुरंग चढ्यो ज्यूं सवार ॥ ५ ॥ हमको चाह है एकही उनकी, जो है वह निराकार । हीरालाल कहे ध्यान लगायो, ज्यूं चरखे को तार ॥ ६ ॥

देशी पूर्ववत् ।

अब हम आये समझ के द्वार, सतगुरू ध्यान ज्ञान सुणायो । ताते भये सिरदार ॥ टेर ॥ भरम की टाटी भरम की चाटी, आक की खाटिया निसार । ऐसे संसार भये भ्रमणा में, न कोई पाया पार ॥ १ ॥ नटखटे हुए इकट्ठे, उनकी रची है जार । डाले फंद औरन को डोले, भरिया कपट भंडार ॥२॥ मन मतवाला करम का ज्ञाला, दूर किया जंजार । वे गुरुज्ञानी हुवे निर्वानी, तारण तिरण अणगार ॥ ३ ॥ ज्ञान दीपक जोया घट अन्दर, मेट दिया अंधार । त्रिकुट घाट पार उतारे, किया हमको होशियार ॥ ४ ॥ हीरालाल भज माला नामकी, जो कोई होवे होशियार । राग धन्याश्री धुनि लगाई, सुणता हर्ष अपार ॥ ५ ॥

स्तवनः—देशी तो से लागी नजरियां हमारीरे ।

मोक्ष मार्ग में दिलको लगाया करो ॥ टेर ॥ विपत्ति विडारन दुर्गति टारन, ऐसे मार्ग में मन को लगाया करो ॥१॥

छःकाया का जीव जगत में, उनकी हत्या से दिलको हटाया करो ॥ २ ॥ पांचों ही इन्द्रि को वश में करना, ऐसी बातों को दिल में जमाया करो ॥ ३ ॥ अष्ट कर्म का दुर्जन जीतो, तपस्या की तेग चलाया करो ॥ ४ ॥ ज्ञानकी अग्नि कषाय को इन्धन, ऐसी धूनी को हरदम धकाया करो ॥५॥ कहे हीरालाल जो चाहवो तुम मुक्ति, कर्मों को दूर भगाया करो ॥ ६ ॥

देशी पूर्ववत् ।

आतम ज्ञान में ध्यान लगावोरे ॥ टेर ॥ पुद्गल रचना झूंठी जाणो, यामें नाहक ललचावोरे ॥ १ ॥ माया जाल की ममता मेटो, शरण गुरू की आओरे ॥ २ ॥ अन्तर घट को मैल निवारो, कषाय की लाय बुझावोरे ॥ ३ ॥ मात पिता और घर की नारी, इन सूं प्रीत घटावोरे ॥ ४ ॥ जैसे कमल रहे जल ऊपर, निर्लेप रहो समभावोरे ॥ ५ ॥ दृढ आसन कर ध्यान लगावो, दृढ मन एक मिलावोरे ॥ ६ ॥ पद अरूपी से लो को लगाकर, घातक कर्म उड़ावोरे ॥७॥ जोग निरूधन करी आतम को, आप वही सुख पावोरे ॥ ८ ॥ हीरालाल पाये सीधे शिवपुर को, उपट मार्ग मत जावोरे ॥ ९ ॥

देशी पूर्ववत् ।

ज्ञान ध्यान में धुनि लगाईरे ॥ टेर ॥ आतमा जीती इन्द्रियां रोकी, मोक्ष मार्ग मन लाईरे ॥ १ ॥ चार कषाय को चूर्ण कीनो, उपषम रस पियो जाईरे ॥ २ ॥ तज संसार धार

सञ्यम को, वैराग्य रह्यो घट छाईरे ॥ ३ ॥ भोग रोग सम जाण अरु त्यागो, तृष्णा तुरंत घटाईरे ॥ ४ ॥ कोई एक वंदे कोई एक निंदे, समभाव सदा सुखदाईरे ॥ ५ ॥ रुदन करे कोई मङ्गल गावे, हर्ष शोक कछु नांहीरे ॥ ६ ॥ शैल अचल जल मीन मगन है, त्यों आपही लो लगाईरे ॥ ७ ॥ कहे हीरालाल आराम अनन्तो, कबहूं विपति नहीं पाईरे ॥ ८ ॥

देशी पूर्ववत् ।

क्या गति होनी है तुम्हारी रे ॥ टेर ॥ हिंसा करके जन्म गमायो, मांस भके तके नारीरे ॥ १ ॥ करे लपराया पर की निंदा, जिव्हा वहे तरवारीरे ॥ २ ॥ चोरी करते जुआ खेले, मदिरा पी अक्ल बिगारीरे ॥ ३ ॥ जोर जुल्म कर जीव सतावे, कौन सुने पुकारीरे ॥ ४ ॥ सत् पुरुषों को नजर जो देखा, बोले अवगुण भारीरे ॥ ५ ॥ दया धर्म को नाम नहीं भावे, उम्र गई यों सारीरे ॥ ६ ॥ काल बाज झपट ले जासी, ज्यों मूसा पर मंजारीरे ॥ ७ ॥ कहे हीरालाल ऐसे अधर्मी, गोता खावे गति चारीरे ॥ ८ ॥

देशी पूर्ववत् !

आछी गति ये होगी तुम्हारी रे ॥ टेर ॥ मनुष्य जन्म पाई करणी कीधी, भक्ति भाव दिलधारीरे ॥ १ ॥ साधु संतों की सेवा करके, आत्मा अपनी तारीरे ॥ २ ॥ दान दया दोही

खड्ग जो लियो हाथ में, धारे ध्यानकी ढाल । ज्ञान कटारी बांध कमर के, पाखंडी पैमाल । जय विजय कर जिन मार्ग में, इम गावे हीरालाल ॥ ६ ॥

देशी पूर्ववत् ।

उतारो भवसागरसे पार. अर्ज मैं करता वारम्वार ॥टेर॥

अर्ज सुणजो नाथ हमारी, करुणा निधि करतार । जन्ममरण का दुःख मिटावो, विपति दूर निवार । इस भवसागर मांयनेस, म्हारे आप तणो आधार ॥ १ ॥ महावीरं महाराज आप को, ध्यान धरूं नित ऊठ । पूरो मनोरथ म्हारा मनका, लक्ष्मी लाभ अखूट । चाडी चुगली दुष्ट दुर्जन को, दूर करो अपूठ ॥ २ ॥ और देव जग में घणासेरे, म्हारे न आवे दाय । अंतर्यामी तूं मुझ साहिब, भय भंजन कहवाय । संकट में स्मरण जो करता विघ्न विलाई जाय ॥ ३ ॥ गुरु मोटा गुणवंत कहीजे, जवाहिर-लालजी अणगार । श्री रत्नचंदजी महाराज आपका, ज्येष्ठ शिष्य श्रेयकार । आनन्द करते संगमेंसरे, चढतो तेज दीदार ॥४॥ उगणीसे इकोतेरसरे, ठांणा पांच वखाणो । पाटण सेती आवियास म्हाके, कोटा कानी जाणो । देर गांव के बीच मेंसरे हीरालाल गाया गाणो ॥ ५ ॥
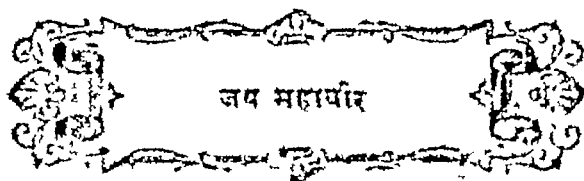
* ओ३म् *

धर्मशाला अर्क सुख सागर

सन्तान और जन्मों का सुधार।

॥ प्रार्थना ॥

यह प्रार्थना हमारी लेलो शरण तुम्हारी।
दो ध्यान लीला धारी चित्त से अवध बिहारी ॥
चरणों में सर निवाकर मन तन से तुम को धाकर।
तेरी शरण में आकर चाहूं अवध बिहारी ॥
मैं करके तेरा सेवन करता हूं ये निवेदन।
सब आपका है तन, मन, मेरा अवध बिहारी ॥
तू दीन बन्धु मेरा मैं दास प्रभू तेरा।
अब कृपा हो सवेरा मुझ पर अवध बिहारी ॥
अपराधों का मैं आदी याद आप की भुलादी।
और आपने क्षमा की फिर भी अवध बिहारी ॥
पापों ने जब सताया तो तू ही याद आया।
तूने ही आ बचाया दुःख से अवध बिहारी ॥

मांगूं न ताज शाही ना फौज ना सिपाही ।
दर की तेरे गदाई चाहूं अवध बिहारी ॥
ना चाहूं माल दौलत ना मुल्क ना हुकूमत ।
ना मांगूं माया हशमत तुझ से अवध बिहारी ॥
ना मांगूं कुछ किसी से जो देदो तुम खुशी से ।
आनन्द हूं उसी से मैं तो अवध बिहारी ॥
भिक्षा है यही मेरी कृपा दया हो तेरी ।
यह प्रार्थना है मेरी तुम से अवध बिहारी ॥
जब यह शरीर बदले तेरा न ध्यान बदले ।
एक तू न मुझ से बदले उस दम अवध बिहारी ॥
छूटे जो प्राण मेरा छूटे न नाम तेरा ।
छूटे न ज्ञान तेरा मुझ से अवध बिहारी ॥
यह प्रार्थना है तुझ से एक तू न छूटे मुझ से ।
चाहता हूं यह मैं तुझ से गो छूटे नब्ज़ नाड़ी ॥
इच्छा है येही मेरी छवि सामने हो तेरी ।
करना न इस में देरी उस दम अवध बिहारी ॥
हो मोह भी तुम्हारा हो ध्यान भी तुम्हारा ।
हो नाम भी तुम्हारा लब पर अवध बिहारी ॥
जब प्राण मेरा जावे कोई न याद आवे ।
एक तू ही तू सुहावे मुझ को अवध बिहारी ॥
तुम सामने हो मेरे न मोड़ मन को फेरे ।

चारो भुजा हो तेरे सन्मुख अवध विहारी ॥
तुझ में ही जा समाऊं ना लौट कर यहां आऊं ।
चरणों को तेरे पाऊं हरदम अवध बिहारी ॥
जो फिर जनम भी पाऊं तो प्रभू ऐसा चाहूं ।
उस देश में मैं आऊं सुनलो अवध विहारी ॥
विप्र और गऊ का सेवन, पर नार, धन हो त्यागन ।
तेरी कथा वो पूजन नित हो जहां बिहारी ॥
माता पिता पति का आदर गुरू जती का ।
पूजन हो इन सभी का जिस देश में विहारी ॥
राजा हो सब का स्वामी परजा भी हो सलामी ।
दोनों हो सत के हामी जिस देश में बिहारी ॥
उस घर जनम हो मेरा जिस में हो बास तेरा ।
कहना है यही मेरा तुम से अवध विहारी ॥
"परतापसिंह" यह कब तक हो आना जाना तब तक ।
या करना चाहे जब तक कृपा अवध बिहारी ।

भूमिका !

ऐ कलम जल्दी न कर मन को जरा यहां थामना ।
प्रेम और कृपा दया का होता है यहां सामना ॥
जो कलम किस्मत ने लिक्खा वो कभी मिटता नहीं ।
कोशिश और तदबीर का खत यहां कभी खिंचता नहीं ॥

जो उसे लिखना था उस ने लिख दिया है एक क़लम।
नुक्तेचीनी चल नहीं सकती है उसमें एक कदम ॥
न जबर और जेर का न पेश का रक्खा ख़याल।
मोलवी पंडित व ईसाई दख़ल दे क्या मजाल ॥
यां क़ुरान और वेदों का अंजील का लब बन्द है।
दो ज़ुबां क्या कर सकें ऐसा किया परबन्ध है ॥
बन्द कर दोनों ज़ुबां मन में सुमर कर राम को।
ध्यान देकर सुन जरा आया हूं मैं जिस काम को ॥
यह बड़ा गहरा है सागर जिस को करना पार है।
तेरी नैया कृपा का ही मुझ को एक आधार है ॥
अपनी कृपा की बल्ली से नैया मेरी दे उतार।
होता है तेरे सहारे से यह मेरा बेड़ा पार ॥
रस्सा पुण्य का भी नहीं न विद्या की कोई बल्ली।
ना लियाक़त तरने की आपड़ी मुशकिल बड़ी ॥
जो लिखा पेशानी में वो पेश आना है जरूर।
तू टिकावे मन मेरा तो टिक सके है दिल जरूर ॥
जैसे पानी है बरसता होता है बादल का नाम।
ऐसे ही करदे क़लम तू काम अपना मेरा नाम ॥
आगे पीछे पल व पल जिस की नहीं हमको ख़बर।
जो है अपना काम जाती उस में हैं हम बे ख़बर ॥
बरा बनायत फ़र्ज़ है जो लिख रहा लिखना नहीं।

महकता भी पास में है महकता दिखता नहीं ॥
ज़र्रे २ में चमक है पर चमक दिखती नहीं ।
ये कली माया की ऐसी खिल रही खिलती नहीं ॥
प्रेम के चश्मे से दिखता आंख से दिखता नहीं ।
तप व भक्ती चुप हैं यहां वोह प्रेम बिन मिलता नहीं ।
हम उसे दें गाली हर दम वो दे नियामत बे हिसाब ।
और हमारे क्रोध पर भी शान्ती का दे जवाब ।
ब्राह्मण और ईसा मुहम्मद की ज़ुबां यां बन्द हैं ।
इस कली के खिलवे का अब हो रहा प्रबन्ध है ॥
राम के दरबार में चलने का करले इन्तजाम ।
शाम से होती है सुबह सुबह से होती है शाम ॥
गंगा न्हाना होतो चल क्यों वृथा गोते खा रहा ।
मुंह पे कालम चढ़ता है जिस कुन्ड में तू न्हा रहा ॥
लाभ फल कुछ भी नहीं क्यो अपना सर कटवा रहा ।
काले कागज होते हैं जिस रास्ते तू जा रहा ॥
सूद क्या पा सकता है बे सूद जब तू लिख रहा ।
जब असल को खो रहा तो सूद जाता दिख रहा ॥
जल्दी चलना चाहिये क्यों कर रहा है हेर फेर ।
छोड़ दे दुनियां के धन्दे छोड़ दे सब मेर तेर ॥
लोभ मोह को छोड़ दे दे क्रोध के मारग को छोड़ ।
त्याग दे मन से घमण्ड ले तमकनत से मुंह को मोड़ ॥

साफ़ करले मन को अपने जिससे सीधी चाल हो।
टेढ़ा जो भी चलता है उस का शकिस्ता हाल हो ॥
जैसे स्याही चूसता है चूसले वैर और विरोध।
जैसे हर दम थूकता है थूकदे मन का किरोध ॥
रोशनाई प्रेम से रख रास्ते की देख भाल।
जो भलाई अपनी चाहे ले जबान अपनी संभाल ॥
यादगारी या तुझे अपनी अगर हो छोड़नी।
है मुनासिब सब से पहले बद जुबानी छोड़नी ॥
धर्मशाला या कुआ या बाग जो हो छोड़ना।
ना बने शाहो मरम्मत ख्याल होगा छोड़ना ॥
धर्मशाला और कुएं में भी ज़रूरत धन की है।
वह धर्मशाला बना जिसमें ज़रूरत मन की है ॥
बाग यहां लगता नहीं पानी का मिलना है महाल।
और बनाने और लगाने में भी चहिये बहुत साल ॥
यहां है रेगिस्तान धरती सोचना है यह भी बात।
यहां ज़मीं का मिलना है मुश्किल अदर ही है यह भी बात ॥
पानी तो खारी या मीठा इतना मिलना है महाल।
खर्चा भी ज्यादा लगे और खर्च भी होते है साल ॥
और नहीं अपना भरोसा कब तलक है यहां मुक़ाम।
बहुत कम फ़ुरसत है यहां और पूरा करना है यह काम ॥
मन की और धरती की मिट्टत बनसके यह कैसे काम।

है समय भी बहुत थोड़ा चिन्ता है यह सुबह शाम ॥
और धर्मशाला बनानी है मुनासिब इस जगह ।
इस रियासत में धर्मशाला ही पाई हर जगह ॥
और यू. पी. में भी बनना यह बड़ा दुश्वार है ।
धन की किल्लत ने भी मुझको कर रखा लाचार है ॥
धरती कागज़ की हो जिसकी और कलम में मार हो ।
ना तो चाहिये ईन्ट चूना जल्द जो तय्यार हो ॥
ना लगें मज़दूर इसमें ना ढुलाई का हो काम ।
और ना चाहिये गारा इसमें ना लिपाई का हो काम ॥
तोला भर पानी से ज़ियादा न लगे कर ऐसा काम ।
आठ दिन तू खर्च करदे दो दो घ टे सुबह शाम ।
धर्म्म के चश्मे का पानी होज मन में हो भरा ॥
ग्यान की हो रोशनी और प्रेम का हो नल लगा ।
कम ये सब होने न पावें ध्यान यह रखना बड़ा ।
जिस समय भी हो जरूरत दे बटन मन का दबा ॥
न हो निगरां की जरूरत न कुऐ और कुन्ड की ।
न मरम्मत की जरूरत ऐसे हो परबन्ध की ॥
होते हैं बत्तीस घन्टे कुछ खरच ज्यादा नहीं ।
कितनी सस्ती बनती है फिर क्यों तू आमादा नहीं ॥
तोल ले इस को तराजू ध्यान में तू जांच ले ।
अपने मन में पहले रख कर नक्शा भी तू नापले ॥

गाम का चरचा हो जिस में धर्म्म का प्रचार हो ।
मन सिवा कुछ भी न चाहिये और न कुछ दरकार हो ॥
काफी है तखमीना ये बन जायगा सब इस में काम ।
न तो होगा खर्च ज्यादा जो समा हो सुबुह श्याम ॥
जो गृहस्थ के काम से तेरा समा बेकार है ।
उस समय के भी लगाने में तुझे क्यों आर है
जाके मन गङ्गा पे फौरन नकशाए लेआया उतार ।
ले कलम बस में है तेरे करना इसका वार पार ॥
प्रेम मन ने इसको खैंचा जो है एक नकशा नवीस ।
बाल्मीकि नकशे से यह मिल रहा है बिसों बीस ॥
ऐ क़लम तू पहले इस नकशे को ले मन पर जमा ।
फिर इसी नकशे की मूजिब धर्म्म शाला दे बना ॥
आसा पासा भी मैं तुझ को इस का देता हूं लिखा ।
जहां बनेगी धर्म्मशाला वो भी दूं मौका बता ॥
इसके पूरब को है लक्ष्मण और उत्तर राम हैं ।
इसके पच्छिम को है सीता जिनके बस में राम हैं ॥
इसके दक्खन को है गंगा और सुरग का रास्ता ।
और जवानी इसकी आराजी नहीं मैं जानता ॥
और जो पट्टा है तो मौरूसी है मेरे नाम का ।
और मतु लिक्खा हूआ है इसमें मेरे राम का ॥
न फ़सी बेसी है इसमें जमता है पट्टा तमाम ।

मोहर इस पर राम की है दस्तख़त हैं सीता राम ॥
हो चुकी गद बन्दी पहले जांच भी होली तमाम ।
और इज़ाजत लेने का बाकी नहीं है इसमें काम ॥
न कोई खांचा है इसमें है जमीं चौरस तमाम ।
और है अधिकार सब को ठहरे इसमें ख़ास आम ॥
ऊपले ग़ज पट्टे में जो ५२१ हैं ।
जितने इस के ऊपले हैं उतनी इस की ईस हैं ॥
हो चुका तसदीक दफ्तर राम से पट्टा तमाम ।
प्रेम की रोकड़ के अन्दर हैं जमा सब इसके दाम ॥
और श्री हनुमान जी की मार्फत यह हैं जमा ।
इस में कुछ सन्देह नहीं मन रख तू अब खातिर जमा ॥
और रामायन के अन्दर है नकल इस की तमाम ।
बस रुज़ दफतर उसीको कहते हैं सब खास आम ॥
जा पुरानी नीव पर ये धर्मशाला दे बना ।
प्रेम और कृपा से तू यह काम मेरा दे बना ॥
इस धर्मशाला के इतने नियम और प्रबंध हैं ।
ये खुली रहती है हर दम और न ताले बन्द हैं ॥
जो प्रेमी आके ठहरें मिलती है इसमें जगह ।
जो यहां मन टिकना चाहे टिक सके है हर जगह ॥
मन के टिकने के लिये यहां कुछ नहीं तादाद है ।
जब तलक मन टिकना चाहे उस क़दर आज़ाद है ॥

प्रेम का चश्मा है इसमें पोथो का यह प्रबंध है।
जो कोई अज्ञानी आवे उसको दिखती बन्द है॥
जब धर्मशाला तेरी तैयार ये हो जायगी।
जो स्याही मुंह पे है वह सारी ही धुल जायगी॥
ऐ कलम तू कृपा करके मन को ले अब अपने थाम।
और इसी तखमीने में तैयार कर दे मेरा काम॥
फिर कलम ने कृपा करके धर्मशाला दी बना।
देख ले तैयार है तू अपने मन को दे दिखा॥
धर्मशाला बन गई परताप सिंह मन को टिका।
मन को ठहरा कर जरा आनन्द इसका दे दिखा।
जब ये देखेगा इसे ये आप ही टिक जायगा।
ठहरना होगा इसे आनन्द जब ये पायेगा॥
कुंजी इसकी रहती तो परताप सिंह के पास है।
नोहर कसबे में रहे जो प्रेमियों का दास है॥
डाकखाना खास नोहर राज बीकानेर है।
यां से ही पहुंच जावे कुछ न होती देर है॥
जाये मसकन है मंडावर और जिला बिजनौर है।
और यू. पी. भर में जो कसबा बड़ा मशहूर है॥
पेशा है कानून पेशा जो कि है मशहूर आम।
और गुजारे का हमारे पेशा वकालत है तमाम॥
है लकब भारमी पंसारी मेरा मशहूर आम।

और हिकमत का भी पुशतों से चला आता है काम ॥
ये भी हिकमत है कोई जो फिर लिया मौरूसी काम ।
मोक्ष और संतान के रोगों का जो सूझा है काम ॥
औषधिशाला है कागज की लिखा है जिसपै ओ३म् ।
ये अर्क मिलता है सबको चाहे हो वह कोई कौम ॥
और बड़े छोटे की भी होती रिआयत यहां नहीं ।
चाहे हो भारत का वासी चाहे रहता हो कहीं॥
असली देशी अर्क है जो देश में ही है खिचा ।
और नया भी है नहीं पहले से ये जावे पिया ॥
अर्क सुखसागर यह मैंने कर लिया तैयार है ।
रामसागर से निकाला जिसका सारा सार है ॥
एक तोला जल के अन्दर बन जा एक शीशी दवा ।
खोता उन मर्जों को है जिनको बतावें ला दवा ॥
खुश्क है पानी नहीं है नाम इसका अर्क है ।
शीशी कागज में ये बन्द है देखो कैसा अर्क है ॥
एक कतरे प्रेम से बनता है ये सन्तान धार ।
दो अगर कतरे पड़ें कुल रोगों का करदे सिधार ॥
और जो डालो तीन कतरे मोक्ष की बन जाय धार ।
लाभ देता ये सदा है ये नहीं करता बिगाड़ ॥
और हर एक सूरत में हैं खूराक दो एक सुबह शाम ।
इस से कम होना न चाहें जान लें ये खासो आम ॥

पीने की तरकीब उसके सुन लो तुम सब ध्यान से।
ये पिया जाता है या तो आंख से या कान से॥
मुंह से पीने की जरूरत इस अरक के है नहीं।
प्रेम के बरतन विना अपना असर ये दे नहीं॥
दिल सताना दिल दुखाना धोके का परहेज है।
गुड मिरच का और खटाई का नहीं परहेज है॥
गैरनारी और परधन यह भी करते हैं विगाड़।
और चाहो जो भी खाओ हो नहीं उससे विगाड॥
छानने और घोटने की भी जरूरत है नहीं।
ना पकाना ना भिगोना खट्टा कड़ुआ भी नहीं॥
बद परहेजी हो नहीं परहेज पूरा काम है।
बद परहेजी से दवा करती नहीं आराम है॥
वैद्य हकीमों के बुलाने की जरूरत है नहीं।
गरमी सरदी और यह बरसात भी देखे नहीं॥
गरम है न सर्द है है मोतदिल उसका असर।
खुश्की भी होती नहीं रखता है रग रग को ये तर
और भी जो रोग हों उनको भी देता है निकाल।
बद परहेजी की मगर जो रखता है पूरी संभाल॥
न पुराना होने से जाता है कुछ इसका असर।
जैसे है ऊपर बताया वैसे ही पीना मगर॥
कम से कम मिकदार पीने की तो दी तुमको बता।

और जितना भी पियो गुन उतना ये देगा दिखा ॥
बुद्धि से उसको जो पियेगा उसको पूरा देगा गुन ।
मोक्ष और संतान दुख के लग रहे हों चाहे घुन ॥
देख लें जो पीते उसको उनपै भी डाले असर ।
जो पिये नित प्रेम से उसका तो है फिर क्या जिकर ॥
आज कल तो ज्यादा ये ही हो रहे हैं दो ही रोग ।
कोई है सन्तान रोगी मोक्ष का है सबको रोग ॥
ये तपेदिक से है ज्यादा मोक्ष का जो रोग है ।
इसकी परवा कुछ नहीं जो सब से भारी रोग है ॥
रोग तो सन्तान का भी आज कल कुछ कम नहीं ।
जो पुराना मर्ज है उसका किसी को गम नहीं ॥
और बढ़ता है मरज जिसका किसी को गम नहीं ।
बे दवा के रोग तो होता कोई भी कम नहीं ॥
ज्यादे इन मर्जों से ही सब हो रहे मजबूर हैं ।
क्या फकीर और बदशाह सब हो रहे रंजूर हैं ॥
ऐसे रोगों के लिये यह अर्क एक अकसीर है ।
ऐसा लगता है ये जा कर जैसे लगता तीर है ॥
एक शीशी इसकी लाखों पुश्त तक देती है काम ।
दाम इसके कुछ नहीं हैं बहुत थोड़े इसके दाम ॥
यह अरक है आजमाया कुछ नहीं इसमें शुबा ।
दे दूंगा कीमत मैं वापिस जो फ़रक इसमें हुआ ॥

प्रेम विधि से जो पियेगा इस अर्क को सुबह व शाम ।
उसके तन में ऐसे रोगों का नहीं होने का नाम ॥
आज कल की औषधी जो हो रही बदनाम हैं ।
इस अर्क ने मेरे तो पाये सदा ही नाम हैं ॥
राम की कृपा से अब ये हो गया तैयार है ।
है नहीं मामूली सारे अर्कों का ये सार है ॥
आजमालें वह मंगाकर जिनको ऐसे हों मरज ।
उसके गुन बरनन करूं मेरा भी है इतना फरज ॥
मन टिकाकर प्रेम से जो उस को पीता जायगा ।
इसमें कुछ सन्देह नहीं जन्मों का दुख कट जायगा ॥
राम ही मालिक हैं इसके दास उनका दास है ।
उनकी आज्ञा कृपा से यह अर्क मेरे पास है ॥
राम सागर वेद पुस्तक से मिले इसका पता ।
जिस तरह मुझको मिला वह देता हूं नीचे बता ॥
राम की कृपा के भबके से यह खींचा है अरक ।
यह असल देशी अरक है कुछ नहीं इस में फरक ॥
क्योंकि भबके तप व जप के पास मेरे थे नहीं ।
पुन की भी भट्ठी नहीं और प्रेम का जल है नहीं ॥
जो चाहें इसको मंगावें और आजमावें बार बार ।
फर्क कुछ होगा नहीं जो लिख दिया है एक बार ॥
वान रखनी गुन दिखाना राम के ही हाथ है ।

उसका ही यह अर्क है मालिक भी वह ही न थ है ॥
जिस तरह से यह बना है हाल वह वरनन करूं ।
गुन दिखाये जिसको उस ने नाम वह परगट करूं ॥
जैसे मैंने जाना उसको वह भी देता हूं बता ।
यह हुआ परगट जहा से लिखता हूं उसका पता ॥
थोड़ी सी इसकी खता कहता हूं सुन लो ध्यान से ।
जिस ये बूटी का अरक है पाई किस पहचान से ॥
जब कि दशरथ को मरज संतान का पैदा हुआ ।
मोक्ष के दुख से तो जन्मों से ही था घेरा हुआ ॥
आया जब उस पर बुढापा घिर गया चिन्ता के बीच ।
गृहस्थ के बिरवों को कोशिश जल से डाला उसने सीच ॥
बहुत की मेहनत मिला लेकिन न उसको कोई फल ।
बाग में उसके न आया नाम को भी एक फल ॥
तीनों बागीचों में उसको फल न आया जब नजर ।
और कोशिश जल का होता ही न पाया जब असर ॥
फिर तो अरपन कर दिया सब अपना उसने तन व मन।
बाग बागीचे तपस्या ढूढ डाले बन के बन ॥
जो वशिष्ट जी वैद्य थे उनकी भी सब करली दवा ।
हाथ उनके भी न आई राजा के दुख की दवा ॥
राजा दशरथ वेदों का फिर बहुत मुतलाशी रहा ।
यज्ञ, हवन, जप, तप व पुन्य सारे जतन करता रहा ॥

हो गया व्याकुल अती जब कुछ नहीं पाया नफा।
जब मरज बढने लगा तो फिकर भी बढने लगा ॥
फिर सुना उसने शृंगी रिख बडे हैं वेद दां।
पर किसी हिकमत से वह बुलवा लिये जावें यहां ॥
और शृंगी रिख ने वैद्यक पढ़ी है जिस जगह।
और दवा मेरे मरज की मिल सके है उस जगह ॥
उनको ही मेरे मरज की हो तो कुछ पहचान हो।
यह उचित है उनके ही बुलवाने का सामान हो ॥
और वह वैद्यक जप व तप की पुस्तकें भी लायें साथ ॥
उनकी कृपा और दया से यह दवा आजाय हाथ ॥
करके राजा ने यतन उनको वहां बुलवा लिया।
अपने मरजों का जबानी हाल कुल समझा दिया ॥
पहिले देखा जीभ को तो है जुबां राजा के साफ।
कब्ज अधरम और हिंसा से है उसका पेट साफ ॥
फिर नली भी ज्ञान की उसने लगाई जा बजा।
मरज दो दिखते हैं इसको यह लगा उनको पता ॥
खून पुन की जब कमी उसने नहीं पाई जरा।
हो गया विश्वास कुछ शायद कि हो जावे भला ॥
जब करम की नाडी देखी दे दिया उसने जवाब।
देखते ही नाडी के यह होगये फिर ला जवाब ॥
वैद्य ने जाना है के राजा को हैं दो निश्चय मरज।

एक इन में है नया अरु एक पुराना है मरज़ ॥
सोचने मन में लगे मैं क्या करूँ इसका इलाज ।
आज वैद्यक मेरी मुझको कर रही है ला इलाज ॥
एक पुराना भी है इतना जन्मों से आवे चला ।
मुझको तो सन्देह है जो हो सके इसका भला ॥
जो मरज़ इतना पुराना हो सके है क्या इलाज ।
दूसरे को कर्म वैद्यक लिख रहा है ला इलाज ॥
तप व जप की पुस्तकें भी देखलीं मैंने तमाम ।
ध्यान के चश्मे से देखा पर न बनता पाया काम ॥
रामचन्द्र वैद्य ने लिखी न जब इसकी दवा ।
कैसा ही यहां वैद्य आवे कर सके है क्या दवा ॥
पड गये हैरत के कुण्ड में जब न पाया कुछ इलाज ।
होके बे बस वैद्य बोले राम ही रक्खेंगे लाज ॥
सोचने मन में लगे और बहुत सी की देख भाल ।
कुछ यतन करना चाहिये बोले तबियत को संभाल ॥
राजा दशरथ से कहा अब क्या कहूं मैं तेरा हाल ।
मुझको तो तेरे मरज़ हैं जान के तेरे बवाल ॥
ज्ञान के चश्मों से देखा पर नहीं देखा भला ।
और न तेरी नाड़ी का मुझको मिला कोई पता ॥
हां, यत्न का करना बताना वैद्य का ही काम है ।
लाभ होगा या न होगा जानता वह राम है ॥

अपनी पुस्तक तप से लिख कर नुसखा एक देता हूं मैं।
हां, यतन करना चाहिये ये ही बस कहता हूं मैं ॥
कोशिश और तद्बीर करना अपना राजा काम है।
और भला होता है उसका जिसको चाहता राम है ॥
नाड़ी तेरी देखली इसमें तो बिलकुल दम नहीं।
और ज्यादा क्या कहूं बीमारी तेरी कम नहीं ॥
जितना भी बनता है मुझसे कर रहा हूं सब उपाय।
जो परालब्ध का मरज़ है चलता है यहां कब उपाय ॥
साफ तो यह बात है जो मैंने तुझको दी बता।
जब नहीं मंजूर उसको क्या करूं फिर मैं बता ॥
लिख के नुसखा पुत्र यज्ञ का दे दिया दशरथ के हाथ।
यह दवा मिलनी कठिन है साफ़ कहदी उससे बात ॥
औषधी के नाम का तो मिल गया मुझको पता।
यह मिलेगी किस जगह इसका नहीं मुझको पता ॥
औषधी का ही बताना राजा मेरा काम है।
ढूंढना और फिर के लाना यह तो तेरा काम है ॥
इस दवा को ढूंढला जो चाहता तू आराम है।
कोशिश और तद्बीर, मेहनत से ही बनता काम है ॥
वेद पुस्तक पास हैं कुछ औषधी-शाला नहीं।
और कभी ऐसे मरीज़ों से पड़ा पाला नहीं ॥
यह दवा जो हाथ आई काट दूंगा तेरे रोग।

मरज़ भी तेरे कटें और लाभ पावें और लोग ॥
होता पर उपकार है और होता है अपना भला ।
लाभ जब औरों को पहुंचे क्यों न हो अपना भला ॥
मैं भी ढूंढूं ढूंढ तू भी वो न मेरा काम है ।
तेरे दुख भी कटते हैं और होता मेरा नाम है ॥
मुझ को भी तो चिन्ता है जाती जो मेरी लाज है ।
अब तलक ईश्वर ने रक्खी जा रही जो आज है ॥
फिर लगाया ध्यान अपना औषधी के खोज में ।
भक्तों के आधीन जो हैं बोल उठे सुन मौज में ॥
क्षीर सागर पर वह बूंटी जिसकी है तुझ को तलाश ।
हाथ आयेगी तेरे क्यों हो रहा इतना उदास ॥
थे मुनी जो ध्यान में पहुंचा उसी बूंटी पै हाथ ।
बूंटी मिलते ही चले फिर राम इसके साथ साथ ॥
रामचन्दर ने विचारा भक्त को कष्ट हो रहा ।
तप व जप सारी कमाई जिसके बदले खो रहा ॥
एक मरज़ का तो मिटाना कुछ नहीं दुश्वार है ।
जो मरज़ सन्तान है वह कर रहा लाचार है ॥
मोक्ष तो एक क्षण में देदूं यह तो मेरे हाथ है ।
और परालब्ध का लिखा मिटना न मेरे हाथ है ॥
भक्त की जो बात जावे यह न छोटी बात है ।
ज़ाहिरा दिखती है छोटी पर बड़ी यह बात है ।

भक्तों की मंशा का भी है पूरा करना मेरा काम।
तूही अब औतार ले मिट जायं दुख जिससे तमाम॥
जो न ले अवतार तू यह मरज़ कटने के नहीं।
और शृंगीऋषि भक्त भी हठ से हटने के नहीं॥
होगया स्वीकार जब औतार का लेना उन्हें।
लाभ, यश, सुख, दे दिये जितने कि देने थे जिन्हें॥
जब दवा यह राजा दशरथ को मुनी से आई हाथ।
तो शफ़ा और असर भी दोनों आये साथ साथ॥
मोक्ष और सन्तान ने राजा के घर को भर दिया।
जो मरज़ थे ला दवा आ उनसे अच्छा कर दिया॥
क्षीर सागर के किनारे पर मिली है यह दवा।
जिसने दशरथ के दुखों को आके जड़ से खो दिया॥
और ऋषि वाल्मीक जी ने इसको यहां पर बो दिया।
इन मरीज़ो की भी चिन्ता को सदा को खो दिया॥
फिर ऋषी वाल्मीक जी ने पक्के तप से खींच कर।
कर दिया भारत में पैदा कृपा जल से सींच कर॥
और खरल भक्ती में भी यह वर्षों तक घोटा गया।
जिसने देखा या पिया उसका भला होता गया॥
देखो तुलसीदास जी ने भी उठाया इससे फल।
इसका ही गुण है जो मिलते आज तक हैं उनको फल॥
और श्री हनुमान जी ने भी मजा इसका लिया।

प्रेम बरतन मन में लेकर जिस घड़ी इसको पिया ॥
एक दफे पीने से ही केवट का दुख जाता रहा ।
जिसने देखा या सुना आराम वह पाता रहा ॥
देखने या सुनने से ही जिसके कट जाते हैं रोग ।
कैसा अच्छा अर्क है पीते नहीं क्यों इसको लोग ॥
अब ऋषी वाल्मीक जी के भक्ति बागीचे चला ।
उनकी कृपा राम की कृपा से डाला है बना ॥
इसकी कीमत देखलो और गुण को भी करलो विचार।
अब तो मैंने इस अर्क की शीशी की हैं दो हज़ार ॥
जिसको हिन्दी का पसन्द हो अर्क हिंदी लें मंगा ।
और जिन्हें उर्दू पसन्द हो वह उर्दू का ही लें मंगा ॥
अर्क सुख सागर को मेरे जो कोई लेगा मंगा ।
इसके गुण और लाभ को वह आप ही देगा बता ॥
प्रेम मन के पत्र से जो भी मँगावेगा इसे ।
प्रेम रूपी डाक से बस वही पायेगा इसे ॥
जो लिखी कीमत है इसकी और खर्चा डाक है ।
इस लिये लिखना पड़ा अब सीधा रस्ता डाक है ॥
जो भी हैं विद्यार्थी यह खर्चा उनको माफ है ।
जिसमें मेरे दस्तखत हों अर्क वोही साफ है ॥
या कोई निर्धन हो ऐसा जो न दे सकता हो दाम ।
उससे मैं लूंगा नहीं कीमत या खर्चे का भी नाम ॥

उनको हो खर्चे की माफी जो मंगावें बार बार ।
दश अगर शीशी से कम लें तो पड़े खर्चे का वार ॥
और इस शीशी के हम राह धर्म-शाला मुफत है ।
और जो कीमत है इस की गुण के आगे मुफत है ॥
आप की कृपा से प्रभू बन गया यह मेरा काम ।
लाभ भी पहुंचेगा मुझको मुफ्त में पाऊंगा नाम ॥
तेरा ही यह अर्क है और तूही यश दिलवायगा।
जोकि पीता जायगा वह तेरे ही गुन गायगा ॥
बन्द कर "प्रतापसिंह" तखमीने से बढ़ता है काम ।
अर्क यह कम हो न जावे देखता रह सुबह शाम ॥

॥ श्रीहरिः ॥

अर्क सुखसागर ।

.0.

एक अवध के राज में गङ्गा का नामी घाट था ।
रहता था वहां एक केवट और कबीला साथ था ॥
वह प्रेमी था बड़ा और येही उसका नाम था ।
पार करना गङ्गा से नित खास उसका काम था ॥
पार पड़ती थी जहां तक खेवा कर देता था पार ।
एक ही खेवे में था गंगा को करता वार पार ॥
और इसी पेशे पै थी परिवार की उसकी गुज़र ।
जल के अन्दर रहने से काला बदन था सर बसर ॥
गो बदन काला था उसका पर नहीं काला था मन ।
काम के अन्दर भी अपने करता रहता था भजन ॥
हृदय में सन्तोष था शुद्ध जीव का था ख्याल ।
सादी ही तबियत थी उसकी सादी ही चलता था चाल ॥
अपने मालिक का हमेशा रखता था मन में ख्याल ।
अपने केवट की सदा रखता था केवट देख भाल ॥
जैसे वे जल मछली तड़फे येही था मल्लाह का हाल ।
मोक्ष के मछ फांसने को प्रेम का रखता था जाल ॥

कटवा भक्ती का सदा गंगा पै रखता था लगा।
नाके से किस्मत के उसके मछन वो आकर फंसा॥
जन्म जन्मों से यह नैया मोक्ष को था खेरहा।
भवके सागर की कटारें मन पै अपने सह रहा॥
जब न उतरा पार केवट हो रहा बे चैन था।
पर इसी चिन्ता के अन्दर पाता दुख दिन रैन था॥
राम की सुन सुन कथा होता था मन में बेकरार।
और अवध से भी मंगाता था खबर वह बार बार॥
वह हैं राजा मैं रियाया यह भी करता था विचार।
पार कुछ जाती न थी बैठा रहा यह मन को मार॥
एक दिन होकर दुखी करने लगा ऐसा विचार।
तारता औरोंको हूं और मैं नहीं होता हूं पार॥
ऋषियों मुनियों वेदों का भी यह वचन पाया सदा।
जो उतारे औरों को वह भी उतरता है सदा॥
जो भला औरों का चाहे उसका होता है भला।
बात जब यह सच्च है फिर क्यों न मैं उतरा भला॥
है बड़ा अचरज मुझी को हो रही क्यों देर है।
क्यों कि हैं वह न्याय कारी वहां नहीं अन्धेर है॥
जब कि ऋषियों मुनियों वेदों का भी है येही वचन।
झूठ इसको कैसे जानूं झूठ होना है कठिन॥
कर्मों का दिखता है घाटा वहां कोई घाटा नहीं।

बे समय अरु कर्म के कोई भी फल पाता नहीं ॥
चिन्ता कुण्ड में गोता मारा तब हुआ उसको विचार ।
जब समा आवेगा तेरा निश्चय होगा बेड़ा पार ॥
यह हुआ जब निश्चय उसको दब गई मन की पटार ।
बस भरोसे राम पर मल्लाह बैठा मन को मार ॥
मन को समाझने लगा चिन्ता है तेरी राम को ।
भूलता कोई भी है बतलादे अपने काम को ॥
चिन्ता जिस की कर रहा तेरा नहीं वह काम है ।
पार भव-सागर से करना राम का ही काम है ॥
जिसका होता काम है उसको ही रहती है फिकर ।
अपने जाती काम से रहना न तू भी बे फिकर ॥
खौफ रख मालिक का अपने उसका करता रह भजन ।
पार भव-सागर से होना फिर नहीं कुछ भी कठिन ॥
जैसे तू चाहता है नैया को करूँ इक पल में पार ।
ऐसे ही चाहता है केवट अपना खेवा छिन में पार ॥
जितना तुझको फिक्र है उसमे भी ज्यादा है उसे ।
वह भी यह है जानता यह काम करना है तुझे ॥
काम किसका चिन्ता किसको यह तो ले मन में विचार ।
बस भरोसे राम पर रह बेड़ा तेरा होगा पार ॥
सुनके बदली उसकी तबियत फिक्र कुछ मनका घटा ।
एक अजुध्या की तरफ उठती हुई दीखी घटा ॥

कुछ है काली कुछ है धौली इस तरफ को आरही।
प्रेम रूपी खेतों के ऊपर बरसना वह चारही ॥
शक्ति की बिजली भी उसमें एक चमकती आरही।
मन के अपने भाव से काले पै पड़ना चारही ॥
काला जो मल्लाह था, थी इसके ऊपर आरही।
राम काले पास देखे इससे कुछ चकरा गई ॥
पास मिल जाता है जब फिर कौन जाता दूर है।
घर की तो आधी भी भली यह भी मसल मशहूर है ॥
इस लिये कुछ देर को वह आते २ रुक गई।
जो प्रेमी खेत देखे उनके ऊपर झुक गई ॥
ऋषियों मुनियों के जा बागों में लगा दी उसने देर।
और लिया मल्लाह के भी प्रेम ने जा उसको घेर ॥
इससे कस उन बादलों का इस तरफ आने लगा।
हलकी हलकी मोक्ष बूंदें यहां वह बरसाने लगा ॥
देह मनुष्य मल्लाह का जो था चमन सूखा पड़ा।
इस हवा के लगने से होने लगा इक दम हरा ॥
अरु कली उम्मीद मन केवट की भी खिलने लगी।
जब से कृपा की हवा आकर यहां चलने लगी ॥
वे कली होकर चमन की मिट गई सब बेकली।
फूल गुंचे बन गये अरु बन गये गुंचे कली ॥
प्रेम बुलबुल चहक कर उस फूल पर माइल हुई।

मोक्ष की खुशबू के लेने के लिये सायल हुई ॥
जा गिरी चरणों में बुलबुल प्रेम इक दम चहक कर।
उसने पिंजरे मन में अपने ले लिया कुछ महक कर॥
और इसी पिंजरे के अन्दर कर लिया बुलबुल को बन्द।
और खिजां सय्याद का भी कर दिया फिर हाथ बन्द॥
सारे विरवे इस चमन के फूल फल लाने लगे।
इस चमन में अब खिजां के बदले गुल आने लगे॥
तप व पुन्य मल्लाह की जो आगई अच्छी घड़ी।
मोक्ष और कृपा क्षमा की लग गई आकर झड़ी॥
इतने में गङ्गा पै सीता राम लक्षमन आगये।
यही थे कृपा के बादल मोक्ष जल बरसा रहे॥
थी इन्हीं दोनों के अन्दर शक्ति बिजली की झलक।
और इन्हीं दोनों गुलों में मोक्ष जाती थी महक॥
सीप केवट एक क़तरे जल को लेना चारही।
यहां दया कृपा घटा थी मोक्ष जल बरसा रही॥
एक क़तरा मोक्ष का पड़ते ही लब बन्द होगया।
प्यास जो केवट को थी सब उसका प्रबन्ध होगया॥
प्रेम की शक्ती जो थी तो सच्चा मोती बन गया।
धर्म जौहरी राम भी सच्चों में उसको चुन गया॥
जब लड़ी तक़दीर केवट होगया वह माला माल।
भगती तप ने हार मानी प्रेम की जो देखी चाल॥

बिंध गया जब प्रेम में कीमत का हो फिर क्या शुमार।
देख कर पद ढंग केवट सो चला है वार वार॥
जबखिला उम्मीद गुंचा ध्यान बुलबुल चहक कर।
ध्यान वह देने लगा कुछ मोक्ष गुल की महक पर॥
मुर्ग भी और मोर भी बेहोश थे यह देख कर।
सर्व आज़ादी पै कुवरी तब यूं बोली बैठ कर॥
कू कू मेरी का नहीं बस प्रेम रस के सामने।
जब तपस्या पुन्य व भक्ती चुप हैं इस के सामने॥
देखते ही रङ्ग यह केवट पै रङ्ग जमने लगा।
मोक्ष के सागर के ऊपर ध्यान वह धरने लगा॥
जब कमल सीनैन देखी की भुजाओं पर नज़र।
चौड़ी छाती होगई वह चौड़ी छाती देख कर॥
छाती पड़ती ही न थी यहां था बड़ी छाती का काम।
होगया निश्चय यह उसको अपना केवट है यह राम॥
निश्चय केवट है यही जिन कृपा की है आन कर।
सोचने मन में लगा केवट को केवट जान कर॥
जो भी चाहे कर सके है इसका इतना लम्बा हाथ।
सोचना इस बात का क्या करना चाहिये इसके साथ॥
वह बड़े कर्मों से मौका आया है अब तेरे हाथ।
खो न देना इसे केवट शर्त है यह इसके साथ॥
गो जतन करने हैं करले वरना फिर पछतायगा।

खो दिया जो इस को जनमों में नहीं तू पायगा ॥
घाट पर भी इसके तुझको जाना एक दिन है ज़रूर।
फिर मिले या न मिले अब आगया तेरे हजूर ॥
यह है राजा तू रियाया कैसे इससे भेट हो।
प्रेम है जो पास तेरे कर नज़र जो भेट हो ॥
यह तेरा स्वामी तू सेवक किस लिये करता है डर।
शेर से भी शेर का बच्चा कहीं करता है डर ॥
और बुरा भी कह दे ये तो हो नहीं इससे बुरा।
इस समय को चूक जाना जितना केवट है बुरा ॥
और बुरा भी कह दे तो तुझ पर पड़ेगी तो नज़र।
एक नज़र के पड़ने से जायगा भव-सागर उतर ॥
मन को अपने थाम कर वे खौफ़ रह और वे खतर।
काम बन जायगा तेरा रख न कुछ मन में फिकर ॥
जो तुझे यह पार कर दे तू भी इसको पार कर।
जब तलक ऐसा न हो तू बैठ जा हठ मार कर ॥
जो भी होगा देखा जागा इतना क्यों करता है डर।
पहिले सुन इसकी जरा पहिले न कर अपना जिकर ॥
और बिला कारण के इसका यहां नहीं आना हुआ।
वे गरज़ कोई न आवे यह तो है माना हुआ ॥
जल्दी क्यों करता है तू यह भेद खुद खुलने को है।
इसके मन के गुंचे को भी देख क्या खिलने को है ॥

गुंचे मुख दरिया से पहिले देख क्या खिलता है गुल।
जिस लिये कृपा करी मालूम हो जायगा कुल॥
है समा पाकर के इस का इस तरफ आना हुआ।
यह भी तुझ को जानता है यह तेरा जाना हुआ॥
कृपा सागर मुख से धारा अज्ञा फिर यह वह गई।
देर इसमें कर न केवट नय्या जल्दी ला अभी॥
धारा अज्ञा वहते ही यहां धारा भव-सागर चढ़ी।
वहां उसे जल्दी थी अपनी यहां इसे जल्दी पड़ी॥
मागते ही नैया के केवट को नैया की पड़ी।
इसको जल्दी उसको जल्दी आगई मुशिकल बड़ी॥
जितनी जल्दी थी उसे उससे भी ज्यादा थी इसे।
पार जाना था उसे और पार ही जाना था इसे॥
एक ज़रूरत एक रङ्ग दोनों का एक ही काम था।
यह प्रेमी वह दयालु दोनों का यह नाम था॥
वह उतरना पहिले चावे चाहता है मल्लाह यही।
वह कहे मुझको है जल्दी कहता है मल्लाह यही॥
नैया अब तक क्यों न आई कहता है मल्लाह यही।
वह कहे फिर कौन लावे कहता है मल्लाह यही॥
नैया बिन उतरूँ मैं कैसे कहता है मल्लाह यही।
और बतला किस पे जाऊं कहता है मल्लाह यही॥
घाट पर तेरे खड़ा हूं कहता है मल्लाह यही।

पार करना तुझको होगा कहता है मल्लाह यही ॥
सब को तूही तारता है कहता है मल्लाह यही ।
मुझको क्यों नहीं तारता है कहता है मल्लाह यही ॥
हो रही तकलीफ मुझको कहता है मल्लाह यही ।
तेरा है मुझको भरोसा कहता है मल्लाह यही ॥
देर में क्या लाभ तुझको कहता है मल्लाह यही ।
तारने में लाभ यश है कहता है मल्लाह यही ॥
और बतला कौन केवट कहता है मल्लाह यही ।
टाल फिर क्यों कर रहा है कहता है मल्लाह यही ॥
बैठा तू क्यों बे फिकर है कहता है मल्लाह यही ।
छोड़दे यह काम केवट कहता है मल्लाह यही ॥
जब वह नैया मागता यह भी था नैया मांगता ।
जैसे वह केवट समझता यह भी केवट जानता ॥
जब बुलाते थे इसे तो आया आया था जवाब ।
ना तो नैया लाता था ना साफ़ देता था जवाब ॥
कहे था लाया जी लाया टाल सी था कर रहा ।
जान कर अपना दयालु फिर न इसको डर रहा ॥
देख कर यह टाल केवट उसको समझाने लगे ।
बात जो थी टाल की बस उसको वह पाने लगे ॥
टाल क्यों करता है तू सब चाल हूं पहचानता ।
क्या नहीं डर मेरा तुझको क्या नहीं तू जानता ॥

योगी तुझको जान कर है आज्ञा मेरी टालता ।
अपने से क्या मुझको केवट घाट है तू जानता ॥
जैसे वन जाने से मेरे मित्र वैरी बन रहे ।
क्या तेरे ऊपर भी केवट आ असर वह पड़ रहे ॥
जो अवध का राव हाता देर तू करता नहीं ।
सारा कारन है यही जो मुझ से तू डरता नहीं ॥
दुनियां में चलता है केवट भय व प्रीती से ही काम ।
पहिले भी तो मैं ही था और अब भी तो हूं वही राम ॥
कर रहा आर्थीनी हूं तुझ को नहीं परवाह ज़रा ।
जानता सब कुछ हूं मैं जो मन में तेरे है भरा ॥
है नदी और नाव का संजोग जो लाया यहां ।
वरना मन में सोच केवट मैं कहां और तू कहां ॥
प्रेम देता है दवा जो मन पै उठती है पटार ।
क्या कहूं बे वश हूं केवट प्रेम से जावे न पार ॥
साफ़ क्यों कहता नहीं क्यों कर रहा है हेर फेर ।
कह दे क्या लेना है मुझ से हो रही है मुझको देर ॥
दूंगा मेहनत तेरी केवट गो मेरा है खाली हाथ ।
काम करते २ मेहनत लेते जाना साथ साथ ॥
रखता मेहनत में नहीं जो काम करता है मेरा ।
तुझको भी विश्वास है कुछ टिकता भी है मन तेरा ॥
पहिले चाहे पहिले ले फिर भी तो देनी है मुझे ।

मुझको है विश्वास तेरा गो न हो मेरा तुझे ॥
साफ कहनी चाहिये जो मन में तेरे बात है।
टाल जो तू कर रहा है इसमें कोई बात है ॥
और बिला कारण के देरी तो कभी होती नहीं।
बात रखनी मन के अन्दर भी भली होती नहीं ॥
जो छिपाता बात है उसकी नहीं रहती है बात।
और छिपानी भी जभी पड़ती है जब कुछ होवे है बात ॥
सुन के केवट ने कहा मेरा नहीं ऐसा है ख्याल।
आपकी आज्ञा को टालू यह नहीं मेरी मज़ाल ॥
चाहे सर पर ताज हो या हो फकीराना लिबास।
दास तो हर रङ्ग में है आपके चरनों का दास ॥
कौनसी है चूक मेरी जो हुआ ऐसा ख्याल।
मैं तो समझूं आपकी और आप समझें मेरी टाल ॥
आपको है अपनी जल्दी मुझको भी है आपकी।
आपको उम्मीद मेरी मुझको भी है आपकी ॥
आपको है जितनी जल्दी उससे ज्यादा है मुझे।
आपको जितना फिकर है उससे ज्यादा है मुझे ॥
अब रही देरी न इसमें मेरी है देरी कोई।
आप की सब देर है मेरी नहीं देरी कोई ॥
और जो समझे चाल हो तो चाल कुछ मेरी नहीं।
और जो जानो टालना तो टाल भी मेरी नहीं ॥

अब रहा विश्वास लाखों जन्म से विश्वास है ।
और न मेहनत लेनी देनी और न मेरे पास है ॥
आपको मेरा भरोसा मुझको भी है आपका ।
बाप को बेटे का जैसे बेटे को हो बाप का ॥
आप मेरे घाट पर मैं भी तुम्हारे घाट पर ।
आप मेरी बाट पर मैं भी तुम्हारी बाट पर ॥
मुझको जल्दी जिसकी है वह आपका ही काम है ।
पार भव-सागर से करना सोचो किसका काम है ॥
काम भी और नाम भी मेरा नहीं है आपका ।
नैया भी है आपकी और दास भी है आपका ॥
अब विचारो मुझको जल्दी अपनी है या आपकी ।
देर इसमें जो भी हो वह मेरी है या आपकी ॥
या इसी पर फैसला हो या जमें इस बात पर ।
पहिले उतरे है वही जो पहिले आया घाट पर ॥
आप गर आये हों पहिले आप जां पहिले उतर ।
मेरे भी तो तारने का आपको ही है फिकर ॥
क्योंकि जो पहिले न उतरा साथ जाऊंगा उतर ।
साथ हैं जब आप मेरे मुझको है फिर क्या फिकर ॥
पहिले तो उतरे है केवट यह सदा की चाल है ।
और सदा मत चाल में चलती नहीं कुछ चाल है ॥
हमको मेरा पहिले है चाहे उतारो बाद में ।

दखल दे सकता नहीं कोई कभी मरजाद में ॥
यह विचारो तुमसे जो मैं पहिले भी जाऊं उतर ।
फिर भी मैं उतरूं न पहिले आप पहिले जां उतर ॥
मुझको जब तक तुम न तारो आप उतर सकते नहीं ।
न्याय की जो बात है तुम उससे हट सकते नहीं ॥
उतरेगा यहां कौन पहिले जानते हो तुम सभी ।
बहुत थोड़ी देर है यह देख लेना तुम अभी ॥
आप की तो टाल है बतला रहे हो मेरी टाल ।
आप कह दें न्याय से अब कर रहा है कौन चाल ॥
दास जब है आपका तो इसको क्या इन्कार है ।
आप की आज्ञा के ऊपर चलने को तय्यार है ॥
दास भी हाजिर है और नैया भी हाजिर है हजूर ।
जिस क़दर देरी हुई उसमें नहीं मेरा कसूर ॥
आपके चरणों की धूरी में सुना अमृत भरा ।
या कोई जादू है इनमें जिससे मेरा मन डरा ॥
छूते ही पत्थर की बन कर स्त्रा बन में उड़ी ।
जो श्रापी गौतम की नारी थी बनी पत्थर पड़ी ॥
जा जनकपुर में धनुष के तोड़ दो टुकड़े किये ।
आप की आज्ञा के पालन में रुका मैं इस लिये ॥
अरु सुबाहू ताड़िका को मार कर तोड़ा घमन्ड ।
कर दिया एक तीर से मारीच के भी बल को बन्द ॥

तीन लोकों का यह बोझा नैया है बोदी मेरी।
इसलिये भव के भँवर में पड़ रही नैया मेरी ॥
मोम पत्थर बनगया फिर काठ का क्या हाल हो।
यहां कुटुम्ब का पालना बेनैया के जनजाल हो ॥
पालना परिवार की इस नैया से करता हूं मैं।
क्या बने क्या जाने इसका इससे बस डरता हूं मैं ॥
जो कमाऊं रोज़ खाऊं यह तो मेरा हाल है।
जैसा मैं हूं ऐसा तो कोई नहीं कङ्गाल है ॥
एक इसी नैया के ज़रिये से मेरा गुजरान है।
जब रही मुझ पर न नैया क्या करे हैरान है ॥
एक यह नैया है प्रभु और कुटुम्ब का साथ है।
और गुज़र भी मेरा सब इस नैया के ही हाथ है ॥
मैं न करता हूं तिज़ारत ना मेरा खेती से काम।
पार जाना फिर के आना जब करूं मिलते हैं दाम ॥
आने जाने की कमाई कर रही हैरान है।
इससे ही काला हूं मैं काली मेरी सन्तान है ॥
जो न मेरा बच्चा जल के आया अब तक पास है।
वह भी तो काला है प्रभू होगया कुल नाश है ॥
आप मालिक हैं मेरे दुख रो रहा हूं आपसे।
और दुखों को अपने बेटा कहता ही है बापसे ॥
बेटे का कहने का है, है बाप के सुनने का काम।

आप जब सुनते हो सबकी मेरी भी सुनलो यह राम ॥
नैया जब जाती है मेरा जिससे होता है गुज़र ।
आप ही बतलाइये हो इससे ज्यादा क्या फिकर ॥
इसलिये मैं जांच पहिले काठ की चाहूं ज़रूर ।
लाऊं कठवा जल उठा जो आप आज्ञा दें हजूर ॥
जांच होने से मैं इसके भव के सागर से तरूं ।
नैया ले आऊं जभी ना देर एक पल की करूं ॥
पार भी होते हैं दोनों, दोनों का बनता है काम ।
मैं भी गङ्गा न्हाता हूं और आप का होता है नाम ॥
आप तो चाहें उतर जां मैं न उतरूं आपबिन ।
नैया उतरेगी नहीं ऐ प्रभू मेरी आपबिन ॥
आप जो कुछ चाह रहे हैं उसको हूं मैं जानता ।
आप मुझको जानते मैं आपको हूं जानता ॥
आपको बेशक है जाना मुझको भी जाना जरूर ।
आपकी मंजिल बड़ी है मुझको भी जाना है दूर ॥
आपके चरनों को जबतक दास धोने का नहीं ।
चाहे मुझपै आप कोपैं मैं चढ़ाने का नहीं ॥
जब तलक सन्देह है मैं नैया लाने का नहीं ।
चरनों को जब तक न धोलूं शक यह जाने का नहीं ॥
जब तलक प्रभू धुलाओगे नहीं मुझसे चरन ।
मैं नहीं छोडूंगा प्रभू आपके पकड़े चरन ॥

मुझको तो है जल्दी ज्यादा आपको जल्दी नहीं ।
आपकी मंशा के आगे मेरी कुछ चलती नहीं ॥
आजतक थी इन्तज़ारी अब नहीं है इन्तज़ार ।
जो भी करना है वह करदे आज प्रभू वारपार ॥
इन्तज़ारी में गुज़र सकते हैं माना लाख साल ।
सामने आने से एक पल का भी करना हो महाल ॥
पानी जब मिल जाय प्यासे से रहा जाता नहीं ।
इसलिये चरनों को पाकर अब हटा जाता नहीं ॥
मैंहूं मछली जलचरन जिसकी कि मुझको प्यास है ।
हट सकूं मैं कैसे प्रभू लगरही जब प्यास है ॥
नैया मेरी आपकी आज्ञा में प्रभू बंधरही ।
देर है बस छोड़ने की आज्ञा को ही तकरही ॥
आप छोड़ें छूट जावे और न कोई देर है ।
नैया की देरी नहीं आज्ञा की प्रभू देर है ॥
जैसे आज्ञा लब पै आकर आपके चकरा रही ।
ऐसे ही चिन्ता के कुण्ड में नैया गोते खारही ॥
आप मुझसे कहरहे अरदास मेरी आपसे ।
आप मुझसे पार हो मैं पार हूं आपसे ॥
प्यास है जिस जलकी मुझको वह तुम्हारे पास है ।
आपके दरबार से मिलने की जिसके आस है ॥
हो रही है देर दोनों को क्यों करते देर हो ।

टालने में टाल हो और फेर में ही फेर हो ॥
है वली आज्ञा की मेरी आज्ञा जल्दी दीजिये ।
आपभी गंगा में नहालें नहाने जल्दी दीजिये ॥
नैया है मझधार में केवट जिसका आगया ।
अब नहीं डूबेगी नैया इसको सहारा पागया ॥
दास जिन चरनों का हूं उनका मुझे अधिकार है ।
आपको इन्कार हो मुझको नहीं इन्कार है ॥
आपको खेना पड़ेगा नैया मेरी को जरूर ।
और क्षमा करने पड़ेंगे जन्म जन्मों के कसूर ॥
जो सहारा रस्से कृपा का मुझे मिल जायगा ।
नैया मेरी पार होगी दास भी तर जायगा ॥
आपका ही है भरोसा आपकी ही आस है ।
ध्यान देकर सुनलें प्रभू जो मेरी अरदास है ॥
आने जाने का जो दुख है यह सहा जाता नहीं ।
क्या कहूं यह दुख है जितना कुछ कहा जाता नहीं ॥
एक दफै का हो तो भरलूं येही रहता है सदा ।
और इसी पेशे के कारन दुख यह पड़ता है सदा ॥
पार जाना चाहती है लेकिन न आने फिरके वार ।
है दुखी जो भरना पड़ता दुख इसको वार वार ॥
आज्ञा पालन करने को नैया मेरी तय्यार है ।
लौटने के दुखसे ही यह होरही लाचार है ॥

एक दफेका ही सफर स्वामी बड़ा दुश्वार है ।
दासकी नैया को तो होता यह बारंबार है ॥
पार उतर जाता हूं मैं और फेर आजाता हूं वार ।
एक दफे होता नहीं होता है यही बार बार ॥
तू मेरा यह दुःख मिटादे जिससे मैं बेचैन हूं ।
और इसी दुःख से तो प्रभू मैं दुखी दिनरैन हूं ॥
नैया पीछे लाऊंगा तू पहिले मुझको पार कर ।
बैठा हूं तेरे भरोसे पर ही मैं हठ मार कर ॥
बापसे हक मांगना बेटे का ना हक हो कभी ।
अपने हक पर बाप से बेटे झगड़ते हैं सभी ॥
आज्ञा से बाहर नहीं हक अपना हूं मैं मांगता ।
आपके चरनों पै हक अपना हूं पूरा जानता ॥
सुन रहे अरदास सेवक सीता मे फरमा रहे ।
मनही मन में मंशा इसका उसको थे समझारहे ॥
यह जनक जो बनने की रखता है सीता आरजू ।
जिनको धोया था जनक ने उनको धोवे देखतू ॥
प्रेम के सागर में सीता यह बड़ा तैराक है ।
भोला भाला दिखता है लेकिन बड़ा चालाक है ॥
इसका जो मतलब है सीता उसको हूं मैं जानता ।
चाल जो यह चल रहा है उसको हूं पहचानता ॥
देख तो सीता है इसकी कितनी छोटीसी बिसात ।

कैसी मीठी चाल है जो कर रही भक्तों को मात ॥
बे रुखी मेरी नहीं रुख मेरा है इसकी तरफ ।
सोचता जो चाल हूं पड़जाती है इसकी तरफ ॥
ज़ाहिरा प्यादे से भी कम देखता हूं इसकी चाल ।
यह नहीं सीधी है सीता यह बड़ी टेढ़ी है चाल ॥
प्रेम से चलता है ऐसा जैसे घोड़े का सवार ।
बादशाह सन्तोष का है कर रहा जिच बारबार ॥
प्रेम और कृपा दया की है यह बाजी लड़रही ।
चाल फर्जी है दयाकी मात के घर पड़रही ॥
ने दया कृपा को कोई सूझती है और चाल ।
मात देगा प्रेम इसको मुझको यह दिखता है हाल ॥
बुर्द भी होनी कठिन है आपड़ी कुछ ऐसी चाल ।
चारों खानों में फंसा आ दिख रहा है ऐसा हाल ॥
अबकी शह में मात है जो घोड़ा मनका आपड़ा ।
है वज़ीर इसका प्रेमी जब जरा आगे बढ़ा ॥
प्रेम प्यादा ऐसे घर था शाहको शह दे गया ।
मैं भी इसको देखकर शशदर में सीता रह गया ॥
मैं हूं रसिया प्रेम का यहां प्रेम की ही चाल है ।
मात होती दिखती है यह दिखता मुझको हाल है ॥
अपना हम पेशा है केवट डर नहीं कुछ मात का ।
पील मन टेढ़ा नहीं अचरज है बस इस बात का ॥

मात मुझको होगई बाजी यह मुझसे पागया।
प्रेम रूपी चाल की बस चाल में मैं आगया॥
जन्मों का है यह खिलाड़ी चल रहा सन्तोष चाल।
हार को भी जीत जाने जीतना इससे महाल॥
मैं भी तो क्षत्री धर्म हूं युद्ध से पीछे क्यों हटूं।
जब लगा मैं खेलने तो मात से मैं क्यों डरूं॥
मात भी यह हो गई और जीत का भी है विचार।
पार मैं भी हो गया जो हो गया यह मुझसे पार॥
चरनों का यह दास मेरे दास का मैं दास हूं।
प्रेम इसके पास है और प्रेम के मैं पास हूं॥
जब चरन इसके हैं सीता क्यों न अब आगे करूं॥
मेरी तो मंशा यही है तुम कहो मैं क्या करूं॥
मैंने तो बतलादिया बतलाओ मंशा आपका।
काम वोही ठीक है जो दोनों की हो रायका॥
और पुरुष का धर्म है ले स्त्री से भी विचार।
जब वह अपनी राय दे ले उसको भी मनमें विचार॥
स्त्रीका है धर्म दे उसको अपनी राय नेक।
सबसे उत्तम है यही हो जायें दोनों राय एक॥
जो पुरुष और स्त्री इस मेल से करते हैं काम।
वही इस संसार में कुछ कर सके हैं नेक काम॥
दो नहीं होते हैं वह जिनका कि हो है एक मन।

जिन का मन है एक सीता उनका हो है एक वचन ॥
जब तलक ऐसा न होगा ऐसा होना है कठिन।
इसमें कुछ संदेह नहीं पहचानता है मन को मन ॥
मेरा है पूरा भरोसा सीता देगी राय नेक।
एक है जब मन हमारा राय भी तो होगी एक ॥
सीता ने सुन कर कहा मैं दासी हूं यह दास है।
प्यासा ही प्यासे को जाने कैसी होती प्यास है ॥
आपके चरनों के जल की मैं भी तो प्यासी रही।
इसलिये मैं जानती हूं प्यास हो कितनी बुरी ॥
ऐसा ही इस को भी दुःख है जैसा था मुझ पर पड़ा।
इसलिये इस दुःख से ज्यादा दुःख नहीं कोई बड़ा ॥
आपकी जो राय बदले किसमें यह सामर्थ है ॥
मंशा मेरी भी यही है इसका येही अर्थ है ॥
राम जो थे चाह रहे सीता थी वोही चाह रही।
जो भी उनके मनमें था सीता थी उसको पारही ॥
चाहते हैं जब राम येही दास का हो पहिले नाम।
सीता को पहिले लिखाया फिर लिखाया अपना नाम ॥
क्यों न केवट पहिले उतरे जब सदा से है यह काम;
हाथ कंगन आरसी क्या लिख के देखो सीता राम ॥
जब चरन धुलवाने की दोनों में होली निश्चय बात।
दोनों से मंजूरी इसकी होगई फिर साथ साथ ॥

कह दिया केवटने केवट ले चरन तय्यार है।
अपना संदेह ले मिटा मुझको नहीं इन्कार है॥
धोका देना मैं नहीं चाहता न मेरा काम है।
ले चरन आगे हैं तेरे जांच तेरा काम है॥
जैसी भी मरजी हो तेरी जो भी चाहे तू वह कर।
देखले तू धोके इनको धोले अपने मन का डर॥
अपने मनको शुद्ध करले मेरा तो है शुद्ध मन।
मैं हूं तेरा तू है मेरा तेरे ही हैं यह चरन॥
जिस का होता काम है चलता उसी से है वह काम।
मैं भी तेरा कर दूंगा और तू भी कर दे मेरा काम॥
पहिले भी करना है और पीछे भी करना काम का।
पहिले पीछे पर झगड़ना होता है किस काम का॥
और न आपस में कमी वेशीका होता है ख्याल।
ऐसी बातों की नहीं आपस में होती देख भाल॥
जो मेरे चरनों के अन्दर कुछ शुभा पैदा हुआ।
इस से मैं प्रसन्न हूं जो कह दिया अच्छा हुआ॥
जैसी तेरी इच्छा हो मुझको नहीं इन्कार है।
जिस तरह चाहे मिटाले राम तो तय्यार है॥
फर्क करना मनके अन्दर मैं कभी चाहता नहीं।
मैले मन को भी मेरा मन वस कभी चाहता नहीं॥
और चरन धोने के मतलब को भी मैं हूं जानता।

जो कि मंशा है तेरा उसको भी हूं पहिचानता ॥
है तेरी इच्छा का भी तो पूरा करना मेरा काम ।
जिस तरह से चाहे करले कह सके क्या तुमको राम ॥
जब वही आज्ञा की धारा कठवा जल लाया उठा ।
चरनों को धोने लगा फिर कुछ नहीं रक्खा उठा ॥
वह चरन धोता था जिनसे पाप होते दूर थे ।
पापों के कीड़ों को गोया यह चरन काफ़ूर थे ॥
पाप जन्मों जन्मों के केवट ने पल में धोलिये ।
राम ने भी हाथ अपने गंगा जी में धोलिये ॥
छूते ही चरनों के नैया निकली जा मझधार से ।
पार छिन में होगई मोह और हविश की धार से ॥
पार भव सागर से होकर सारे भय से छुट गया ।
पार जाना फिर के आना सारा ही दुख मिटगया ॥
चरनों के जल से ही केवट नैया बिन ही तरगया ।
क्या ज़माना क्या थी हालत सारा ही ढंग फिरगया ॥
जिसपै वह कृपा करे वह पार होता है जरूर ।
प्रेम में शक्ती है ऐसी खींचता है मिलज़रूर ॥
प्रेम ने केवट को देखो पार छिन में करदिया ।
कौन आया पार होने पार किसको करदिया ॥
लहर थी गंगा के मन पर यहां दया लहरा रही ।
वह अभी मांगे है नैया इसकी नैया जारही ॥

फेर तो मल्लाह भी नैया को ले आया वहीं ।
और बिठा कर तीनों को वह ले चला बोला नहीं ॥
जब उतर पहिले गया तो पीछे क्या इन्कार था ।
थी इसी पर नैया अटकी येही तो इसरार था ॥
रामने जब छोड़दी इसने भी नैया छोड़दी ।
जब तलक उतरा नहीं केवट ने लानी छोड़दी ॥
जा बही गंगा पै नैया गंगा ने पहिचान कर ।
चरनों को सर पर लिया अपने ही कुल का जान कर ॥
गंगा की नीली थी धारा राम का नीला स्वरूप ।
प्रेम और कृपा की लहरें बन रही थीं एक रूप ॥
बहते बहते जिस घड़ी मझधार में नैया आगई ।
फेर भव-सागर की हालत याद उसको आगई ॥
यह प्रेमी था बड़ा गाने लगा फिर यह मल्हार ।
नैया है मझधार में तूही करेगा इस को पार ॥
लोभ मोह के कुण्ड हैं डूबने का है खतर ।
इसका है तूही खिवैया दास तो है बे फिकर ॥
नैया यह मेरी नहीं है प्रभू नैया आपकी ।
चरनों के साये में हूं लेली शरन है आपकी ॥
पार करना इसका प्रभू हाथ में है आपके ।
दास को तो भयही क्या है साथ है जब आपके ॥
देखे जो बादल पै बादल मोती जल बरसा रहे ।

और दया कृपा के वन बन दल पै दल हैं आरहे ॥
जो पड़ा सूरज की एक दम शक्ति बिजली पर नज़र ।
बादल और सूरज लगे फल सेवा के करने नज़र ॥
कर रहे दर्शन थे बादल बादलों पर भम रहे ।
इन दयालू बादलों को प्रेम से थे ढक रहे ॥
मोक्ष दल के दो थे बादल कृपा जल के बेशुमार ॥
सब का जल चरनों की इच्छा सब रहे मौका निहार ॥
सामने सूरज के बादल अड़ रहे टकरा रहे ।
सूरज उनको था हटाता और उन्हे इन्कार है ॥
बादलों के मनपै हम रंगी का है पूरा ख्याल ।
जप रहे थे रङ्ग पर हमको हटावे क्या मजाल ॥
कौन है हमको हटावे हट नहीं सकते कभी ।
यह खबर उनको न थी रहती हवा है एक कभी ॥
और सूरजवंशी का सूरज के मन पर था असर ।
दोनों को पूरा घमण्ड था दोनों में पूरी अकड़ ॥
बादल हटते ही न थे वह रङ्ग पर थे जमरहे ।
अपने स्वामी के वह चरनों के थे दर्शन कर रहे ॥
कह रहे सूरज से बादल क्रोध से क्यों तप रहा ।
जो हमारा स्वामी है उसका न तुझको डर रहा ॥
दिखता तू ऊंचा है सूरज नीचा है तेरा खयाल ।
हमको चरनों से हटावे यह नहीं तेरी मजाल ॥

होता है जो ऊंचा सूरज नीचे जा उसकी नजर।
और जो नीचा होता है जा उसकी ऊपर को नजर॥
कौन नीचा कौन ऊंचा तू ही दे इन्साफ कर।
ऊंचा है संसार में वह जिस की हो ऊंची नजर॥
जो घमण्ड है मन पै तेरे राजवंशी वंश का।
दास के कारण मिटाते नाम हैं यह वंश का॥
नीचा हमको जान कर तू कर रहा है हमको तंग।
पर किसी का भी नहीं रहता हमेशा एक ढंग॥
जितनी तुझ में तेजी है क्यों शान्ती उतनी नहीं।
हम बरसते हैं सदा तू भी बरसता है कहीं॥
हम तो आपही नीचे हैं क्या नीचा कर देगा हमें।
चरनों के दर्शन जग कृपा से करने दे हमें॥
बोला सूरज मेरी तेजी का भी है तुम को खयाल।
तेज मेरा झालने की है नहीं तुम में मजाल॥
मैं भी दर्शन करना चाहूं तुम को क्यों तकरार है।
आपभी दर्शन करें मुझ को भी क्या इन्कार है॥
बढ़ गया दोनों में झगड़ा बढ़ गई दोनों में रार।
जब हवाने देखा यह होगा जरूर इनमें बिगाड़॥
देख करके झगड़ा इनका वहां से वह चलने लगी।
तब जगह सूरज को भी चरनों में कुछ मिलने लगी॥
हो गये दोनों को दर्शन मिट गया झगड़ा तमाम।

दोनों प्रसन्न होगये और बन गये दोनों के काम ॥
जापड़ा मल्लाह के भी मन पै बादल का असर।
सुन गरज बादल की चमका ध्यान में था बेखबर ॥
देखे जो मल्लाह ने नैया पै बादल छारहे।
प्रेम से होकर मगन हैं मोत्त जल बरसा रहे ॥
काले गोरे दो हैं बादल कृपा दल की थी न थाह।
चरनों के दर्शन के कारण गङ्गा की थी कुछ न थाह ॥
डूबता जाता था मन और गङ्गा चढ़ती जारही।
और शक्ती की भी बिजली थी चमकती जारही ॥
गङ्गा ने नैया के नीचे अपने सरको देदिया।
या कहो नैया को अपने सरपै उसने लेलिया ॥
लोटती चरनों में थी चरनों पै थी उसकी निगाह।
इतना गहरा जल न देखा जितना यह बे इन्तहा ॥
मनसे केवट के भी उस दम प्रेम का बादल उठा।
जैसे बादल झुक रहे थे ऐसे यह भी जा झुका ॥
कृपा ऊपर से बरसती प्रेम नीचे वह रहा।
वह कहे इसको प्रेमी यह दयालू कह रहा ॥
यह प्रेमी था बड़ा वह भी था कृपालू बड़ा।
प्रेम और कृपा दया में होरहा था युद्ध बड़ा ॥
बरसें थे बादल पै बादल कृपा जल की थी न थाह।
कोई कहता यह बड़ा और कोई कहता वह बड़ा ॥

उसकी केवट पर नज़र इसकी भी केवट पर नज़र।
वह भी था इसके भरोसे यह भी उस पर बे फिकर ॥
उसको चिन्ता पार हूं कब था इसे भी यह फिकर।
वह कहे आया किनारा इसको भी येही ज़िकर ॥
वह दयालू यह प्रेमी हो रहे दोनों मगन।
वह क्षमा अपराध करता यह करे उसका भजन ॥
प्रेम और कृपा की नैया पार होना चाह रहीं।
अपने २ घाट पर दोनों ये जाना चाह रहीं ॥
वहां दया कृपा की जैसे कुछ नहीं मिलती थी थाह।
ऐसा ही यहां प्रेम भी केवट का था बे इन्तहा ॥
एक नैया एक केवट एक ही तो घाट था।
और इन दोनों में कोई भी न दिखता घाट था ॥
कुल पिता और पुत्र कैसे होरहे वर्ताव थे।
उसके मनमें रक्षा थी यहां सेवा के ही भाव थे ॥
वह दया कृपा की लहरें इसको था दिखला रहा।
प्रेम इसका उसके मनके पार होता जारहा ॥
यह दया की थी रियाया प्रेम का वह भूप था।
इसका था सेवा-धर्म उसका भी रक्षा रूप था ॥
वह गुरू था यह था चेला इसका सेवा काम था।
स्वामी उसका दास इसका इसलिये ही नाम था ॥
चूक जाना भूल जाना इससे होता था सदा।

और क्षमा कृपा दया वह इसपै रखता था सदा ॥
प्रेम की नैया से कृपा पार होना चाह रही ।
और क्षमा की यहां बली इसको भी खेना चाह रही ॥
प्रेम की नैया में केवट जारहा है गङ्गा पार ।
जिसको भव-सागर का केवट खेरहा है बार बार ॥
प्रेम की नैया ही भव-सागर से करदे छिन में पार ।
इसमें बल इतना भी है ये जन्मों का करदे सुधार ॥
देवता भी देख कर इस नैया को चकरा रहे ।
तप व पुन्य मल्लाह के सारे ही थे यश गारहे ॥
इस समय को देख कर सीता भी तो हैरान थी ।
प्रेम को जाने प्रेमी प्रेम की वह कान थी ॥
गङ्गा भी जाती थी चढ़ती और न होता था उतार ।
वह कहे इससे यह कहता जल्दी दे मुझको उतार ॥
जल्दी है दोनों के मन में जारहे हैं दोनों पार ।
वह कहे कर पार मुझको यह कहे कर मुझको पार ॥
वह कहे नैया है तेरी तू जो चाहे होजा पार ।
यह कहे कृपा बली जो चाहे वह तो करदे पार ॥
यह कहे नैया यह अपनी मैंने तुझ पर छोड़दी ।
वह कहे जो तूने छोड़ी मैंने भी तो छोड़दी ॥
वह कहे जो नैया उतरे पूरे दूं मेहनत के दाम ।
यह कहे जो ऐसा होजा पागया मेहनत तमाम ॥

वह कहे जल्दी जो उतरे हो सुफल मेहनत तेरी ।
यह कहे वश क्या है मेरा चाहे जो कृपा तेरी ॥
नैया जितनी जल्दी उतरे उतना होता नाम है ।
यह कहे कृपा तुम्हारी का यहां अब काम है ॥
वह कहे तू देखतो अव तो किनारा आगया ।
यह कहे सन्देह नहीं मैं भी किनारा पागया ॥
वह कहे यह घाट तेरा यह कहे मेरा न घाट ।
और इन दोनों में कोई भी तो केवट था न घाट ॥
बोला फिर मल्लाह उनसे पार नैया आगई ।
आपकी और मेरी भी दोनों किनारा पागई ॥
अब किनारा करना मुझसे ले किनारा आगया ।
आप भी आये उतर और साथ मैं भी आगया ॥
तारते मुझको हो पहिले या उतरते आप हैं ।
कौन उतरेगा यहां पहिले जानते भी आप हैं ॥
पहिले मेरे ही उतरने का यहां दस्तूर है ।
और जो आज्ञा आप दें वह भी मुझे मंजूर है ॥
आप चाहें आप उतरें मुझको क्या इन्कार है ।
जाने की बात में तुमको भी क्या इसरार है ॥
बात सुन केवट की केवट ने दिया उसको जवाब ।
जो सदा से चाल है उसका मैं दूं अब क्या जवाब ॥
तू उतर कर नैया को अब दे किनारे पर लगा ।

यहां की रीति और चाल का मुझको नहीं बिलकुल पता ॥
मिलते ही आज्ञा के उतरा नैया लाया घाट पर ।
होगया वोही यहां इसरार था जिस बात पर ॥
फिर समझ कर राम बोले किसलिये तकरार था ।
झगड़ा ही किस बात का बस होना ही तो पार था ॥
एक ही नैया में आ पहिले दिया तुझको उतार ।
मैंने तारा तुझको क्या तूने दिया मुझको उतार ॥
पार जब मैं होगया तू मुझ से पहिले होगया ।
जो भी पहिले होना था केवट वो पहिले होगया ॥
उतरे जब नैया से प्रभु बोझा केवट चढ़ गया ।
और वो इतना बोझा था जा बोझा मन पर पड़ गया ॥
सोचने मन में लगे यहां खाली मेरा हाथ है ।
देना चाहिये इसको कुछ इसका कुटुम्ब का साथ है ॥
इसकी तो रोटी यही है येही इसका काम है ।
जो न दूं मेहनत में इसकी कितना अधरम राम है ॥
ये नही मांगेगा मुख से और न लेना चाहेगा ।
जब रहा भूखा क़बीला मन में वह दुःख पायगा ॥
पेट के ही वास्ते यह कर रहा है अपना काम ।
जिस किसी को तारता है उससे लेलेता है दाम ॥
वह पढ़ा लिक्खा नहीं पर इसका गहरा है विचार ।
जो सदा की चाल है उसको बतावे बार बार ॥

इसने अपना सारा मतलब पहिले ही समझा दिया।
रखना मेहनत मत मेरी यह भी मुझे बतला दिया॥
जबकि इसकी जीविका का नैया पर ही है हसर।
जो न दूं मेहनत मैं इसकी कैसे हो इसकी गुज़र॥
इस क़दर बे बस थे प्रभु कुछ भी कहा जाता नहीं।
और खाली हाथ भी मुंह तक कभी जाता नहीं॥
नैन नीचे होगये लज्जा की धारा बह गई।
डूबे जाते फिक्र में थे मनही मन में रहगई॥
सरसे चरनों तक पसीना बह रहा यह हाल है।
जिसकी मेहनत देनी है यह भी अती कङ्गाल है॥
कुछ नहीं कर सकता अपना इतना यह कङ्गाल है।
लोहे को जो भस्म करदे आह मुर्दी खाल है॥
इसलिये कङ्गाल की मैं आह से हूँ डर रहा।
इससे ज्यादा दुख हो क्या मेहनत न दूं जो कर रहा॥
काम मेरा कर चुका जो कुछ कि करना था इसे।
पास मेरे कुछ नहीं और देना वाजिब है इसे॥
और परखना ये भी चाहूं कौन यहां देता है साथ।
कौन मेरा मित्र है यह जानना चाहते हैं नाथ॥
इस कसौटी पर हो तो हो मित्र बैरी की सनाख्त।
और पराये अपने की भी देखी जाती है यहां बात॥
सीता के हृदय में फोटू इसका जाकर खिचगया।

एक मन दोनों का दोनों की तरफ को खिंचगया ॥
जो उधर था भार मन पर वह इधर भी पड़ गया ।
जो अड़ा कारन वहां था वह इधर आ अड़ गया ॥
साफ मन होने के कारन नक़शा साफ आया उतर ।
जो थी चिंता मन में उसके वोही थी चिंता इधर ॥
एक ही तो बात थी और एक थे दोनों के मन ।
एक थी उनकी ज़ुबां और एक थे उनके वचन ॥
इसलिये सीता ने जाना स्वामी पर यह भार है ।
उसका ही है भार उनपर जिसका तुझ पर भार है ॥
उंगली उठेगी जहां में सीता भी तो साथ थी ।
क्यों हुई चिंता यह उनको क्या ज़रा सी बात थी ॥
आगे उंगली आपड़ी तो आगया वींटा का ध्यान ।
काम क्या यह देगी मुझको जब दुखी हैं मेरे प्रान ॥
ले अंगूठी उंगली से लो राम से कहने लगी ।
दो निशानी हाथ की लो उनको वह देने लगी ॥
उंगली जिसमें उठती हो ऐसा न चाहिये करना काम ।
क्यों उठाओ आप चिन्ता तुम मिटाओ सबके राम ॥
भार मन हलका करो उंगली का हलका भार हो ।
भार मुझ पर भी है इसका मेरा हलका भार हो ॥
आपके बोझे का भी तो पड़ रहा है मुझपै भार ।
यह नहीं मामूली बोझा इसको लें मनमें विचार ॥

स्वामी का बोझा उठाना दासी का ही काम है।
जितना भी हलका हो बोझा हलका मेरा काम है॥
जब कि मन भी एक है तो एक हो बोझे का भार।
इसके हलके करने का है इसलिये मुझको विचार॥
भार जो मुझ पर हो रखना ये अगर मंजूर है।
कुछ नहीं कह सकती ज्यादा आज्ञा से मजबूर है॥
ऐसे गहने से क्या लेना जिससे मन गहना रहे।
गहना सूरज को भी दुःख दे जब तलक गहना रहे॥
गहना ही तो चांद की भी रोशनी को दे घटा।
ये विचारो मन में अपने गहना है कितना बुरा॥
चन्द्रमा सूरज को ये गहना ही देता है घटा।
तेज आजाता है फौरन जिस घड़ी गहना हटा॥
गहना अपना लज्जा है जिससे कि है बचता धरम।
जो कभी उतरे न तनसे वह पतीव्रता धरम॥
मेरे हाथों के हैं गहने आपके प्रभू चरन।
माथे सरके हैं वह जेवर जो तुम्हारे हैं वचन॥
आपकी सेवा के जेवर पैरों में मेरे पड़े।
और गले के हैं वह जेवर हाथ कृपा का पड़े॥
आपका जो ध्यान है मेरे गले का हार है।
आपकी आज्ञा का पालन सारा यह शृंगार है॥
धर्म जो अपना रहे नथ लौंग से कुछ कम नहीं।

जबकि ज़ेवर इतने हैं तो बींटो का कुछ ग़म नहीं ॥
एक तो बनवास चक्कर प्रभु हम पै आपड़ा ।
दूसरा बींटी का चक्कर एक ही चक्कर है बड़ा ॥
एक तो आज्ञा का हलका जो है माता का दिया ।
यह अगूंठी का जो हलका क्या करें इसको पिया ॥
और नगींना है वह असली धर्म जो अपना रहे ।
उस नगींने को तो खोदे इसको सीता क्या करे ॥
पृथ्वी पर सोना पड़े सोने से फिर क्या काम है ।
इस समय तो सोना मुझको वैरी लगता राम है ॥
मनतो अपना आज्ञा के हलके में बिलकुल बन्द है ।
और धर्म भी अपना हमको कर रहा पावन्द है ॥
और मेहनत भी है देनी जिसका देना है जरूर ।
ले अंगूठी काम की चिन्ता भी मिटती है हज़ूर ॥
काम की भी है नहीं दे काम यह कितना बड़ा ।
वोझे सब होते हैं हलके लाभ है कितना बड़ा ॥
इसके रखने से मेरे कुछ काम भी रुक जांयगे ।
और इधर ऋणबन्दी से भी प्रभु हम छुट जांयगे ॥
रखनी बींटी रखनी मेहनत यह न अपना काम है ।
लाभ रखने में नहीं बस देने में आराम है ॥
मानेगा दुःख मनमें केवट अपना भी मन हो दुखी ।
बस अगूंठी देने से आनंद होते हैं सभी ॥

हरतरह समझा दिया बेकार भी दिखला दिया।
लाभ हानी खोट सारा कह दिया परखा दिया॥
और पती-व्रत्ता-धरम कितना है ये दिखला दिया।
सेवा के कांटे में रखकर, धर्म से तुलवा दिया॥
एक रत्ती एक माशा फर्क होगा क्या मज़ाल।
तोला भी तुलवाया भी और धर्म को रक्खा सम्भाल॥
सेवा की रीती से उसने प्रेम से समझा दिया।
बोझे के बदले में बोझा पड़ न जा समझा दिया॥
सुनके यह अरदास सीता वींटी ले देने लगे।
लेले कुछ देता नहीं मल्लाह से कहने लगे॥
काम है तेरा बड़ा और कुछ नहीं देते हैं हम।
मनमें अपने ले समझ खाली नहीं रखते हैं हम॥
पास मेरे कुछ नहीं और देने को तय्यार हूँ।
क्या कहूं मैं तुझसे केवट हो रहा लाचार हूं॥
धन तो तुझको देदिया यहां जोकि मेरे पास था।
वींटी यह सीता ने दी मेहनत का जिसको पास था॥
और ज़माना भी हमेशा एकसा रहता नहीं।
यह समय की बात है ज़ाहिर जो कुछ देता नहीं॥
नैया तेरी आई है और तू भी आया साथ है।
जानता सब कुछ हूं मैं पर खाली मेरा हाथ है॥
पास जब होता नहीं तो करनी पड़ती टाल है।

ने महीना दिन न हफ्ता बल्कि चौदह साल है ॥
टाल करना टाल देना यह न मेरा काम है।
जो समा तेरा मुकर्रर उससे बेबस राम है ॥
तूने जो कुछ है किया और जो दिया आराम है।
क्या दिया क्या दूंगा तुझको कह सके क्या राम है ॥
जो तुझे दूं लेले मुझसे बाकी की तू आस रख।
जो न हो विश्वास तुझको बींटा अपने पास रख ॥
ने तो रक्खी ने रखूं मेहनत तेरी केवट कभी।
आऊंगा वनवास से जब देदूंगा मेहनत सभी ॥
सुनके केवट ने कहा यह आपका अदना है दास।
मुफ्त मेहनत मिलगई सब आपका है मेरे पास ॥
मैं तो प्रभू आप से मेहनत से ज्यादा पागया।
जिनके दर्शन ही कठिन हैं उनको जब मैं पागया ॥
जब चरन मुझसे धुलाये पागया मेहनत सभी।
आपके नज़दीक क्या बाकी है कुछ मेहनत अभी ॥
और रहा मज़दूरी हम पेशे का जब यह काम है।
मैं भी केवट तुम भी केवट दोनों का एक काम है ॥
आप भव-सागर से तारें मैं हूं गङ्गा तारता।
आप तो सस्ता उतारें मैं हूं मँहगा तारता ॥
पेशेवर से पेशेवर मेहनत नहीं लेता कभी।
एक करदे काम कुछ तो दूसरा करदे कभी ॥

जैसे दर्जी से कभी दर्जी सिलाई का ले काम।
लेता मज़दूरी नहीं वह भी करा ले उससे काम॥
ऐसे ही केवट को केवट जो कभी दे है उतार।
घाट पर जब उसके जावे वह भी देता है उतार॥
मैंने तुमको तारा जब तुम आये मेरे घाट पर।
आप मुझको तारदें जब आऊंगा मैं घाट पर॥
काम का बदला हमेशा होता ही बस काम है।
फर्क इस पेशे में क्या जब एक अपना काम है॥
सबका ही सबसे हमेशा पड़ता प्रभु काम है।
पेशेवर से पेशेवर लेले तो हो बदनाम है॥
आप केवट मैं भी केवट ऐसा जब सम्बन्ध है।
ऐसी हालत में तो मेहनत लेनी देनी बन्द है॥
और ज्यादा कम का भी बिलकुल नहीं होता ख्याल।
इस ज़रासी बात की होती नहीं कुछ देख भाल॥
मैंने तो पीछे उतारा पहिले तारा आपने।
आपही फरमाइये मुझसे लिया क्या आपने॥
आपका तो काम मुझसे आपड़ा है एक बार।
आपने तारा है मुझको सोचो प्रभु कितनी बार॥
इसलिये मैं चींटी लेने से तो अब मजबूर हूं।
और जो भी आज्ञा हो उससे नहीं मैं दूर हूं॥
और जो मनमें आपने कुछ सोच रखी हो कसर।

आप लौटें जब अवध को और यहां से हो गुज़र ॥
तो इन्हीं चरनों के जल से पूरी करलूंगा कसर ।
कीमती शय छोड़ कर ने उठाऊंगा कसर ॥
जो मुझे इनाम दो उसका नहीं अब काम है ।
छोड़ने से राज के मिलता नहीं इनाम है ॥
जारहे वनवास को फिर यहां खुशी का क्या है काम ।
और न लेना मुझको वाज़िब और न देना तुमको राम ॥
सूद भी बे सूद है क्यों इसकी तुम चिन्ता करो ।
सूद मेरा है यहां जितनी कि तुम कृपा करो ॥
काम जो जल्दी से होजा कैसा अच्छा सूद है ।
जब तलक कृपा न हो तो सूद भी बे सूद है ॥
साहूकारी काम यह इस हाथ ले इस हाथ दे ।
ऐसा जब बर्ताव हो ने सूद ले ने नाथ दे ॥
जिससे बिन मांगे मिले उस पर नहीं रुकती रक़म ।
सूद चढ़ता ही नहीं जबतक नहीं रुकती रक़म ॥
आने जाने का सफर जो हो रहा दुश्वार है ।
जिस ने दुखने इस कदर मुझको किया लाचार है ॥
यह सफर मेरा मिटादो सूद मेहनत है यहां ।
इतनी कृपा कर दो मुझपर यह न देखूं दुख कभी ॥
इस सफर के काम से तू माफी दे दे मुझको राम ।
और इसके बदले में ज्यादा तू दे दे मुझको काम ॥

चाहे हो कितना बड़ा लेकिन नहो फिरने का काम।
जिसमें आना जाना हो ऐसा नहीं होने का काम॥
मैं न भत्ता लेना चाहूं मैं न चाहूं फिरना राम।
ने पसन्द गिरदावरी पटवार का है मुझको काम॥
और सफर में दुख हो दुख है सुख कभी मिलता नहीं।
हानी और दुख के सिवा कुछ लाभ भी मिलता नहीं॥
एक दफे की बदली में ही कितनी पड़ती है कसर।
रोज़ जिसको बदला जावे उसको जियादा है कसर॥
जबकि खुश होता है मालिक बदली होती ही नहीं।
जिस जगह नाराजगी हो बदली होती है वहीं॥
मुझसे मालिक खुश नहीं होता है बस येही विचार।
और इसी कारन से बदला जाता हूं मैं बार बार॥
और पता भी बदली से पहिले मुझे मिलता नहीं।
किस जगह बदला गया यह भी पता चलता नहीं॥
ने तो कस्बा ने शहर ने गांव ने देसों का नाम।
ने बताया जाता है मुझको मुकाम और क्या है काम॥
मिलता है अरजन्ट आडर करसके क्या इन्तज़ाम।
और न मुहलत मिलती है जो पूरा करलूं पिछला काम॥
जिसकी बदली ऐसी हो ने रात दिन ने सुबह शाम।
और ने तय्यारी सफर के मिलते हैं कुछ दिन ही राम॥
फिर मैं पिछले कामों का कैसे करूं प्रभू सुधार।

बस इसी बदली के कारन हो रहा है सब बिगाड़ ॥
और न आगे जाने का कुछ कर सकूं मैं इन्तजाम ।
इसलिये मुझको पसंद आता नहीं फिरने का काम ॥
आपजो चाहें मिटाना फिर न कुछ दुश्वार है ।
जो सफर नित मेरे सर पर हर घड़ी तय्यार है ॥
आपही मालिक हैं मेरे आपसे अरदास है ।
हुक्म दोगे एक जगह रहने का यह विश्वास है ॥
और हमेशा के लिये यह हुक्म मुझको दीजिये ।
बदली मेरी हो नहीं जो काम चाहे लीजिये ॥
आपतो मेरे हैं स्वामी आपका मैं दास हूं ।
आपके ही चरनों के मैं रहना चाहता पासहूं ॥
आज मन की बात तुमसे कहता हूं मैं साफ साफ ।
क्षीर सागर छोड़कर जबसे अवध में आये आप ॥
फिरतो विश्वामित्र जी ने आपको पहिचान कर ।
राजा दशरथ से आ मांगा रक्षा यज्ञकी आन कर ॥
फिर मुनी के तप व बल से उसने दहशत मान कर ।
दे दिया तुमको मुनी को उसके बलको जान कर ॥
हो गया अचरज अवध को उसूपर आया विचार ।
रक्षा यज्ञकी कर सके यह कैसे हो आया विचार ॥
राजा दशरथ तो मुनी के बलसे है घबरा रहा ।
और राजा को कोई भी है नहीं समझा रहा ॥

दूध होठों का न सूखा कितना यह अंधेर है।
बस मुनी ने राजा दशरथ से निकाला बैर है॥
कर सके है क्या मुनी कुछ राज बल भी कम नहीं।
है बड़ा अचरज किसी को भी तो इसका गम नहीं॥
फिर तो दशरथ के भी मुख से येही बाहर आगया।
उम्र थोड़ी रामकी यह कहते ही घबरा गया॥
फिर मुनी ने आपके गुण सारे वर्णन कर दिये।
उस को देकर के तसल्ली तुमको लेकर चल दिये।
जब तुम्हें वह साथ अपने बन को प्रभु ले गये।
राक्षस बलवान सारे देख हैरां रहगये॥
और सुबाहू तड़िका को मार कर कहना किया।
और घमण्ड मारीच का इक बान से हलका किया॥
और मुनी का यज्ञ पूरा आपने करवा दिया।
बानका बल अपना थोड़ासा वहां दिखला दिया॥
फिर मुनी का यज्ञ करा कर सीता की अरदास पर।
जा धनुष-शिव तोड़ डाला जिसकी थी वह आस पर॥
और जनकजी के वचन को भी जा पूरा कर दिया।
और घमण्डा राजों के बलको भी हलका कर दिया॥
तोड़ कर शिव का धनुप सीता से नाता जोड़ कर।
जबकि विश्वामित्र जी बैठे सभा थे जोड़ कर॥
टूटना सुन कर धनुष का आगये वहां परशुराम।

क्रोध में भरकर कहा बतला जनक तू उसका नाम ॥
तोड़ा ये जिसने धनुष वह कौनसा शहज़ोर है ।
कैसा यह जलसा है यहां कैसा व्रता यह शोर है ॥
फिर जनक जी ने प्रण का हाल सारा कह दिया ।
जिसने तोड़ा जैसे टूटा भेद सारा देदिया ॥
दूध, बल गुस्से की अगिनी से उबल आया तमाम ।
शान्ती के जल से तुमने फिर लिया बस उसको थाम ॥
फिर ज़रा उस अगिनी को लछमन ने चेतन करदिया ।
फिर भी तुमने शान्ती का उस पै छींटा देदिया ॥
तुम तो करते शान्ती वहां आता जाता था उबाल ।
पर दया कृपा के जल से आप लेते थे सम्भाल ॥
क्रोध की बढ़ती थी ज्वाला जो न करती थी छिमा ।
आपकी कृपा दया वहां करती जाती थी छिमा ॥
आपके जल शान्ती का था नहीं उसको पता ।
क्रोध अगिनी ठंडा होजा शान्ती में बल बड़ा ॥
बल दिया है जिसने यह वोही यह बल की कान है ।
वह समझता तुमको था राजा की यह सन्तान है ॥
इसलिये कुछ देर तक वह तुमसे अड़ता ही रहा ।
तेज, बल, शक्ती से लेकिन मन में डरता ही रहा ॥
छेड़ते जाते थे लछमन परसे को लेना सम्भाल ।
वह द्रोही क्षत्री थे नेत्र उनके होजाते थे लाल ॥

आप करते शान्ती तो उनका रुकता था उवाल।
छेड़ कर और हंसके लछमन फेर देते थे उछाल॥
क्रोधने इतना दबाया परसा भी उठता नहीं।
जोकि है प्रभाव-जाती आयेबिन रुकता नहीं॥
शान्ती और क्रोध का युद्ध ऐसा कुछ होता रहा।
शान्ती बढ़ती रही तो क्रोध भी बढ़ता रहा॥
गर्म लोहे को है ठंडा लोहा ही तो काटता।
शान्ती के शक्ति बल को था नहीं वह जानता॥
होता था जब क्रोध ठंडा मनमें करता था विचार॥
इसमें शक्ती है बड़ी जिसका नहीं उठता है भार॥
है जो छोटा राज-वंशी यह क्रोधी है बड़ा।
यह दिलाता क्रोध है और शान्ती दे है बड़ा॥
देखो विश्वामित्र इन चेलों की कैसी चाल है।
एक तो ठंडा करे और एक करता लाल है॥
छोटा चेला आपका आपेसे बाहर हो रहा।
मुखसे बहता दूध है यह ध्यान मुझको हो रहा॥
परसा उठना चाहता है आ दबा देती है दया।
उम्र भी थोड़ी है इसकी कह रही है ये छिमा॥
वरना परशा मेरा अब तक इसका कर लेता शिकार।
ये समझता ही नहीं समझा रहा हूं मैं बारम्बार॥
क्रोध में भरकर उठे तो जागिरे परशे पै हाथ।

जब उठाया परशा उसने आप आये नीचे नाथ ॥
परशेने पहिचान कर चरनों में सरको देदिया ।
बल किया अपना नज़र बल दान बलको देदिया ॥
थी उधर सीता दुखी तो परशे का तोड़ा घमण्ड ।
अस्तुती करने लगा जब होगया लब बल का बन्द ॥
तेज शक्ती देखकर सब क्रोध पानी होगया ।
चरनों में गिरते ही वह फिर पानी, पानी होगया ॥
शान्ती बलने वहां ऐसा दिखाया है असर ।
राम सागर में से मैंने लिख दिया ला मुख्तासर ॥
बाण, रक्षा, भक्तों को जब से लिया है हाथ में ।
आप विश्वामित्र के आये हैं जब से साथ में ॥
और अवध में लौट करके जब कि आये आप राम ।
फिर अवध के राजके करने लगे जब आके काम ॥
देवताओं ने जो देखा सरस्वती को लाये घेर ।
कैकेई माता के मन पर उसको डाला जाके घेर ॥
सरस्वती ने अपना जादू जब दिया माता पै गेर ।
बसमें करके अपने मनको मन लिया दशरथ का फेर ॥
जब हुआ बनवास तुमको बनगये भक्तों के काम ।
जबसे आये हो अवध में जानता हूं तुमको राम ॥
मिलगया बनवास जब मुझको हुआ पूरा यक़ीन ।
बनके जाने का है रस्ता यही सीधा बिन यक़ीन ॥

जब पधारेंगे वह बनको घाट पर आयें ज़रूर।
पार बेड़ा होगा मेरा कृपा होगी बिल ज़रूर॥
मैं इसी आशा के ऊपर आपकी दिन रैन था।
आपके चरनों के दर्शन के लिये बेचैन था॥
जब धनुष-यज्ञ की कथा कोई सुनाता था मुझे।
पार भव-सागर का जाना याद आता था मुझे॥
जब मैं खेता नैया को तू याद आता था मुझे।
एक दिन केवट तेरा ऐसे ही खेवेगा इसे॥
जब मैं खेवा भरता था तो खेवा आजाता था याद।
लौट कर जब फिर मैं आता तो भी तू आता था याद॥
जो सहे दुख मैंने अब तक भूला वह एक दम तमाम।
देदिये दर्शन मुझे आकर जो तुमने आज राम॥
बस जनम मेरा सुफल आ कर दिया है आपने।
बेटे के अपराधों को देखा नहीं है बाप ने॥
आपका कृपा दया करना ही प्रभु काम है।
क्योंकि कृपालू दयालू आप का ही नाम है॥
नाम बेटे का जो हो तो बाप का ही नाम है।
और भला बेटे का करना बाप का ही काम है॥
और मेरे दुख बिपता हरना आप का ही काम है।
दास तेरा पुत्र है मेरा पिता तू राम है॥
मैं हूं अपराधी बड़ा और भूल मेरा काम है।

और छिमा रच्छा का करना प्रभु तेरा काम है ॥
सुन के यह अरदास उसकी कह दिया मंजूर है ।
जो भी है दरख्वास्त तेरी सब मुझे मंजूर है ॥
अब न आने जाने का तेरा रहेगा कोई काम ।
रख भरोसा इस पै केवट कह रहा जो तुझसे राम ॥
प्रेम ने तेरे मुझे इतना किया मजबूर है ।
कहना पड़ता है यही जो चाहे तू मन्जूर है ॥
प्रेम बल तेरा मुझे ले आया तेरे घाट पर ।
वरना वाजिब तो यही था तुझको आना घाट पर ॥
पार जाने वाला ही जाता सदा है घाट पर ।
मुझको जो था पार जाना आया तेरे घाट पर ॥
पार जाने वाले को है घाट पर आना ज़रूर ।
जो न आवे घाट पर केवट का इस में क्या कसूर ॥
तू भी तो केवट सदा करता है सब को गंगा पार ।
तेरा भी पेशा यही है तू भी तो करले विचार ॥
कायदे पर चलना चाहिये जो सदा की रीति है ।
जो सदा मत पर चले उसकी हमेशा जीत है ॥
और बड़े छोटे का भी इस में नहीं होता विचार ।
हो बड़ा कितना ही आवे घाट पर जो जाये पार ॥
मैं अवध युव-राज था और तू रियाया थी मेरी ।
जो तुझे मैं वहां बुलाता बात थी कितनी बुरी ॥

और मुझको भी तो तेरे घाट पर आना पड़ा।
जब तलक तूने न तारा कष्ट भी पाना पड़ा॥
जो न तुझमें प्रेम होता मैं यहां आता नहीं।
कोई भी मुझको तो केवट प्रेम बिन पाता नहीं॥
प्रेम ने ही नैया का रुख किस तरफ को कर दिया।
आया था मैं पार होने पार तुझको कर दिया॥
तप व भक्ती का न भूखा और न धनकी आस है।
प्रेम का वह जल है तुझ पर जिसकी मुझको प्यास है।
और शृङ्गी ऋषि ने मुझको प्रेम से बुलवा लिया।
क्षीर-सागर प्रेम की भी प्यास ने छुडवा दिया॥
प्रेम ही तो वनके अन्दर मुझको है ले जारहा।
प्रेम ही मेरे पिता से आज्ञा यह दिलवा रहा॥
प्रेम से ज्यादा कोई दुनियां में केवट बल नहीं।
जिसमें इसका बल है केवट वह कभी निर्बल नहीं॥
प्रेम में शुद्धी अशुद्धी का नहीं होता खयाल।
नीचकी और ऊंचकी करता नहीं यह देख भाल॥
प्रेम से ही डूबता है प्रेम से होता है पार।
प्रेम से ही पालना संसार की होती है पार॥
प्रेम ही छाती के अन्दर दूध को पैदा करे।
प्रेम से दुख माता को सन्तान का भरना पड़े॥
जो न होता प्रेम केवट पालना होती कठिन।

प्रेम से उत्तम नहीं कुछ मेरा है येही वचन ॥
प्रेम में बल जितना है वर्णन वह हो सकता नहीं ।
जितना गुण है प्रेम में मैं उसको कह सकता नहीं ॥
जबकि तुझमें प्रेम है फिर किस लिये करता है डर ।
जिसपैं नैया प्रेम की वह आप जाता है उतर ॥
मुझमें शक्ती कहता है, है शक्ती तुझमें प्रेमकी ।
पार जो तू होगया है शक्ती तेरे प्रेमकी ॥
जबकि तू मेरे पास है फिर आने जाने से क्या काम ।
तू समझता ही नहीं समझा रहा है तुझको राम ॥
जब मैं आऊं लौट कर सब पूरी करदूंगा कसर ।
वनके अन्दर साथ ले जाना नहीं चाहता मगर ॥
बान मेरा लंका के ऊपर मुझे ले जारहा ।
वहां विभीषण भक्त भी मुद्दत से येही चारहा ॥
और श्री हनुमान जी को भी है मेरा इन्तज़ार ।
प्रेम उनका याद करता है मुझे अब वारवार ॥
भिलनी ने भी मीठे बेरों का लगा रक्खा है ढेर ।
चाख करके देखती हैं भिलनी उनको बेरबेर ॥
प्रेम रस उन बेरों में है जोकि है मुझको पसन्द ।
ऐसे मीठे हैं वह केवट खाते ही लब हों हैं बन्द ॥
उनको भी है चाखना वह कर रही है इन्तज़ार ।
जब तलक जाऊं नहीं लाती रहेगी वारवार ॥

और उन वैरों के शक्तों, शक्ती से है देखनी।
कौनसी शक्ती बड़ी यह बात भी है देखनी॥
दुख हुआ मारीच को उसका भी करना है सुधार।
उसको भी है इन्तज़ारी मेरा ही है इन्तज़ार॥
बालि और गिद्ध को भी दर्शन देने का इक़रार है।
इसलिये भी रुकने में मुझको यहां इन्कार है॥
और भरत हनुमान जी में कितना बल है तोलना।
और इन्द्रजीत लछमन का भी बल है तोलना॥
लंका के कांटे में रख हनुमान बल है तोलना।
रत्ती रत्ती माशा माशा तोले से है तोलना।
और उधर रावन भी मेरी इन्तजारी कर रहा।
वह भी तो तेरी तरह से जन्मों से दुख भर रहा॥
चाहे वैरी हो या मित्र जिसकी मुझसे हो लगन।
है मुझे दोनों बराबर है यही मेरा वचन॥
रक्षा भक्तों की भी करना मेरा जाती काम है।
इसलिये अब जल्दी जाना चाहता यहां से राम है॥
जो दिये वरदान जिनको पूरे करने हैं जरूर।
दण्ड भी देने हैं उनको जैसे जैसे हैं कसूर।
इतने करके काम केवट फिर अवध को आऊंगा।
उस समय आकर के तेरा कहना सब कर जाऊंगा॥
जो किया इकरार तुझसे पूरा कर दूंगा सभी।

जो मैं कह देता हूं केवट वह नहीं टलता कभी ॥
बहुत ही थोड़ा है अरसा काम करना है बड़ा ।
तुझको अपनी जल्दी है जब तुझको दिखता है बड़ा ॥
लाखों जन्मों से तू जब यह कर रहा है इन्तज़ार ।
अब वर्ष चौदह हैं केवट यह तो कर मन में विचार ॥
जब कि वादा हो मुकर्रिर फिर नहीं होती है देर ।
अब तेरे कारज में केवट कुछ नहीं है हेर फेर ॥
जितनी होती देर है बस उतनी ही होती है देर ।
अब तो मेरी वापिसी तक बाकी कुछ थोड़ी है देर ॥
मन टिका कर रह यहां जो अपना चाहता है भला ।
जिसका मन टिकता नहीं कब लाभ पाता है भला ॥
देर होती है मुझे ने बनता तेरा काम है ।
करता जो सन्तोष है पाता वही आराम है ॥
देर अब अच्छी नहीं है करने मुझ को बहुत काम ।
दे दे आज्ञा तू खुशी से जाना अब चाहता है राम ॥
जाता है प्रतापसिंह केवट तू कहले मन की बात ।
क्या समा अच्छा है उतरे तू जो इस के साथ २ ॥
सुनते जाओ मेरी प्रभु आप से अरदास है ।
पार करदो बेड़ा मेरा आपकी ही आस है ॥
भक्ती, तप का बल नहीं ना प्रेम मेरे पास है ।
एक दया कृपा छिमा की आपकी ही आस है ॥

आप स्वामी प्रभु मेरे आप का यह दास है ।
पार करदो मुझको भी जो दास का कुछ पास है ॥
जब हमेशा से तू प्रभु कर रहा है सब को पार ।
इसलिये है पार करने का मेरे भी तुझ पै भार ॥
जो इसी के साथ में तू करदे मुझको प्रभु पार ।
मुझको हो आना न जाना और न करना तुझको पार ॥
और भवसागर हमेशा तुझ से ही होता है पार ।
तुझको ही तो पड़ता है खेना भी मेरा बार बार ॥
फिर भी तो तुझको ही होगा प्रभु मुझको करना पार ।
फिर भी करना अब भी करना क्यों न दे अब ही उतार ॥
जब तुही केवट है प्रभु और मैं उतरूंगा पार ।
फिर भी तो तू ही उतारे क्यों नहीं अब करता पार ॥
पार करना काम तेरा पार ही जाना मुझे ।
अब तू यहां मौजूद है फिर भी तो हो आना तुझे ॥
यहां बल्ली कृपा की और नैया भी तय्यार है ।
और केवट और मुसाफिर काम सब तय्यार है ॥
और दया की नैया तेरी जारही जो पार है ।
मैं भी चरनों में चलूं आज्ञा से होता पार है ॥
तेरा ही तो है वचन जो करलिया सो काम है ।
कर रहा फिर टाल क्यों बढ़ता ही तेरा काम है ॥
चाहे फिर कर चाहे अब कर तुझ से होना पार है ।

तूही केवट तू खिवैया फिर भी येही धार है ॥
या हो कोई दूसरा तो दे मुझे केवट बता ।
तू न तारेगा जो मुझको कौन तारेगा भला ॥
और ऋषि वाल्मीक जी ने भी दिया तेरा पता।
रामसागर में भी तेरे यह मिला मुझको लिखा ॥
येही तुलसीदास जी ने भी बताये तेरे गुण ।
और यही मल्लाह ने भी हैं सुनाये तेरे गुण ॥
और शृंगी ऋषि के तप से आप जब आये इधर ।
तब ऋषी मुनियों ने भी तेरे किये येही जिकर ॥
आपकी महिमा का चर्चा हो रहा है घर ब घर ।
और पुराना वेदों ने भी गाया है तेरा जिकर ॥
आपका पेशा है प्रभु जब कि सब को तारना ।
फिर तो मुझको भी पड़ेगा आपको ही तारना ॥
आप बतलायें मुझे फिर किस लिये यह टाल है ।
जब कि छोटों और बड़ों की देख है न भाल है ॥
आपको सब हैं बराबर आप सब के बाप हैं ।
बाप सब को पालता है जानते यह आप हैं ॥
आपके चरणों का ही मैं भी तो हूं उम्मेदवार ।
आप ही इस गहरे सागर से करेंगे मुझको पार ॥
चरणों में मुझको रक्खो यह दास की अरदास है ।
प्रार्थना है कि ये तुझ से चाहरहा जो दास है ॥

दासों से तो चूक गलती हो ही जाती है जरूर।
और मालिक ही छिमा करता है सब उनके कसूर॥
ना बनी सेवा ही तेरी न बना मेरा भजन।
ना तेरी आज्ञा ही मानी ना किया पालन वचन॥
मैं हूं अपराधी बड़ा तेरा बड़ा दरबार है।
तुझको ही खेना पड़े ऐसा तेरी सरकार है॥
माना मैं अपराधी हूं तेरा दयालू नाम है।
छूट सकता ही नहीं जैसा कि जिस का काम है॥
जो न तारेगा मुझे तू आज भवसागर से पार।
मुझ को तो कष्ट हो होगा खेना हो तुझ को बार बार॥
और बुरे अच्छे का तो केवट नहीं करते विचार।
जो भी आता घाट पर है उसको देते हैं उतार॥
अब उतारे फिर उतारे तेरा बढ़ता काम है।
एक दम जो तारदे तो तेरा घर का काम है।
जब कि दोनों का भला फिर क्यों तुझे इन्कार है।
और तेरी आज्ञा में मुझ को नहीं इन्कार है॥
और आगे के लिये तकलीफ कुछ देता नहीं।
और वापिस लाने को भी तुझ से कुछ कहता नहीं॥
तुझ को भी तकलीफ है जो आऊं जाऊं बार बार।
ऐसा मैं चाहता नहीं तकलीफ हो जो बार २॥
लाभ है जो इसमें मेरा आपका ही लाभ है।

दास को जो लाभ हो वह स्वामी का ही लाभ है ॥
आपसे दरख्वास्त करना प्रभु मेरा काम है ।
और इसे मंजूर करना आपका ही काम है ॥
जो भी है दरख्वास्त मेरी पढ़ सुनाई आपको ।
हुक्म देदो जो हो देना जो पसन्द हो आपको ॥
जो मुझे तकलीफ थी वह सारी कहदी आपसे ।
हाल मेरा कुछ छिपा प्रभु नहीं है आपसे ॥
मैं न मागूं माल दौलत आपके दरबार से ।
पार भवसागर की भिक्षा मागूं हूं सरकार से ॥
जैसे भी हो पार करदे और कुछ चाहता नहीं ।
मैं हूं जल कृपा का प्यासा अब हटा जाता नहीं ॥
और छिमा का दे दे उत्तर जो भी देना हो तुझे ।
जो दया से देदे तू स्वीकार है वह ही मुझे ॥
जो सलाह हो लेनी तुमको लो श्री हनुमान् से ।
जो भी कहना था मुझे वह कह दिया श्रीमान् से ॥
यह अर्क यह धर्मशाला तेरा ही प्रताप है ।
जो दिया तूने दिया यश पा रहा प्रताप है ॥
अर्क:और इस धर्मशाला की रक्खेगा तू ही लाज ।
तेरे ही आधीन है इन दोनों का मेरा इलाज ॥
एक तोला ही था पानी लग चुका है जो तमाम ।
बस तू अब प्रतापसिंह तामीर को दे अपनी थाम ॥

और बढ़ावे जितना भी बढ़सकता है यह तेरा काम।
इतनी गुंजायश नहीं यह जानते हैं सीता राम॥

सेवक

प्रतापसिंह वल्द मुं० चिरंजीलाल,
कौम वैश्य अग्रवाल राजवंशी,
साकिन कस्बा मन्डावर, जिला बिजनौर,
हाल वकील राज श्री बीकानेर,
मु० कस्वा नौहर खास,
रियासत बीकानेर।

ॐ

पुष्प नं० २.

सूर्य कुसुमाञ्जलि

द्वितीय-भाग

रचयिताः—

श्री श्री १००८ श्री पंजाब केशरी श्रीमज्जैनाचार्य पूज्य श्री काशीरामजी म० सा० के आज्ञानुयायी प्रवर्त्तक जी श्री श्री १००८ श्री भागमलजी म० सा० के तच्छिष्य पण्डितरत्न श्री श्री १००५ श्री त्रिलोकचन्द्रजी म० सा० के शिष्य कविरत्न
'सूर्य' मुनिजी म० सा०

प्रकाशकः—
कुँवर मीठालाल शान्तिलाल खेमलीवाला
उदयपुर (मेवाड़)

प्रथमावृत्ति ५००	मूल्य सप्रेम पठन	वीर सं० २४६८ विक्रम सं० २०००

कवर पेज, दो शब्द और प्रकाशकीय वक्तव्य श्रीकृष्ण छापाखाना उदयपुर में मुद्रित हुआ।

दो शब्द

प्रिय सज्जनो ! यह कविरत्न "सूर्य मुनि" द्वारा रचित, सारगर्भित, श्रेष्ठ कविताओं की पुञ्ज रूप "कुसुमाञ्जलि" आपके समक्ष है।

इसके प्रकाशक धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग ज्ञान-दान में किया। जीवन उन्हीं का सफल है जो त्याग करते हैं,—भव्य जीवों को सन्मार्ग पर लगाते हैं, और अपनी नामवरी का मोह नहीं करते हैं।

इसके रचयिता मुनि श्री से भी हम भविष्य में इसी प्रकार की रचना की पूरी आशा रखते हैं। वे अवश्य हमारी इच्छा पूरी करेंगे।

आशा है अन्य दानी सज्जन भी ज्ञान-दान की ओर लक्ष्य देंगे।

निवेदकः—

रतनलाल मेहता

मन्त्री—श्री जैन शिक्षण संस्था

एवं

सञ्चालक—वर्द्धमान सेवाश्रम, उदयपुर।

प्रकाशकीय वक्तव्य

प्रिय सज्जनो ! यह "सूर्य कुसुमांजलि" द्वितीय भाग आपके समक्ष उपस्थित है। इसीका प्रथम भाग पहले प्रकाशित हो चुका था, जिससे समाज ने लाभ उठा, आदर किया।

यह तो सर्व विदित है कि गायन विद्या में चुम्बक से भी ज्यादा आकर्षण शक्ति है। मनोरञ्जन करना, खिन्न हृदय को प्रफुल्लित चित्त बनाकर मुग्ध करना इसका प्रधान गुण है। इसीके द्वारा व्याख्यान की रोचकता बढ़कर तन्मयता आती है। निरस अन्तःकरण में सरसता का संचार करना, गायन का ही प्रताप है। रण-विजेता सेनापति-वादियों के साथ गायन द्वारा ही उत्साह भर, विजयी बनता है। और तो क्या जंगल का अनाड़ी मृग इसीके वश में होकर अपने को बन्धन में फँसाता है। फिर इस सुज्ञानी, चतुर, ईश्वरीय ज्ञान वाले मनुष्य की क्या बात है। तात्पर्य यह कि परमात्मा की भक्ति-गुणानुवाद करने का सर्वोत्कृष्ट मार्ग यही गायन-संगीत है। इसकी रचना करने में बड़े-बड़े ऋषियों मुनियों एवं कवियों ने

अपना जीवन खपा दिया है अतः इसकी महिमा अगम्य है। और यही मोक्षमार्ग का सीधा रास्ता है।

इस कुसुमाञ्जलि के प्रणेता श्रीमान् पंडितरत्न मुनि श्री तिलोकचन्द्रजी के शिष्य कविरत्न सूर्य मुनि हैं। जो कि अल्प-वय वाले हैं। लेकिन अपनी बुद्धि की कुशाग्रता से इस अल्प-वय में भी अच्छी रचना करने लगे हैं। यह सब आपकी गुरु भक्ति का ही प्रताप है।

सं० १९९९ में शेखे काल डेढ़ माह तक उदयपुर में विराजे थे, उसी समय से इसकी रचना प्रारम्भ कर दी थी, जो कि इसी चातुर्मास में समाप्त कर दी। इससे विदित है कि आप रचना करने में बड़ी फुर्ति करते हैं।

इस भाग में सार-गर्भित, अनेक रागों वाले, जीवनोपयोगी धर्म के गूढ़ तत्वों एवं सामाजिक कुरीतियों को बतलाने वाले भजनों की रचना की गई है। जो कि पाठकों की रुचि के अनुकूल ही होंगे। सरलता से समझ में आ सके, अतः इसकी भाषा भी अति सरल ही है। यदि इसको पढ़, अपने को आत्मो-न्नति में लगाया तो अपने को सफल समझूंगा. और तभी मुनि श्री का भी परिश्रम सफल होगा।

ऐसी पुस्तक की समाज में बड़ी आवश्यकता थी, उसकी पूर्ति शनैः-शनैः हो रही है। अतः हम उक्त मुनि श्री के [illegible]ारी हैं जिन्होने निस्पृह, एव निस्वार्थभाव, एवं परोपकार

से अत्यन्त कठोर परिश्रम कर सन्मार्ग प्रदर्शक पुस्तिका की रचना की। हमें भविष्य में आप से बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं।

इसके प्रकाशन में प्रेस कॉपी आदि में प्रयास करने वालों को प्रकाशक की ओर से हार्दिक धन्यवाद है।

यदि इसमें कोई त्रुटि रह गई हो तो सूचित करने की कृपा करें।

निवेदकः—

प्रकाशक

* श्रीवीतरागाय नमः *

"सूर्य" कुसुमाञ्जलि

द्वितीय भाग

दोहा

मङ्गलाचरण

शारद ! शुभ वरदायिनि , सद्गुरु लागूं पाव ॥
वाक सिद्धि मम कीजिये , मल बुद्धि प्रकटाय ॥
प्रथम भाग जाहिर हुआ , वर्ष निन्याणूँ माय ॥
द्वितीय भाग दो सहस में , पढ़ता आनन्द आय ॥

[तर्ज राधेश्याम]

श्री वीर प्रभु का ध्यान धरो , आतम को सदा सुखदाई ॥
कर प्राप्त परम आनन्द 'सूर्य' , कर्मों से पूर्ण रिहाई है ॥
इस पुष्प वाटिका में सुजनों , गुण गाहक वन कर रमण करो ॥
बाल बुद्धि है गुणी जनों , लख त्रुटियों पर मत ध्यान धरो ॥

१ परमेष्ठी प्रभाव

[तर्ज रशिया]

भज मन मन्त्र बड़ों नवकार. इसीमे उतरे भवोदधि पार ।।
इसीसे उतरे भवोदधी पार, इसीसे उतरे भवोदधी पार ।। टेक ।।
दो पद साध्य सुभग है इसमें, साधक तीन ही धार ।।
स्तुति पद है फिर चार इमी में, नव पद हैं सुखकार ।। भज० ।।१।।
पार्श्वनाथजी नाग नागिनी, शरण दियो नवकार ।।
धरणेंद्र और पद्मावती, हुए भुवनपति सरदार ।। भज० ।।२।।
सेठ सुदर्शन को दी शूली, सुमरा शुद्ध नवकार ।।
हुआ सिंहासन शूली का, तब वर्ता मङ्गलाचार ।। भज० ।।३।।
श्रीमति का भी यश विस्तारा, सर्प पुष्प हुई माल ।।
छलनी नीर निकाल सुभद्रा, खोले चम्पा द्वार ।। भज० ।। ४ ।।
मैना सुन्दरी औ श्रीपाल के, नव पद का आधार ।।
उनका हुआ मनोरथ पूरा, मिट गया कुष्ट विकार ।। भज० ।। ५ ।।
यह कल्याणक महा मन्त्र है, चौदह पूर्व को सार ।।
"सूर्य" कहे शुद्ध भावसे ध्यावो, वर्ते जय जयकार ।।भज०।। ६ ।।

---

२ स्तुति

[तर्ज पंजाबी]

जप लेना, सदा प्रभु का नाम, सज्जनो रट लेना ।। टेक ।।

१ २ ३ ४
ऋषभ अजित संभव भय त्राता, अभिनन्दन आनन्द प्रदाता ।

[५]सुमति सर्व सुख धाम ।। सज्जनों० १ ।।

[६]पद्म [७]सुपार्श्वजी ज्ञान उजागर, [८]चन्दाप्रभु हैं गुण के आगर ।
है [९]पुष्पदन्त गुण धाम ।। सज्जनों० ।।२।।

[१०]शीतल [११]श्रेयांस आत्म ध्यानी, [१२]वासुपूज्य है केवलज्ञानी ।
[१३]विमल सदा अभिराम ।।सज्जनों० ।।३।।

[१४]अनंत नाथजी बने निष्कामी, [१५]धर्मनाथजी अन्तर्यामी ।
मेंटे [१६]शान्ति कष्ट तमाम ।।सज्जनों० ।।४।।

[१७]कुंथू [१८]अर्ह [१९]मल्ली हितकारी, [२०]मुनिसुव्रत [२१]नामी [२२]नेम यश भारी ।
सदा गावो गुणग्राम ।।सज्जनों० ।।५।।

[२३]पार्श्व [२४]वीरजी धर्म सिखाया, सबको शान्ति का पाठ पढ़ाया ।
तुम ध्यावो आठों याम ।। सज्ज० ६ ।।

"सूर्य" सिद्ध मग को धारो, दुर्गुण को तुम जल्द निवारो ।
पावो अटल आराम ।। सज्जनों० ।।७।।

३ प्रभु का भजन करो

[तर्ज मेरे शम्भू कैलास बुलालो मुझे]

सज्जनों ! प्रभु का ध्यान लगाया करो ।

अपने जीवन को उच्च बनाया करो ॥टेक॥

चिन्तामणी यह धर्म है इसका न तुझको ज्ञान है ।
नफसानि ख्वाहिश में फँसा, और मो रहा बेभान है ।
तुम खौप कजा का भी खाया करो ॥ स० ॥ १ ॥
चाँदना दिन चार का है फिर अँधेरा छायेगा ।
और फिर बुढ़ापा आएगा, यौवन तेरा ढ़ल जायगा ।
धर्म करने से प्रेम बढ़ाया करो ॥ स० ॥ २ ॥
करना पर उपकार का, यह फर्ज है इनसान का ।
परमार्थ तज स्वारथ करे, यह काम है नादान का ।
किसी दुखिया का दुःख मिटाया करो ॥स० ॥३।
तप दान शील सु भावना, येही तो जगमें सार है ।
धारण करे इनको जो प्राणी, वोही जगसे पार है ।
दृढ़ श्रद्धा को अपनी बनाया करो । ॥स० ॥४॥
"सूर्य" का कहना यही, सत मार्ग पर चलते रहो ।
शुभ कर्म भी करते रहो, दुष्कर्म भी तजते रहो ।
गुरु शिक्षा को दिलमें जमाया करो । ॥स० ॥५॥

४ आदर्श-सत्य

[तर्ज आई है गुलशन बहार]

सत्य की महिमा अपार, अपार मेरे प्यारे ॥ सत्य की ॥ टेक ॥
धर्मों में ऊँचा सत्य धर्म है, सत्य कहा है सार ॥ सार मेरे. ॥१॥
जिन वीर स्वामी जगमें इसी का, खूब किया था प्रचार ॥प्र० ॥२॥
छोड़ा न सत्य को खंदक मुनिने, दीनी है खाल उतार ॥ उतार. ॥३॥
रानी पदमनी सत्य सुमग पर, अग्निमें होगई छार ॥ छार. ॥४॥

हुवा हरिश्चन्द्र सत्य का धारी, बिका है काशी बजार ॥बा०॥५॥
सेठ सुदर्शन सत्य को पाला, तन का किया था सुधार ॥सु० ॥६॥
सत्य को पालो हरदम हे प्राणी ! सत्य ही सबका अधार अ. ॥७॥
साल निन्नावे चित्तौड़गढ़ में,'सूर्य' कहे ललकार ॥जनकार मेरे ॥८॥

५ नर जन्म महात्म्य

[तर्ज गजल ताल चलत]

मानव जन्म अमोल है, सदा जिनंद गुण गाया कर ।
अज्ञानतिमिरको त्याग कर, आत्मिक गुण दर्शाया कर ॥ टेर ॥
कामादिक में फँसकर प्राणी, क्यों वैभव में राँच रहा ।
नाशवान् धन दौलत सारा, धर हृदय प्रभु साँच कहा ।
ऐसी ममता दूर कर, नरभव सफल बनाया कर ॥मान० ॥१॥
कर पार चौरासी नर तनका, पाना समझो कोई खेल नहीं ।
जन्म-जन्म के शुभ कर्मों का, होता जब तक मेल नहीं ।
दुर्गति विकट जंजाल से,खुदको आप बचाया कर॥मान० ॥२॥
सर्वज्ञ देवकी सत वाणी ने, कैसा जग उपकार किया ।
दुराचार को दूर हटाके, सदाचार का सबक दिया ।
सुख पाना है जो तुझे, नित्य इसे अपनाया कर ॥मान० ॥३॥
बिन गुरु देश धर्म संघ सेवा, तूने करी कमाई क्या ।
दुखिया भाई बिलक रहा है, तूने मौज उड़ाई क्या ।
तुच्छ जीवन में अएदिला, उत्तम कर्म कमायाकर ॥मा०॥४॥
नाटक सिनेमा खेल तमाशे, विषयों में नादान रहा ।
तेल फुलेल सुगन्ध लगाकर, बाग सैर गलतान रहा ।
इन झगड़ो को त्यागकर, सत्संग में आया कर ॥मान० ॥५॥

सब तत्वों में सार अहिंसा, निश्चय खास अनूपम है ।
उसका सत् मन वचन कर्म से, पालन ही अति उत्तम है ।
तज हिंसा कर्म को बावरे, दयामें दिलको लगाया कर मा.६॥
सभी सिद्धान्त खोलकर देखो, वैभव किसके साथ गया ।
क्या गरीब क्या धनी जगत से, अन्त पसारे हाथ गया ।
आशा तृष्णा छोड़ कर, सत्य 'सूर्य' प्रकटाया कर ॥मान०॥७

२ जीवन अनित्य है

[तर्ज पपीहा काहे मचावे शोर]

क्षणिक जीवन का छोड गरूर ॥ टेक ॥
कोई सदा रहे नहीं जगमें चलना पड़े जरूर ।
अन्त समय कुछ काम न आवे, पड़े रहेंगे दूर ॥क्ष० १॥
महल बंगले और अटारी, देखत होंगी धूर ।
जिस दिन हंसा निकले तनसे, काढ़े घरसे दूर ॥क्ष० २॥
गई जवानी आया बुढ़ापा, ढल जावे सब नूर ।
कुटुम्ब कबिला तेरी नारी, बोले वचन क्रूर ॥ क्ष० ३॥
ख्वाहिश बढ़ती जावे दिन-दिन, पावे धन प्रचूर ।
प्रभु भजन कबहूँ नहीं कीना, खूब रहा मगरूर ॥क्ष. ४॥
जगके झंझट छोड़ बावरे, हो न नशे में चूर ।
'सूर्य' सदा इन्द्रिय विकार को, तू करदे काफूर ॥क्ष.५॥

७ बचन विचार के बोलो

(तर्ज छोटे से बलमा मोरे आँगना में रूम झूम खेले)

परम मधुर प्यारे सत्य वचन बोलो ।
दुःखप्रद बचन सुनायके, जगमें मत डोलो ।टेक।
कटुक वचन के वास्ते, मत मुखड़ा खोलो ।
कर्कश वाणी से तुमना, किसी हिरदा छोलो ॥पर० १॥
भरते न वचन के घाव, औषध लाख टटोलो ।
हितके वचन पहले अपने, हिरदे में तोलो ॥ परम. २॥
जीभ घिसे न लागे दाम, मिष्ट वचन अनमोलो ।
सत्य सरोवर को हाँ छोड़कर, क्यों कीचड़ घोलो ।प. ३॥
बिन सोचे द्रोपदी समान, भाई बोल न बोलो ।
आपस में भाई भाई लड़मरे, महाभारत जोलो ।प. ४॥
'सूर्य' वचन कटु पापको, पचखान में धोलो ।
सप्तम् अध्याय दशवैकालिक, पढ़कर आँखें खोलो ।प-५

८ गुरु गुण कीर्तन

[तर्ज जावो २ ऐ मोरे साधु रहो गुरु के संग]

पाये २ हैं ऐसे ज्ञानी, गुरु दर्शन सुख कन्द ॥ टेक ॥
रत्नत्रय के धारण करता, क्षमा शील गुण वृन्द ।
कठिन परिषह सहते हरदम, तोड़े कर्मका फन्द ॥ पाय ॥१॥
पंच महाव्रत पाले, शुद्ध मन लीन आत्मानन्द ।
दोष अठारा त्याग दिये हैं, जीता मोह का फंद ॥ पाय ॥२॥
शम दम खम धारक गुरु, मेटे जन्म मरण दुख द्वन्द ।

जग जीवन हित करने वाले, वाणी जिन सिद्धारथनंद ॥पा॥३
त्याग भजन में मग्न रहे नित्य, शोभे पूनमचन्द।
राग रोष नहीं करे किसी पर, होवे पाप निष्कंद ॥पाय ॥४॥
कंचन कामिनि दूर करे, नहीं फंसे विषय के गंद।
"सूर्य" कहे गुण गावो निशि दिन, वर्त्ते परमानंद ॥पाय॥५॥

९ दानियों की प्रशंसा

[तर्ज गजल कौन कहता है के जालिम को सजा मिलती नहीं]

दानियों का क्या कहो जीवन, सुफल होता नहीं,
नेक कामों का कहो क्या, नेक फल मिलता नहीं ॥ टेक ॥
ला सकेगा वह कहाँ से, भूख में खाने को अन्न।
जो कृषक अपने करों से, खेत को बोता नहीं ॥ दानियों ॥ १ ॥
छल कपट से जोड़ कर, करता है जो जर को जमा।
कुछ दिनों में क्या वह सब जड़, मूल से खोता नहीं ॥दानियों॥२॥
जो कोई आपस में करता, हर किसी से दुश्मनी।
वो कभी दुनिया में सुख से, नींद भर सोता नहीं ॥दानियों ॥३॥
"सूर्य" नरतन पाके जिन शुभ, धर्म को नहीं खोजता।
क्या वह फिर २ खायेगा भव-सिन्धु में गोता नहीं ॥ दा० ॥४॥

१० जग में धर्म सुखदाई

[तर्ज पंजाबी]

जिन धर्म नियम का पालन कर, भव सागर से तिरना है ॥टेक॥
अनमोल जन्म तेने पाया, विषयों में क्या ललचाया।

जना सपने का सा जान, प्रभु का नाम सुमरना है ॥ जिन ॥१॥
है नाशवान यह काया, इससे क्यों प्रेम लगाया।
सुकृति तूने नहीं कमाया, आखिर होगा मरणा है ॥ जिन ॥२॥
नूतन फैशन खूब बनावे, सिनेमा नाटक तुम को भावे।
परनारी से प्रेम लगावे नीच गति जा गिरना है ॥ जिन ॥ ३ ॥
सदा मद पीव मॉस जो खावे, सद्गति कभी नहीं पावे।
चुगली निन्दा में वक्त गमावें,लख चौरासी फिरना है ॥जि०॥४॥
क्रोध लालच माया दुखदाई, मान को दूर हटादे भाई।
क्षमा सन्तोष करेगा पार,विपत सब इसीसे हरना है ॥जि०॥५॥
श्री भागमलजी उपकारी, गुरु तिलोकचन्द सुखकारी।
दे उपदेश जीवन हितकारी,सदा जिन प्रभु का शरणा है ॥जि.॥६॥
साल निन्नाणूवे में है भाई, नगरी उदयपुरी के मांही।
करो दया धर्म सुखदाई, "सूर्य का सुकृति करना है ॥ जि० ॥७॥

---

११ चेतन ! अबतो चेतो

[तर्ज अष्ट पदी लावणी]

चेतले अबतो ए प्राणी जगत में थोड़ी जिन्दगानी ॥ टेक ॥

प्रात- उठ प्रभु सुमरिन करना, धर्म से सरे काज अपना।
यहाँ पर कोई नहीं अपना, जगत सब दो दिनका सपना।
दोहा:—चार दिनो का चॉदना, फेर अन्धेरा जान।
मूरख क्यों नहीं सोचता,धरा रहे सामान।
जतावे तुझको गुरु ज्ञानी ॥ चेत ॥१॥

चालः- रहे मतलब में दीवाना, नहीं परमारथ पहिचाना।
सत संगत को नहीं जाना, सदा विषयों मे सुख माना।

दोहाः- कुछ नहीं उत्तर दे सके, धर्म-राज दरबार।
नहीं शिफारिश चल सके, नहीं बैरीष्टर मुखत्यार।
पछतावेगा अभिमानी ॥ चेत ॥ २ ॥

चाल- युधिष्ठिर भीम और अर्जुन, शकुनी करण रु दुर्योधन।
विभीषण मेघनाथ रावण, करे इतिहास सदा वर्णन।

दोहाः— सिकन्दर नैपोलियन, बड़े बड़े सुलतान।
जाहो जलाली छोड़ के, कर गये कूच जहॉन।
काल नेकी सबकी हानी ॥ चेत ॥ ३ ॥

चालः—माता पिता सुत बान्धव दारा हुआ क्यों धनमें मतवारा।
कज़ा का आवे हल्कारा छोड़ कर जायगा सारा॥
दोहाः-ख्वाब तुल्य हो जायगा, सभी कुटुम्ब अरमाल।
भजले आखिर ईश को, झूठा जगत जंजाल॥
पुनः नहीं अवसर अज्ञानी ॥चेत ॥४॥

चालः—प्रवर्त्त क'भागमलजी" ज्ञानी 'त्रिलोकजी"गुरुवर सुखदानी।
जो पाले दया धर्म जानी, पायगा परमानन्द प्राणी।

दोहाः—साल निन्नाणु माघ में, नाथद्वारा मंझार।
नर-नारी अति मोद भया है, खिला धर्म गुलज़ार॥
'सूर्य' कहे गहो सुजिन वाणी ॥चेत०॥ ५॥

१२ माननिषेध

[तर्ज जाल मन भूल न जाना कहे जाते हैं]

मान को भूल न करना, ये बुरा है भाई ।
संग इसका भी तजो, यह है बड़ा दुःखदाई ।टेक।
आठ मद जानले, आगम ने जिसे बतलाया ।
जिसने न किया, उसने बुराई पाई ॥ मान० ॥१॥
गर्व में चूर हुआ, लकरति गया जब ।
दुर्गति ऐसी हुई जो न बखानी जाई ॥मान०॥२॥
सनतकुमार रूप देव, देखने आया ।
ज्योंही मद मनमें किया, सोलह रोग प्रगटाई म.३।
पिता पिंजरे में दिया, कंस अभिमानी ने ।
कृष्ण ने दण्ड दिया, इतिहास रहा बतलाई ।मा.४।
जिसने अभिमान किया, नष्ट हुआ आखिर में ।
इसका परिणाम बुराहै, यही दिया दर्शाई । मा. ५।
'सूर्य' अभिमान तजे पूरण आनन्द पावे ।
वीर वाणी को ग्रहण करो चित लाई ॥ मा. ६ ॥

---

१३ नर जन्म सफल कर

[तर्ज गजल]

अए दिला सुन वक्त जाता, क्या तुम्हें कुछ ध्यान है ।
रहना यहाँ दिन चार का, क्यों सो रहा बेभान है ॥ टेक ॥

लंकापति रावण सरीखा, और जरासिन्ध से बली ।
काल ने उनको भी खाया, क्यों हुआ ग़लतान है ॥ अ० ॥ १ ॥

देखले शुभ काम में, परमाद करना है मना ।
उम्र टूटे फिर जुड़े नहीं, शास्त्र का फरमान है ॥ अ० ॥ २ ॥

नींद गफ़लत त्याग के, दीनों की रक्षा कीजिये ।
खोटे कर्मों से बचे हैं, वह गुणी इन्सान है ॥ अ० ॥ ३ ॥

ये नसीहत 'सूर्य' की तू निज हृदय में धारले ।
हो भला सबका उसी में, ही तेरा कल्याण है ॥ अ० ॥ ४ ॥

—०—

१४ पार्श्व जिन स्तुति

(तर्ज पनजी मुंडे बोल)

श्री पार्श्वनाथ प्रभु, वामा देवी के घर जायाजी ।
मेरे मनको माया जी ॥ टेक ॥

दशवें देवलोक से नगर बनारस चवकर आयाजी ।
अश्वसेन नृपो के घर में, आनन्द मङ्गल छाया जी ॥ मेरे ॥ १ ॥

कल्पवृक्ष सम आशा पूरे, दुःख विनसाया जी ।
चिंतामणी सरीखा, जगवल्लभ जिनरायाजी ॥ मेरे० ॥ २ ॥

कष्ट दूर होवे भक्तों का, जो शुद्ध मन से ध्याया जी ।
कुमुद चन्द्र की फली कामना, जगमें यश फल पायाजी । मेरे ३॥

दुष्ट मुष्ट आदिक भय सातों, सबही दूर भगायाजी ।

बाल न बांका करे शत्रु, जो जिन शरण में आयाजी ॥ मेरे ४ ॥

विष प्याला अमृत हो, होवे निर्मल काया जी ।
ताव तेजरा निकट न आवे, होवे मन चायाजी । मेरे ५ ॥

करुणासागर दीनदयालु ,तुम सम नजर नहीं आयाजी ।
सब मिलके गुण गान करो, भाया और बाँयाजी ॥ मेरे ॥ ६ ॥

संवत निन्नाणु चितौड़ शहरमें, होली चौमास मनायाजी ।
गुरु प्रसादे कहे 'सूर्य' रङ्ग रहे सवायाजी ॥ मेरे ॥ ७ ॥

—०—

१५ वय अनित्य है

(तर्ज लगड़ी लावणी)

यौवन वय को पाकर प्राणी, क्यों इतना गर्वाता है ।
एक दिन यौवन ढ़ल जावेगा, जो देख २ हर्षाता है ॥ टेक ॥

चम्पानगरी नृप करकण्डु, न्याय गुणों में था भारी ।
प्रजा पालक शत्रु विदारक, दीन जनों का हितकारी ।
एक दिन नृप गोकुलमें आए कर सेना संग तैय्यारी ।
चारों ओर ले गोकुल देखा, बछड़ा कूदा तिणवारी ।

शेरः- राजा बछड़ा देखकर, दिलमें किया सुविचारजी ।
मनमें प्रसन्न हुवा अति, कैसा ये सुन्दराकारजी ॥१॥

गोपाल को तुर्त बुलाके, नृप ऐसे हुक्म सुनाता है ॥ १ ॥

चालः– दुःख नहीं देना कबहुँ इसको, पालन तुम करते रहना ।
भूप ने खुश हो नाम दिया, दुर्धमन्त साँड इसे कहना ।
यौवन काल में मस्त हुआ वह, हृष्ट पुष्ट कोई भय है ना ।
कालान्तर में यौवन बीरता, अब वृद्धपन का दुःख सहना ।

शेरः– माँस सूखा चर्म सुकड़ा, शक्ति हुई काफूर जी ।
सब इन्द्रियाँ निर्बल भई, बिगड़ा बदन का नूर जी ॥२॥

मिलतः—एक तरफ वो पड़ा है जाकर, उठा न बैठा जाता है ।ए. २॥

चालः– भूपत आया फिर गोकुल मे वृद्ध बैल लख घबराया ।
पूछा बछड़ा कहाँ गया, बतलाओ मेरा मन चाया ॥
यह वोही बछड़ा है राजन्, जो आपकी नजरोंमें आया ।
नृप बछड़े का देख हाल, संताप घणा मनमें पाया ॥

शेरः– मन्त्री से फिर पूछता, ऐसी दशा है क्यों हुई ।
जरा वय व्याधि लगी, यौवन उमर जाती रही ॥३॥

मिलनः–राजा सभा में पहुंचा जल्दी, वैद्यराज को बुलवाता है ।ए.॥

चालः– भूपत पूछे वैद्यराज से, तीन रोग है दुखकारी ।
जन्म मरण और जरा, जीवको दहते हैं हरदम भारी ।
औषधि बतलादो मुझको, जो मेरे लिये हो हितकारी ।
जरा काल न ग्रहे मेरे को, अमर होवे जिन्दगी सारी ।

शेरः– देऊँ द्रव्य अखूट तुमको, भोगो सुख भरपूर जी ।
शीघ्र साधन कीजिये, जिससे कि हो दुःख दूरजी ॥ ४ ॥

मिलनः–कर जोड़ तब ही वैद्यराज, राजा से वचन सुनाता है । ए.
यह बातें हुई ना होनेकी, यह वैद्यराज ने समझाया ।

सुन करके चट वैराग्य चढ़ा, गद्दी पे कुँवर को बैठाया।
जातिस्मरण ज्ञान हुवा, प्रत्येक बोध पद है पाया।
अष्ट कर्म का फन्द काटकर, अविचल धाम शीघ्र पाया।

शेरः- ज्ञानी हुवे यो चार सबको ही मिला शिव-द्वारजी।
वीर जिनन्दजी वर्णया उतराध्यन संभारजी ॥ ५ ॥

मिलतः-चार स्वयंबोधी में जानो, इनका नाम भी आता है। ए.॥

चालः- दो हजार सम्वत के माहीं, श्रावण मास सुहाया है।
शहर उदयपुर बड़ा अनूपम, आनन्द मंगल छाया है।
गुरु त्रिलोक ने नित्य, वीरजिनन्द संदेश सुनाया है।
जो उपदेश श्रवण कर, सब समाज हरषाया है।

शेरः- आदर्श जीवन आत्मज्ञानी का, बखाना जायगा।
सत्य पंथ पर जो चलेगा, वह परम पद पायगा। ६॥

मिलत.-यौवन वय का मद नहीं करना, 'सूर्य' सभा मे गाता है ए.॥

—०—

१५ ममत्व छोड़ो

(तर्ज हरियाँणा)

नर क्यों करता मेरी तेरी, क्या संग में ले जावेगा ॥ टेक ॥
यह सुन्दर सी काया तेरी, आखिर होगी खाक की ढ़ेरी।
त्रिया पास रोवेगी तेरी, कोई संग न जावेगा ॥ नर ॥ १ ॥

जोर जुल्म से धन को जोड़ा, दया दान से मुखड़ा मोड़ा।
आखिर यहाँ का यहीं छोड़ा, अन्त काम न आवेगा ॥ नर ॥२॥
नेकी बदी जो तेने कमाई, वोही संग चलेगी भाई।
होगा हिसाब परभव माहीं, फिर क्या बतलावेगा ॥नर॥३॥
बुरे कर्म से प्रेम लगावे, सत्संगत को तू नही चावे।
वातां साटे जन्म गमावे, भव–सागर दुःख पावेगा ॥ नर ॥ ४ ॥
"गुरु–त्रिलोकचन्द" फरमावे तू जग में क्यूँ गोते खावे।
भक्ति से ज्यों जिनवर ध्यावे, "सूर्य" परम पद पावेगा ॥नर॥५॥

१७ तृष्णा निषेध

[तर्ज तेरे पूजन को भगवान बना मन मन्दिर आलेशान]

तृष्णा बहुत बुरी नादान, समझ ले यह है दुःख की खान ॥ टेक ॥

आकाश सी तृष्णा जानों, इसका अंत नहीं तुम जानो।
डाले वैतरणी दरम्यान ॥ समझ ॥ १ ॥
मधु मक्खी देखो भाई, फूल–रस करे इकट्ठा लाई।
खुद नहीं खावे करे न दान ॥ समझ ॥२॥
सागर सेठ था वैभव धारी, लगी तृष्णा की बुरी बिमारी।
अन्त समय में निकले प्राण ॥समझ॥३॥
मुहम्मद गजनी का सुन हाल, खजाना जिसके पास विशाल।
अकेले छोड़ी अन्त जहान ॥ समझ ॥४॥
जम्बू शालीभद्र बड़भागी, ऋद्धि अतुल इन्होंने त्यागी।
पहुँचे धन्नाजी निर्वाण ॥ समझ ॥ ५ ॥
"सूर्य" छोटी सादड़ी आया, सबको दया धर्म बतलाया।
त्यागो तृष्णा चतुर सुजान ॥ समझ ॥६॥

१८ संसार सागर से तिरने की नैय्या

[तर्ज गजल बिना रघुनाथ के देखे नहीं दिल को करारी है]

धर्म की नौका पै आवो, जगत से पार जाने को।
करो सत्सङ्ग से प्रीति, ज्ञान उत्कृष्ट पाने को ॥ टेक ॥

फिरा संसारचक्कर में, अनादी काल से प्राणी।
यह अवसर हाथ में आया, दुःखी का दुःख मिटाने को ॥धर्म॥१॥
मनुष्य जीवन में मुक्ति की, भला तू साधना करले।
कज़ा जब आयेगी सिरपै, नहीं कोई साथ जाने को ॥ धर्म ॥२॥
खैर अपनी मनाते हैं, जो गैरों को सता करके।
लगा कर पेड़ शूलों के, चाहते आम खाने को ॥ धर्म ॥ ३ ॥
कथन सर्वज्ञ का मानों, जो होना पार दुनियाँ से।
करो हर जीव से मैत्री, प्रेम भक्ति बढ़ाने को ॥ धर्म ॥ ४ ॥
अहिंसा धर्म को धारो, द्वेष ईर्षा को तुम टारो।
"सूर्य" सनवाड़ में आया, वीर वाणी सुनाने को ॥ धर्म ॥ ५ ॥

१९ तप का आदर्श

[तर्ज-धर्म का डंका आम में बजवा दिया वीर जिनेश्वर ने]

तप से पापी भी शुद्ध हुए, दिल में धारो जी तुम अपने।
क्यों मौज शौक मे मस्त बने, यह भौतिक हैं सब सुख सपने ॥टेक॥

सुरतरु सम इच्छित फल दाता, इक तप ही तुम केवल जानों।
इससे बहुत शक्तियाँ प्राप्त होय, यह जानों दिल में तुम अपने॥त.॥१

जो सिद्ध कुम्भ चिंतामणी में, ताकत नहीं पाई जाती है।
वाँछित फल पावे है तपसे, यह शिक्षा धारो दिलमें ॥ तप. ॥२॥
अर्जुन माली ने घोर पाप कर, निज जीवन को भ्रष्ट किया।
शिव धाम मिला तप से उनको, विश्वास करो मनमें अपने ।त.३॥

हिंसक संयति परदेशी थे और, प्रभा चोर जगमें नामी।
तपसे वे भी तिरगये तुरन्त, कुछ मनन करो दिलमें अपने। त. ४॥
कर्मों का बन्द नशाने को, 'सूर्य' शस्त्र तप को लेलो।
इससे ही भवनिधी पार तिरो, यह लिखलो चितमें तुम अपने ।त.५॥

---

२० भलाई का कार्य करो

[तर्ज बिछड़ा की खादी पीहर चाली हो आलीजा]

जगमें भलाई कर चालो हो चेतनजी।
शुभ ध्यानवान चेतनजी ॥ टेक ॥

दो:-पूर्व पुण्य नर तन मिला, आँख मींच मत सोय।
बाटी साटे खेत को, रे प्राणी मत खोय।

चलत:-वीर प्रभुजी, यूँ दर्शाया हो चेतनजी ॥ शुभ ॥ १॥
दोहा:—नव घाटी में जीव तू भ्रमा अनन्ती वार।
अब तो अवसर मिल गया देखो नयन उघार।

चलत:-सत गुरू यों समझावे, हो चेतनजी ॥ शुभ ॥ २ ॥
दोहा:—तृष्णा बहुत बढ़ाय के, कीने पाप महान।

श्रेष्ठ गुणों को भूल कर, बना निपट नादान ।

चलतः-जगमें क्यूं भरमाया हो, चेतनजी ॥ शुभ ॥ ३ ॥

दोहाः-अवगुण को अब त्याग दे, कर नेकी के काम ।
'सूर्य' कपासन में कहे, सदा भजो प्रभु नाम ।

चलतः-अब निज आँख उगाड़ो हो चेतन जी ॥ शुभ ॥ ४ ॥

—०—

२१ दुनियाँ दुरंगी

(तर्ज मत पिवो सुजान चित धाने पानी)

रखिये कैसे खुश जग यार, दुरङ्गी दुनिया है ॥ टेक ॥

चुप रहे तो गूंगा कहदे, बहु बोले वाचाल ।
सरल रहे तो मूर्ख बतावे, यह दुनिया का हाल ।
करे मनचाहा व्यवहार ॥ रखिये ॥ १ ॥

क्षमा शील को बुजदिल कहती, जंग करे तो पापी ।
जोर जुलम करने वाले को, कहती है परतापी ।
वाणी भिन्न-भिन्न उचार ॥ देखिये ॥ २ ॥

नहीं खर्चे कंजूस बतावे, खर्च करे खर्चीला ।
ऊँची गर्दन अकड़ बाज की, नम्र रहे तो ढीला ।
मचावे उल्टी जगमें रार ॥ रखिये ॥ ३ ॥

धर्मी को धूर्त बताती, त्यागी को जड़ जोगी ।

दीन बिचारे दुःख पाते हैं, मौज उड़ावे ढ़ोगी ।
कहाँ तक बतलावे विस्तार ॥ रखिये ॥ ४ ॥

दुनियाँ को गुण कैसे सूझे, चश्मा लगा अपराधी ।
'सूर्य' काम निर्मल करना है, त्यागो कर्म उपाधि ।
तब होगा उद्धार ॥ रखिये ॥ ५ ॥

—०—

२२. चेतावनी

[तर्ज नर कर उस दिन की यादा के जिस दिन चल २ होगी]

उस दिन की कर तदबीर, तेरा आवेगा परवाना ॥ टेक ॥

बाग बगीचा महल बनावे, सबको छोड़ यहाँ ही जावे ।
करना जो कुछ करले बन्दे, फिर तो होगा पछताना ॥ उस ॥ १ ॥

यह मात पिता और भ्राता है, खुद गर्जी का नाता है ।
वक्त पर काम कोई नहीं आता, अकेला होवेगा जाना । उस २ ।

बालकपन तो खेल गँवाया, जवानी विषयों में भरमाया ।
वृद्धपन तृष्णा को अपनाया, नहीं सीखा प्रभु गुण गान ॥ उस ३ ॥

नेकी बदी जगमें आवे, आवे ज्ञानी गुरू तुझे समझावे ।
प्रभु गुण प्रभु भजने से पावे, 'सूर्य' का तुमको बतलाना । उ. ४ ।

२३ सात कुव्यसन निषेध

(तर्ज नाटक की चलत)

सज्जनों सात व्यसनों से डरना, हरदम जान, जान, जान, ॥टेक॥

पहिला पाप जुवे का भारी, पाण्डव द्रौपदी हारी तभी।
नल की हुई बहुत ख्वारी, सुन धर ध्यान— ३ ॥ सज्जनों ॥ १ ॥

जिसने माँस पराया खाया, उसने अपना जन्म गँवाया।
फिर दोजख में दुःख उठाया, सुन कर ज्ञान-३ ॥सज्जनो॥ २ ॥

जो मदिरा को पीवे भाई, वे दुर्गति में पड़ते जाई।
यादव वन्श हुआ दुःखदाई, हुई द्वारका नाश ३ ॥ सज० ३ ॥

जो वैश्या से यारी करते, वो निज तन धन धर्म को खोते।
फिर वे नाना दुःख है भरते, यह है दुःख की खान ३ ॥स० ४ ॥

जो जीवो की हत्या करते, जिनके श्वास तड़फ के निकलते।
वे नर घोर नरक घर करते, देना बदला जान ३ ॥ स० ॥ ५ ॥

चोरी कर्म महा दुखदाई, देवे कुलमें दाग लगाई।
कैदी बन जग होय हँसाई, सुन धर कान ३ ॥ सज्जनों ॥ ६ ॥

है परनारी दुःख की खान, जहाँ से मिटावे नामोनिशान।
रावण कीचक हुए महान, कोई मत करना ध्यान ३ ॥ स० ॥७॥

सात व्यसन को तुम छोड़ो, प्रभु के चरणों में चित्त जोड़ो।
कहे 'सूर्य' कर्म को तोड़ो, लो तुम शिक्षा मान ३ ॥ स० ॥ ८ ॥

—०—

२४ कर्मों का फल

(तर्ज पनजी मुड़े बोल)

कर्म गति टरती नहीं टारीरे सुनलो प्राणी रे ।
विचित्र बखानी रे ॥ टेक ॥

मनमें अफ़सर बनूँ विचारे, छत्र चमर को धारी रे ।
लिखा मुक़द्दर में जो, सके वो कौन निवारी रे ॥सुन ॥ १ ॥

आलिम फाज़िल हुवा सुपढ़के, हर हुनर में मांहि रे ।
भाग्य बिना भाई धक्कें खावे, जगमें जाहिर रे ॥ सुन ॥ २ ॥

आदि जिनन्द को बारा मास तक, मिला न अन्न और पानी रे ।
नृप नल दमयन्ति बन भटके, सब लो जानी रे ॥ सुन ॥ ३ ॥

रामचन्द्र को राज तिलक, देने की दशरथ ठानी रे ।
कर्म बनाई ऐसी भेरी. बनका निकास दिया रानी रे ॥सुन ॥ ४ ॥

हरिश्चन्द्र की तारा रानी, जाय बिकानी रे ।
आप बिके भंगी के जाकर भरा नीच घर पानी रे । सु. ॥ ५ ॥

खन्दक जैसे मुनिवर देखो, तनकी खाल उतारी रे ।
गजसुकमाल सिर धरे अङ्गारे, सही बेदना भारी रे । सु. ६ ॥
कर्म बड़े बलवान है जगमें, डरो सदा नरनारी रे ।
सत्य कर्म जो करे सके फिर कौन बिगारी रे । सुन ॥ ७ ॥

सम्वत निन्याणु शेष काल में, शहर उदयपुर आये रे ।
'सूर्य' गुरुराज चरण प्रसादे, सत। मन माया रे । सुन ८ ॥

२५ दौलत से मान

[तजे रागनी तीन ताल]

दोहाः– मुजरा धनियों से करे, कर कर लम्बे हाथ ।
दीन-खीन वित हीन की, कोउ न पूछे बात ॥ १ ॥

दोहाः– पैसे से सरदार है, पैसे से घर बार ।
पैसा रहा न पास मे, सभी देत धुतकार ॥ २ ॥

चालः– जगमें पैसा की बडाई है, सरदारी इसी ने पाई है ॥टेक॥

होवे जर पास किसीभी नरके, खुशामद करे सभी जी भरके ।
श्रीमन्ताइ पाई है ॥ सर ॥ १ ॥

जितने गुणी जगत के अन्दर, इसने बनाये सबको बन्दर ।
त्यागी ने ठुकराई है ॥सर॥ २ ॥

पैसे से कुलवन्त कहावे, बुद्धिमान भी यही बनावें ।
करते सब मित्राई है ॥सर॥ ३ ॥

पैसा प्रभु भजने नहीं देता, परदेशों में जाकर रहता ।
झेलता बहू कठिनाई है ॥ सर ॥ ४ ॥

निर्धन को कोई न चावे, अपने पास कोई न वैठावे ।
ना करे आदर सगे भाई है ॥सर ॥५॥

कॉणाँ खोड़ा पैसा परणावे, प्रेसिडेंट की पदवी पावे ।
सभी काम सुखदाई है ॥ सर ॥ ६ ॥

झूठे को सचा यह करदे, जुल्म सत्यवादी सिर धरदे ।
झूठी साख भराई है ॥ सर ॥ ७ ॥

मिथ्या भावो को दूर भगा जाँयगे ॥ सत्य ॥७॥

सत्य धर्म का झंडा लहरायेगे हरदम ।
'सूर्य' सत्य सुगुण को जता जाँयेगे ॥सत्य ८ ॥

—०—

२८ खोटी संगत निषेध

[तर्ज मेरे मोला मदोने बुला ले मुझे]

बुरी संगत में भूल न जाया करो ।
अच्छी संगत से प्रेम लगाया करो ॥ टेक ॥

संगत हुई कुधातु की, सोने की आभा घट गई ।
कांजी के संग से दूध की, गुण श्रेष्ठता भी मिटगई ।
जदे कुँवर का ध्यान जमाया करो ॥ बुरी ॥ १ ॥

हालत पतंगकी क्या हुई,जब दीप संग प्रीति करी ।
निज ज्ञान खोई हंसने, जब काग संग यारी धरी ।
हींग कस्तूरी नाहीं मिलाया करो ॥ बुरी ॥ २ ॥

अच्छी संगत दूधसे की जलकी कीमत बढ़ गई ।
श्वेत रंगत दूध की भी, जल के ऊपर चढ़ गई ।
लट, भवरी का ध्यान लगाया करो ॥ बुरी ॥ ३ ॥

साधु संगत जब हुई, ऐलाची नामा चोर को ।
परदेशी नृप श्रावक हुवा,त्यागे सभी दुष्ट कर्मको ।
सदा संगत से लाभ उठाया करो ॥ बुरी ॥ ४ ॥

ज्येष्ठ में बड़ी सादड़ी; त्रिठाणा शेखा कालमे ।
'सूर्य' सत्संगी बनो, सबको कहा इजलास में ।
बद सोहबतसे दिलको हटाया करो ॥ बुरी ॥५॥

—०—

२६ दान की महिमा

[तर्ज मेलो आई हो सगीजी थारे पावना हो]

देवो दान सुपात्र ही तुम सुख पावना जी ।
काटे जन्म-जन्म के कर्म सु जग तिर जावना जी ॥ टेक ॥

तिरने के हैं कारण चार, दान तप शील भावना सार, ।
है पहिले दान अधिकार, दीजे दान अभय सबही को ।
जिनन्द फरमावना जी ॥ देवो ॥ १ ॥

मुनि को लख धन्ना हर्षावे, सदभावों से घृत बहरावे ।
जिससे आदि जिनन्द कहलावे, फिर चार तीर्थ स्थापन कर ।
जग वर्तावना जी ॥ देवो ॥ २ ॥

वीर की चेली हुई प्रधान, चन्दनबाला दिया सुदान ।
देव आ ने कियो सन्मान, केवल ज्ञान प्राप्तकर ।
शिव पद को पावनाजी ॥ देवो ॥ ३ ॥

मेघरथ भूप दया रस भीना, शरण परेवा रख तन दीना ।
ऐसे शान्तिनाथ पद लीना, जगके सब प्राणी का ।
मृगी रोग मिटावनाजी ॥ देवो ॥ ४ ॥

फिकर से बैठा घरके मांही. यहाँ तीए पर चिन्ही आई ।
होश विगड़े सुनके भाई, चलते ढीली चाल ॥ स० ॥ ७ ॥

घरमें नारी यों चिल्लावे फिकरा गड़ के नया सुनावे ।
भौंदू रोटी कहाँ से आवे, घरमें रहा न आटा दाल ॥स० ॥८॥

जब नारी ने सीधी सुनाई भौंदू भाई ने मुंह की खाई ।
पाकिट में अब रही न पाई, आया कैसा महा बवाल ॥ स० ॥९॥

अगड़ बम्ब को जा ललकारा, बावा ने सुनते ही फटकारा ।
पहले लावो भोग हमारा, पीछे करो सवाल ॥स०॥ १० ॥

होगया मालूम भेद तुम्हारा, सट्टे में तूने सब कुछ हारा ।
हुआ छक्का लगा दुबारा, आवे घर में जल्दी माल ॥ स० ॥११॥

हाट झोपड़ा नोहरा विका, फिर भी लगाया दुआ छक्का ।
लेकिन वहाँतो खुल गया पक्का, बिलकुल हुआ कंगाल ॥स०१२॥

सट्टे वालों का पिटे दिवाला, होता है उनका मुंहकाला ।
रुतबा उनका मिटा है आला, होवे बुरे हवाला ॥ स० १३ ॥

त्यागो सट्टे को सब भाई, ऋद्धि सिद्धि मिले सवाई ।
बड़ी साहूकारी है सुखदाई 'सूर्य' न फँसो सट्टे के जाल ॥ स० ॥१४॥

३२ स्त्री शिक्षा

[तर्ज पनजी मुड़े बोल]

सुनो बहनों यह ज्ञान सूत्र का, ध्यान लगाई जी।
कर्म कटजाईजी ॥ टेक ॥

बहिने बच्चों को लेकर, व्याख्यान सुनने को आईजी।
बच्चा बच्ची रोवा लाग्या, हाक मचाई जी ॥ बहनों ॥ १

ज्ञान ध्यान की बाता छोड़ी, नारी सभा बनाई जी।
घर के झगड़े छेड़, कथा जी से बिसराई जी ॥बहनों ॥२

गङ्गाबाई कहे, जमाई मेरे घर पर आया जी।
जमुना बोली, मेरे तो पायल घड़वाई जी ॥ बहनों ॥ ३

छोरा घरमें उधम मचावे, पिस्ताबाई बोली जी।
इसी वास्ते यहाँ आने में, देर लगाई जी ॥ बहनों ॥ ४

इधर उधर की निन्दा करके, वक्त दिया गमाई जी।
आपस में वे करे लड़ाई, खाक उड़ाई जी ॥ बहनों ॥ ५

छोड़ो इन झगड़ों को बहिनो, सूत्र सुनो चित्त लाई जी।
'सूर्य' मुनि की सुन लीजो, शिक्षा सुखदाई जी ॥बहनों ॥५

३३ दगा निषेध

[तर्ज आदमी बरसे क्यूंनी ऐ]

कपट तुम कभी नहीं करना ।
कपट सदा दुर्गति का दाता, इसको परिहरना ॥ टेक ॥

कपटी प्रेम कभी नहीं निभता, यही ध्यान धरना ।
सच्चा प्रेम निभाना सीखो, पड़े चाहे मरना ॥ कपट ॥ १ ॥

सच्चे से कर प्रीत सदाही, कपटी से डरना ।
साँच को आँच कभी नहीं लगती, यही भाव भरना ॥क०॥ २ ॥

रावण ने जब मनमें ठानी, सीता को हरना ।
इसी कपट वृत्ति के कारण, उसे पड़ा मरना । क० ॥ ३ ॥

दुर्योधन ने जुआ युधिष्ठिर, से धारा रमता ।
सारी सम्पदा खाक मिलाके, नर्क पड़ा गिरना ॥क० ॥४॥

'सूर्य' कहे जावद मे सबको, लो प्रभु का शरणा ।
ऐसा जान दगा तजदो, दुख भोगोगे वरना ॥ क० ॥ ५ ॥

—०!०—

३४ सात व्यसन

(तर्ज कहीं मुश्किल चेटा जैन फकीरी)

१ २ ३ ४ ५ ६
दोहा:- भंग तमाखू चरस और गांजा पोस्त शराब ।
७
छोड़ो मित्रों अमलभी, सारे नशे खराब ॥ १ ॥

कहे सात नशे दुखकारी, इनका हाल सुनो तुम ध्यान से ॥टेक॥

भंग पिये भंगड़ कहलावे, कुण्डी सोठा खूब बजावे ।
मिर्च मगज़ बादाम मिलावे, जब चढ़े लहरें रंग भंग की ।
बुद्धि बिगड़ गई सारी ॥ कहे ॥ १ ॥

चरस करदे दम्मा भारी, खौं खौं करता रात भर सारी ।
चैन न पड़े लग गई बिमारी, बलगम ने जोर जमाया ।
देती है नार फिर गारी ॥ कहे ॥ २ ॥

सुबह उठ प्रभु नाम न ध्यावे, सबसे पहले हुक्का न्हलावे ।
बीड़ी सिगरट चिलम लगावे, नहीं झूठ सांच का ध्यान है ।
यह व्यसन लगा दुःखकारी ॥ कहे ॥३॥

चारपाई पर गांजा सुलावे, चण्डु फिर नलकी में आवे ।
टेढ़ा होकर घूंट लगावे, सब दौलत की करी सफ़ाई ।
नयनों की रोशनी गई मारी ॥ कहे ॥४॥

पोस्त सारा खून सुखावे जर्दी चहरे पर दिखलावे ।
जरा न उठा बैठा जावे इधर घर में लगी आग रो ।
नहीं उठते रोती है नारी ॥ कहे ॥ ॥ ५ ॥

अफीमी ने जब गोली खाई सुध बुध सब तनकी बिसराई ।
चलते राह भूल गये भाई, नशे ने हालत बुरी बनाई ।
कब्जी रहती है भारी ॥ कहे ॥ ६ ॥

दारू पी बेहोश हो जाते, चलते नाली में गिर जाते ।
और कुत्ते उन्हें स्नान कराते, त्यागो 'सूर्य' नशे यह भाई ।
सब मिटेगी तेरी ख्वारी ॥ कहे ॥७॥

—:o|o:—

३७ निंदा निषेध

(तर्ज रागनी तीन ताल)

निंदा चुगली करो मति, इनमें नहीं है साररति ॥ टेक ॥

सन्मुख चुगल खोर नहीं भाखे, दगा कपट मन अन्दर राखे ।
मुख बोले मिटा नीच मति ॥ इन ॥ १ ॥
अपनी भूल नजर नहीं आत, करें निंदा पर की दिन रात ।
करावे परस्पर राड़ अति ॥ इन ॥ २ ॥
परकी छिपके करे बुराई, नारद गुण है उस नर माहीं ।
काम पड़े बन जाय सती ॥ इन ॥ ३ ॥
पीठ मास चुगला नर खावे, सुअर की फिर ओपमा पावे ।
दशवेकालिक में वीर कथी ॥ इन ॥ ४ ॥
औरों से जो वैर बढ़ाता, वो नर सदा बुरा फल पाता ।
मरके जावे नरक गति ॥ इन ॥ ५ ॥
अपनी चढ़ावे परकी फोड़े, गुणी देख मुख को मोड़े ।
दसवे अङ्ग में बात कथी ॥ इन ॥ ६ ॥
चुगली छोड़ सदा सुख पावे, निंदा मत कर 'सूर्य' सुनावे ।
'भाग्य मज' गुरू महा यती ॥ इन ॥ ७ ॥

—०—

३८ मद्य निषेध

(तर्ज छोटी मोटी सूय्यारे, जाली का मोरा कातना)

मदिरा बहुत बुरी है दुःखकार कभी ना प्रेम लगावना ॥ टेक ॥

भारत इसने पागल कीना, फैलाया अंधियार ।
निकट मत जावना ॥ मदिरा ॥ १ ॥
निर्धन इसमें फँसे हुआ है, रोटी से मोह ताज ।
दर-दर की भीख मंगावना ॥मदिरा॥ १॥
बूदे खूंसट प्याली पीते फँसी इसी में नार ।
लज्जा को दूर भगावना ॥ मदिरा ॥ ३ ॥
चेहरे उनके कर दिये फीके, बने रोग की खान ।
मर कर के दुगति जावना ॥ मदिरा ॥ ४ ॥
पीकर मदिरा नाली में गिरते, कहलाते बदकार ।
जीवन क्यों भ्रष्ट बनावना ॥ मदिरा ॥ ५ ॥
चाहते अगर निज लाज बचाना, करो इसी का त्याग ।
भारत का जो हित चहावना ॥ मदिरा ॥ ६ ॥
भींडर में मदिरा निषेध पर, 'सूर्य' कहे ललकार ।
मदिरा का खोज मिटावना ॥मदिरा॥७॥

—c—

३९ धर्म बिना नर जन्म विफल

(तर्ज गजल)

अएदिला नरतन को पाया, संसार में आया तो क्या ।
नहीं रटा प्रभु नामको, अनमोल समय पाया तो क्या ॥टेक॥

विषयों में प्राणी, अब क्यों है ललचाया।
जब फल भोगा तब. जीव पुनः पछताया ॥ टेक ॥

कर्णेन्द्रिय रस का, रसिया वन मृग होवे।
वीणा की ध्वनि सुन, प्राण तुरन्त ही खोवे।
सुन हंस पक्षी की, हालत ऐसी होवे।
जब लगा अजल का, बाण धरण पर सोवे।
देखो बन्धन में फणिधरने दुःख पाया ॥ विषयों ॥ १ ॥

चक्षुइन्द्रिय वश, पतंग आपदा पाई।
निकले है तड़फके, प्राण उसी के भाई।
आया क्षत्रिय आगा, वनके माई।
वहाँ भील और उसमें, थी हुई लड़ाई।
अब सुनिये जैसे, भील ने प्राण गमाया ॥ विषयों ॥ २ ॥

शर भील काटदे, क्षत्रिय रहा चलाई।
तब क्षत्राणी यह, हाल देख घबराई।
उसने जाना अब; रहा एक शर भाई।
तब क्षत्राणी ने, जीत की युक्ति लाई।
तब क्षत्राणी ने, अपना रूप दिखाया ॥ विषयो ॥ ३ ॥

वह रूप देखके, भील आँख ललचाई।
मन लगा भील का, नारि रूप के माही।
अब बाण लगेगा, इसकी सुधिहु न पाई।
तब बाण उसी क्षण, क्षत्रीय दिया चलाई।
शर लगा भील के, उसने प्राण गवाया ॥ विषयों ॥ ४ ॥

वस घ्राणेन्द्री में भ्रमर हुवा दीवाना ।
फूलों की खुशबू में, ही हुवा मस्ताना ।
जब खुले कमल में, भवरे ने सुख माना ।
सन्ध्या को कमलमें बन्द हुवा नहीं जाना ।
इस भाँति भ्रमर ने, अपना जीव नसाया ॥ विषयों ॥ ५ ॥

मीन ने मनमें, गर्व किया अति भारी ।
सागर में मेरा वास, मुझे क्या ख्वारी ।
रसना इन्द्रियने, उस पर विपदा डारी ।
आटे की गोली से फँस गई अहो विचारी ।
मरणे का कष्ट, मछली ने कैसा पाया ॥ विषयों ॥ ६ ॥

जगमें कहते गजराज, बड़ा बलकारी ।
कागज की हथिनी, लगी उसे अति प्यारी ।
लख झपटा गढ़े में, गिरा सहा दुःख भारी ।
इस विषय के वश हो, कैसी हुई खुवारी ।
स्पर्श इन्द्रिय कारण, कैसा दुःख उठाया ॥ विषयो ॥ ७ ॥

प्रति इन्द्रियके कारण,दुःख पाया सुन भोला ?
इन पांचों हीने, खोया जीवन अनमोला ।
यह बड़े कठिन से, पाया नर का चोला ।
जो इन्हें न जीते, फिरे जगत में डोला ।
नीमच में 'सूर्य' सभा में गाय सुनाया ॥ विषयों ॥ ८ ॥

—:():—

४२ सत कर्म करो

[तर्ज पनजी मुंड़े बोल]

जग में जीवन थोड़ा, नर तन फेर पासीरे ।
भलाई करले रे ॥ टेक ॥

चिंतामणि नर देह पायके, यह अवसर कब आसी रे ।
कूड़ कपट कर धन को जोड़ा, मूर्ख कहासी रे ॥ भलाई ॥ १ ॥

दान न करके मर करके, तू पर भव मे गर जासी रे।
वहाँ यातना पाय मार तू, जमकी खासी रे ॥ भलाई ॥ २ ॥

पुण्य दान से सुख पावेगा, चित की मिटे उदासीरे ।
सुकृत करले जीवन तेरा, ऊँचा थासी रे ॥ भलाई ॥ ३ ॥

बड़ो बड़ों के मेल जोल से, तूतो बड़ों कहासी रे ।
करे बुराई निडर होय, फल भला न पासी रे ॥ भलाई ॥ ४ ॥

श्रीमन्ताई में मदोन्मत, फूलो नहीं समासी रे ।
ढल जायगा गर्व तेरा, सिर धुन पछतासी रे ॥ भलाई ॥ ५ ॥

वृद्ध की ईंटें उठाई हरि ने, तीन खण्ड के वासी रे ।
अन्तगढ़ में श्री वीर प्रभु ने, वाणी परकासी रे ॥ भलाई ॥६॥

त्याग बुराई करो भलाई, तो सद्गति मे जासी रे ।
'सूर्य' कहे कर भला, नाम तेरा अमर रहासी रे ॥ भलाई ॥७॥

—:(o)-(o):—

४३ स्त्री शिक्षा

[सीयाराम अयोध्या बुलालो मुझे]

वहिनों जीवन को शुद्ध बनाया करो ।
शिक्षा धर्म से लाभ उठायां करो ॥ टेक ॥

अक्षरों का ज्ञान तक, अधिकांश घर में है नहीं।
क्या पढ़ेगी क्या लिखेगी, है अविद्या सब कहीं।
तुम अपनी कुटेव हटाया करो ॥ बहनों ॥ १ ॥

बालकों को भय बैठाकर, मत बनाओ बुज़दिले।
धर्म-रक्षक देश-रक्षक, होय व्रत पालक भले ।
वीर पुरुषो का जोवन सुनाया करो ॥बहनों ॥२॥

मत पूजो कब्र भोपा, भैंरु मात जहां तहां ।
सन्देह सिन्धु लहर में, बहती गई कहाँ से कहाँ ।
धोके बाजो के पास न जाया करो ॥ वहनों ॥३॥

आज कल की वहिनें फेसन; ढंग में हुशियार हैं।
ईर्षा बुराई चुगली ख ने में, सदा तैय्यार हैं ।
जीवन निष्फल कभी न बिताया करो ॥बह ॥४॥

विवाह के प्रसंग में, कुगीत क्या गाती हो तुम।
छोड़ लज्जा, क्यो भला निर्लज्ज हो जाती हो तुम।
गन्दे गाने कभी मत गाया करो ॥ वहनों ॥ ५ ॥

सीता सुभद्रा द्रौपदी, सतियाँ जहाँ में होगई।
सती धर्म का जल्वा दिखाकर, नाम रोशन कर गई ।
ऐसी सतियों में नाम लिखाया करो ॥ वह ॥ ६ ॥

वृद्धि अगर चाहो तो, शिक्षा को गहो तुम प्रेम से ।
'सूर्य' बहनों से कहे, रहना सदा सद् नेम से ।
खोटे कामों को जल्द हटाया करो ॥ बहनों ॥ ७ ॥

—:-:—

४४ माया तज, प्रभु को भज

[तर्ज रसिया ताल]

चेतन चित धारो रे २, यह माया न आवे काम ॥ टेक ॥

पाप कर्म कर धन उपजाया, किया जीवन नष्ट तमाम ॥चे॥ १ ॥
धन के मालिक सब ही होंगे, तेरा कोई न लेवे नाम ॥ चे ॥ २ ॥
तृष्णा वैतरणी सरिता है, ले जावे दुर्गत ठाम ॥ चे ॥ ३ ॥
तृष्णा के वश सम्भूम चक्री, सातमी नर्क मुकाम ॥ चे ॥ ४ ॥
जिनरख और जिनपाल थे भाई, बने तृष्णा के गुलाम ॥चे॥५॥
ब्राह्मण कुल कम्पिल ऋषि भारी, है उज्जायिनी ग्राम ॥चे॥ ६ ॥
राज सभा में स्वर्ण लोभ तज, पाया था शिव धाम ॥ चे ॥ ७ ॥
माया तज प्रभु को भजले, कहे 'सूर्य' गुरु जो ग्राम ॥चे ॥ ८ ॥

---

४५ वीर प्रभुका कीर्तन

[तर्ज जावो २ ऐ मेरे साधो रहो गुरु के संग]

गावो गावो हो चेतन, त्रिशला नन्द के गुण गान ॥ टेक ॥

त्राही त्राही जग करता था प्राणी मात्र दुख पाय ।
करुणा सागर संजम लीना, जग तारन जिनराय ॥ गावो ॥ १ ॥

धर्म नाम पै हिंसा फैली, अन्धा-धुन्ध मचाय ।
सद् उपदेश से उसकी जड़को, नाथ ने दिया मिटाय ॥ गा ॥ २ ॥

चण्ड कोशिक ने प्रभु चरणों पै, दीना डंक लगाय ।
विषधर को भी निर्विषकर, दिया आठवें स्वर्ग पैठाय ॥ गा ॥ ३ ॥

वीर के कानों में कीले ठोके, ग्वाले क्रोध के माय ।
क्षमाधार अति कष्ट सहन कर, केवल ज्ञान प्रकटाय ॥ गावो ॥ ४ ॥

चन्दनवाला का दुःख मिटाया, सती ऊँच पद पाय ।
दृढ़ प्रहारिया तस्कर आदिक, दीना मोक्ष पहुँचाय ॥ गावो ५ ॥

अधम उधारन नाथ आप हो, पतितपावन कहलाया ।
शान्ति सुधारस पान कराकर, प्रेमी दिये बनाये ॥ गावो ॥ ६ ॥

चैत्र सुदी में वीर जयन्ति, ग्राम निम्हाडा माय ।
'सूर्य' कहे सुवीर गुण गाओ, चरणे शीश नमाय ॥ गा ॥ ७ ॥

—०—

४६ क्षमापना

(तर्ज गवरल इशरजी कहे तो हँस कर बोलना ए)

शुद्ध भावे भवि जन कीजे हो, पक्खी खमत खमावणाजी ।
उस घर वरते हो आनन्द सुरङ्ग बधावणा जी ॥ टेक ॥

चार गति लक्ष चौरासी योनी, खमत क्षमावना करलो प्राणी ।
दिन पन्द्रह सु या विधि आनी, आत्मा होवे निर्मल वैर विरोध
मिटावना जी ॥ शु ॥ १ ॥

आदि अजित संभव हितकारी, अभिनन्दन सुमति कष्ट निवारी ।
पद्म सुपार्श्व महा गुणधारी, अष्टम् चन्द प्रभु को निशि दिन मनसे
ध्यावना जी ॥ शु ॥ २ ॥

सुविधि शीतल श्रेयांस गुणीश्वर, वासपूज्य विमल मुनीश्वर ।
अनन्त धर्मनाथ जगदीश्वर, देखो शान्ति नाथ प्रभु सबके विघ्न–
हटावना जी ॥ शु ॥ ३ ॥

कुंथु अर्ह मल्लीस संयम लीना, मुनिसुव्रत नमिनाथ नगीना ।
अभयदान नेमीश्वर दीना, गढ़ गिरनार पै जाके उत्तम ध्यान
लगावना जी ॥ शु ॥ ४ ॥

श्रीपार्श्वनाथजी नाग बचाया, वीर अहिंसा नाद बजाया ।
नीच ऊँच का भेद मिटाया, करे जो ऊँच कर्म वो जगमें श्रेष्ठ
कहावना जी ॥ शु ॥ ५ ॥

विरहमान गणधर मुनिराया, जन्म मरण का रोग मिटाया ।
अविचल धाम उन्होंने पाया, प्रभु गुण महिमा करता सो ही
ऊंचपद पावना जी ॥ शु ॥ ६ ॥

श्री श्री भ.ग्यमलजी ध्रुव टारा, मिथ्या तिमिर मिटावन हारा ।

खमत खमावना है हितकारी, 'सूर्य' कहे सुद्ध भावे करलो खमत खमावना जी ॥ शु ॥ ७ ॥

देखो सम्वत नियाएवे माहि, पौष वदि पन्द्रस तिथि आई ।
उदयपुर का संघ बड़ा सुखदाई, त्रियोगे जो शुद्ध भावे खिमावे भव-निधितिर जावना जी ॥ शु ॥ ८ ॥

—:(०):—

४७ संसार स्वार्थी

(तर्ज काँटो लागो रे देवरिया मोसे संग चला न जाय)

मानों मानों रे चेतन जी, स्वार्थ मीठा जगके मांय ।
स्वार्थ मीठा जगके मांय, चेतनजी प्यारा जगके मायँ ॥ टेक ॥

देख नीर सारस सर आया, बड़ी खुशी से मुकाम बनाया ।
यहाँ ही रहना मनमें, चाहा सूखा नीर उड़ गया पखेरू ।
कहीं न मुख से हाय ॥ मानों ॥ १ ॥

वृक्षों के फल फूल सुहावे, खग परिवार देख हर्षावे ।
मधुरस ले आनन्द को पावे, सूख गया जब झाड़ ।
तभी दी प्रीति विसराय ॥ मा ॥ २ ॥

वत्स, प्रेम गायों से करता, दूध मिले तो संग २ फिरता ।
सदा मात के संग ही चरता, नहीं रहा स्तनों में दूध ।
तज के नेह दूर भगाय ॥ मा ॥ ३ ॥

वहिन भानजी मारे ताना, कभीं न सीखा वीर कमाना।
स्वार्थ का है अजब जमाना, चूला फूँकन नाम।
भाई को यह कह कर बतलाय॥ मा॥ ४॥

राजा से धन पूर्ण लीधा, ब्राह्मण ने निज नन्दन दीधा।
अमर कुँवर से प्रेम न कीधा, माता धन के कारण।
पुत्र का दीना शीश उड़ाय॥ मा॥ ५॥

स्वार्थ वश सूरी कन्ता रानी, जहर दिया परदेशी को जानी।
धारी क्षमा भूपति सुख दानी, जाना स्वार्थी या संसार।
गया स्वर्ग के मांय॥ मानों॥ ६॥

जगमे स्वार्थ की बुरी मर्ज है, सुन 'सर्य' की यही अर्ज है।
परमार्थ करना ही फर्ज है, करो आतम का उद्धार।
लेवो शिक्षा हृदय जमाय॥ मानों॥ ७॥

४८ वेश्या निषेध

[तर्ज विपत के सनम् में सम्भाली कमलिया]

वेश्या से यारी लगावो मती तुम।
धन यौवन धर्म गमावो मती तुम॥ टेक।

शुभ कर्म छोड़े हैं इसकी लगन में।
इसके नाचमें धनको लगावो मती तुम॥ वे॥१॥
दर-दर के कुत्ते बने हैं इसी से।

वंश की आब मिटावो मती तुम ॥ वे ॥ २ ॥
बलगम का गन्दा भरा है यह प्याला ।
चाटके जीवन नशाओ मती तुम ॥ वे ॥ ३ ॥

निषेध है आगम वेद कुरान में ।
बुरी संगत मे भूलके जावो मती तुम ॥ वे ॥४॥

विष की बुझी ये छुरी भी है कातिल ।
दो ज़ख की जिन्दगी बनाओ मती तुम ॥ वे ॥५॥

त्यागन इसका करो तुम अभी से ।
'सूर्य' की शिक्षा भुलाओ मती तुम ॥ वे ॥ ५ ॥

-:०:-

४६ ये दुनिया सराय है

(तर्ज नवीन-रसिया)

चेतन तज जगके जंजाल, फँसा क्यों इसमें अज्ञानी ॥
फँसा क्यों इसमें अज्ञानी, चेता रहे तुमको गुरू ज्ञानी ॥ टेक ॥

दुनियाँ है ये मुसाफिर खाना, रहना है दिन चार ।
प्रभु भजन क्यों नहीं करता, बनकर जगमें अभिमानी ॥चे ॥१॥

बड़े बड़े रण रंगी जंगी, शाह सुल्तान वज़ीर ।
अन्त अजल के मुखमे पहुँचे, तज गरूर प्रानी ॥ चे ॥ २ ॥

शम्भुमचक्री और ब्रह्म दत्त, दुर्योधन भूपाल ।
तृष्णाकर मर गये आखिर, छोड़ चले रजधानी ॥ चे ॥ ३ ॥

तेरा नहीं है भाई बन्धु और, चन्द्रमुखी नारी ।
नाती गोती सब खड़े रहेंगे, झरे नयन पानी ॥ चे ॥ ४ ॥

जोर जवानी सुन्दर काया, देख देख हर्षावे ।
तेल फुलेल लगावे जायगी, छिन्नमें विलसानी ॥ चे ॥ ५ ॥

करना हो सो करले भविजन, है गाफलत दुखकारी ।
यह अवसर फिर नहीं मिलेगा, कही वीतराग वाणी ।चे । ६ ॥

लेले धर्म ध्यान संग खर्ची, पर भव के हित काज ।
'सूर्य' कहे कानोड़ ग्राम में, यह जग है फानी ॥ चे ॥ ७ ॥

५० कलियुग झलक

(तर्ज रागनी तीन ताल—आखिर नार पराई है)

कलियुग की झलक जारी है, बिगड़ गई कैसे खल्त कसारी है । टे ।

हुक्म पिता का पुत्र न माने, मुढ़ मरोड अपनी ताने ।
प्रभु भजन से पलक विसारी है ॥ क ॥ १ ॥

शर्म लाज आँखों में नहीं है, सत धर्म का पता नहीं है ।
असत्य धर्म पगधारी है ॥ क ॥ २ ॥

ले कर्जा सिर मोंच उड़ावे, मांगे तब नग आँख दिखावे ।
पाप कर्म में मुखत्यारी है ॥ क ॥ ३ ॥

कुव्यसनों में खोते धन को धर्म पे नेक न लावे मनको ।
फिजूल खर्च की लगी विमारी है ॥ क ॥ ४ ॥

गुणियों में आदर नहीं पाया, दुष्टों संग में भरमाया ।
दुनियाँ 'सूर्य' दुखारी है ॥ क ॥ ५ ॥

५१ झूठी खैंचा तान

[तर्ज पपिईया काहे मचावे शोर]

समझ नर क्यों करे खैंचा तान ॥ टेक ॥

काल शत्रु जब आन दबावे, छन में लेवे प्रान ।
किस कारण तू आया जगत में, सोया क्यों चादर तान ॥स ॥१॥

सुकृत करना छोड़ा तू ने, रहा नशों में ग़ल्तान ।
जब तक जीवे प्रभु भजले तू, होया क्यों अनजान ॥ स ॥ २ ॥

जो पाई है हुस्न जवानी, ढ़लेगी बर्फ समान ।
कोटि छियाणवे सेना लेकर, पहुँचे सागर स्थान ॥ स ॥ ३ ॥
एक ही छिनमे डुबे सब ही, छोड़े सुख महान ।
गर्व करे उनकी गति ऐसी करा मांत अभिमान ॥ सम ॥ ४ ॥

स्वार्थ भरा है यह जग सारा, सुख के साथी जान ।
कष्ट पड़े पै पास न आवे, भागे छोड़ मैदान ॥ समझ ॥ ५ ॥

खैंचा तान छोड़कर प्यारे, धर आतम का ध्यान ।
'सूर्य' प्राण निकल जाने पर, डेरा लगे मसान ॥ समझ ॥ ६ ॥

—:—

५१ शान्ति प्रार्थना

-:०:-

[तर्ज काली कमली वाले तुमको लाखो प्रणाम]

श्री शान्तिनाथ सुखकार, तुमको लाखों प्रणाम ॥ टेक ॥

स्वार्थ सिद्ध से चवकर आए, हस्तिनापुर में आनन्द छाये
वर्ता मंगलाचार ॥ तुमको ॥ १ ॥

विश्वसेन अचराजी जाया, मृगी रोग सब दूर हटाया।
सब जीवन हितकार ॥ तु ॥ २ ॥

शिविके भवमें आप दयालु, की कपोल रक्षा किरपाल।
त्रिभुवन के सरदार ॥ तु ॥ ३ ॥

कुमार पद में आनन्द पाया, फिर मण्डलेश्वर भूप कहाया।
ले छह खण्ड अधिकार ॥ तु ॥ ४ ॥

चक्रवर्ती प्रभु पदवी पाई, रत्न चतुर्दश नौ निधि हैं आई।
देव करे जयकार ॥ तुमको ॥ ५ ॥

लोकान्तिक देव करे प्रति बोधा, वर्षी दान दे शिव मग शोधा।
छोडा जग निस्तार ॥ तुमको ॥ ६ ॥

संयम वर्ष पचीस सहस का, पालन किया सुमर्ग रसका।
किया जगत उद्धार ॥ तुमको ॥ ७ ॥

नाम आपका शान्तिकारी, सर्व कष्ट दे दूर निवारी।
जपो सदा जयकार ॥ तुमको ॥ ८ ॥

संमत सहस्र दो हुवा प्रकाश।

'शहर उदयपुर किया चौमासा ॥
'सूर्य' शान्ति नाम आधार ॥ ६ ॥

—०—

५३ श्री वीर प्रभु की प्रार्थना

[तर्ज ॐ जय जिन कारा]

जय श्री वर्द्धमान प्रभु भज श्री वर्द्धमान प्रभु ।
जिनवर को जो निशिदिन ध्यावे, पार करे खेवा ॥ जय ॥ टेक ॥

त्रिजगचन्दा, त्रिशला नन्दा, जग सुख के हामी प्रभु जग ।
प्रभु भक्ति को नहीं पावे, जो जगमें कामी ॥ जय ॥ १ ॥
जो ध्यावे सुख पावे, प्रभु सुमरन करता ॥ भाइयों प्रभु ॥
आनन्द मंगलाचार रहे, दुख दारिद्र हरता ॥ जय ॥ २ ॥
राग द्वेष को दूर हटाकर, हुए केवल ज्ञानी प्रभु हुए ॥
ज्ञान उजाला तिहुँ जग दर्शक, शुचि आतम ध्यानी । ज ॥ ३ ॥
लक्ष चौरासी दुख का सागर, मेरी नैया मध्य पड़ी ॥ प्रभु ॥
सरण ग्रही है तुमरी प्रभुजी, सब मेरी आशा फली ॥ जय ॥ ४ ॥
तुम जग स्वामी अन्तर्यामी, पीर हरो मेरी ॥ प्रभु पीर ॥
आया 'सूर्य' शरण में मेटो जन्म मरण फेरी ॥ जय ॥ ५ ॥

❀ वैराग्य गुण माला ❀

श्री पं० रत्न श्री त्रिलोकचन्द जी महाराज साहेब

[व्याख्यान के अन्त में फरमाते हैं]

दुर्लभ पायो मनुष्य जन्म यह, अनार्य देश मझार नहीं।
आर्य देश उत्तम कुल जनम्यो, कोई मध्यम कुल अवतार नहीं।
लम्बी आयुष्य पूर्ण इन्द्री, देही मे रोग विकार नहीं।
इम जानी दया धर्म अराधो, यह अवसर बारम्बार नहीं॥ १ ॥
सास वास अरू तन धन जोवन, इनका कुछ इतबार नहीं।
कुटुम्ब कबिला हेतु बन्धव, अन्त समय कोई यार नहीं।
लाखो यत्न करो भव्य प्राणी, कोई भी राखनहार नहीं॥ इ २ ॥
इन जग मांहीं सबही अस्थिर है, स्थिर कोई नर नार नहीं।
वासुदेव चक्री महा बलिया, इण सम योधा और नहीं।
पुण्य पूरा हुवा काल पहुँची, कोई भी चालनहार नहीं। इ ॥ ३ ॥
जन्म मरण का दुःख अनन्ता, जरा रोग दुःखपार नहीं।
अहो अरबेज संसार महा दुखिया, किसी रीत छुटकार नहीं।
जहाँ जावे क्लेश दुःख पावे प्राणी, कोई निवारणहार नहीं। इ ४॥
प्रथम दुःखे पेट भरीजे, सुख मे यह संसार नहीं।
कदाचित सुख मान लिया मनमें, थोड़ा सुख बहु काल नहीं।
पीछे दुःख महा अनन्ता, तिन दुखों का कोई पार नहीं। इ ५॥
संजम लेता दुःख से डरना, लोच आदिक सुखकार नहीं।
भूख तृषा शीत गर्मी प्रमुख, सहवा समर्थहार नहीं।
इम चिन्ते वो कायर कहिये, वो शूरवीर सरदार नहीं। ६ ॥ इम॥

नर्क मांहीं दुःख सहा अनन्ता, अनन्त वार इकवार नहीं।
जघन्य मंझम उद कृष्ट स्थिति का दुःख का कोई सुमार नहीं।
आँखें मिचे खोले त्रिण मात्र, सुखी नो यह संसार नहीं ॥इम ॥७॥
जो जावे रात दिवशाये, पीछे आवनहार नहीं।
अधर्म कर्ता निष्फल जावे, वे तो क्यों नर नार नहीं।
मोत से नहीं संदेशा परिचय, तिन आया भागणहार नहीं ।इ। ८॥
जब लग इन्द्रि पड़े न हीनी, तब लग देही में रोग विकार नहीं।
जब लग है तरुण अवस्था, जरा जीर्ण बिगाड़ नहीं।
जब लग मोत महा निर्दय, नेड़े आवनहार नहीं॥ इ ॥ ९ ॥
घर माहीं लाग्या अगन पलीता, कुवा खुदावनहार नहीं।
वैरी आन पुकारे सिरपे, घड़नहार हथियार नहीं।
मरण वेदना आकर पहुँची, धर्म करने होशियार नहीं ॥इ ॥१०॥
राग द्वेष दो कठिन है, वेड़ी विन तोड़ा टुटनहार नहीं।
यह अनादि जीव संग रहता, किसी रीत छुटकार नहीं।
राग द्वेष किया बहु तेरा, पन हुवा न परीत संसार नहीं ॥इ ११॥
उपशम किया क्रोध न आवे, होगया नम्र अहंकार नहीं।
सरल पने से माया विनशे, सन्तोष आया लोभ लगार नहीं।
तृष्णा जल आशा नहीं जिनके मिथ्या रूप अन्धकार नहीं ।इ१२॥
क्रोध करी वैरी डस राखे, मान न पीछे मार नहीं।
मनके दो ही दगाबाज है, माया मेटनहार नहीं।
लोभ लालच में रहें, यह लटपटु इन सेव्या सुखकार नहीं ॥इ१३॥
अमृत छोड़ मूर्ख प्राणी, विष न छोड़े लगार नहीं।
जिनके फल लागे अति खोटे, मरते न लागे वार नहीं।
यु' शील छोड़ कुशील आदरे, नो मृत्यु न छोड़े लार नहीं ।इ १४॥

पर त्रिया मे नेह लगावे, कृत विपाक दुःख विचार नहीं।
अनाथां से गोष्ठी हमेशा, सन्तों से प्यार नहीं।
दया धर्म का बीज न बोवे, आगे इनको सुखकार नहीं॥ इ १५॥

सदा न खूबी रहे यह भाईयो, सदा न दिल गुलजार नहीं।
सदा न यौवन रहे श्वाशता, सदा न स्थिर परिवार नहीं।
सदा न शक्ति रहे तन अन्दर, सदा न रूप अपार नहीं॥इ १६॥

सिंहनी का दूध कॉंशी का भांजन, उसमें ठहरनहार नहीं।
काचा खंभ वालू का रेता, उपर महल विस्तार नहीं।
जो मोह वश प्रमादि प्राणी, ज्ञानादिक राखणहार नही॥इ १७॥

ये ही साधू संगत पुन्य से पाई, पर ज्ञान ध्यान अभ्यास नही।
दिनका धन्धा रातका धन्धा, कोई सूरत सभाल नही।
योंही जन्म गमायो निष्फल, आगे उनका विस्तार नहीं॥इ १८॥

जप तप संजम करनी करता, जिनके आलश प्रमाद नहीं।
रात दिवस जॉंकी सुफल होवे, निष्फल एक लगार नहीं॥
मोक्ष मार्ग में किया प्रयाना, भय मार्ग चालनहार नहीं॥इ १९॥

साधु सन्त की यही निशानी, जिनके पाप आश्रव द्वार नहीं॥
हिंसा झूठ अदत मैथुन, परिग्रह सावद्य व्यापार नहीं॥
पॉंचों इन्द्रियमें हमेशा, क्रोध लोभ अहंकार नहीं॥ इम॥ २०॥

शील महिमा

तर्ज —(तावड़ा धीमो लो पड़ जा रे)

शील धर्म अनमोल जगत में, वीर प्रभु फरमावें।
टले विघ्न सब शील प्रभावे, वांछित फल पावे ॥ टेक ॥

अनुपम भूषण शील रत्न की, शोभा सुर नर गावे।
धारे इसको जो नर नारी, कभी न दुर्गति जावे ॥ १ ॥

अग्नि शीतल सर्प फूलमाला, विष अमृत हो जावे।
सिंह हिरण मानिंद बनें, नहीं शत्रु निकट आवे ॥ २ ॥

सेठ सुदर्शन धर्म न छोड़ा, राजा शूली चढ़ावे।
शील प्रतापे बनो सिंहासन, नृप, चरणे सिर नावे ॥३॥

शंख राजा ने कर कटवाये, कमलावती बन दुःख पावे।
शील प्रत्यक्ष हुआ सहायक, कर चूड़ा सहित प्रगटावे।४।

सीता, सोमा, सुन्दरी, सुभद्रा, राजुल गढ़ गिरिवर जावे।
धारणी रानी चन्दन बाला, सती शिरोमणि कहलावे।५।

चाहे जे यदि भव सागर तिरना, वो शील धर्म चित्त लावे।
कहे 'सूर्य' उदयपुर मांहि, महिमा शील की दर्शावे।६।

कुछ अशुद्धियाँ रह गई हैं वे दी जारही है।

गायन नं०	पंक्ति	अशुद्ध		शुद्ध
२	२	पाश्र्पे	।	पार्श्व
२	८	से	।	में
७	४	किसी	।	किसीका
७	११	में	।	से
१०	३	जन	।	जग
१०	१५	सूयं का	।	सूर्य
१२	४	न	।	मान
१४	४	नृपों	।	नृप
१५	१३	वीरता	।	वीता
१७	२	जानों	।	मानों
१६	१२	तिरे्	।	तिरे
२२	८	जगमें	।	संगमें
२३	२	हारी तभी	।	पांडव तभी
३८	४	फमे	।	देश
४६	१२	सुत्रा	।	सुव्रत
५६	२२	हितकारी	।	हितकारा
५१	६	गव	।	गर्व

मुद्रकः—'उदय'–प्रेस, उदयपुर (मेवाड़)

श्री मनोहरदास-जैनग्रन्थमाला का-द्वितीय-पुष्प

अर्हम्

श्री वीर-स्तुति ।

अनुवादकः—

श्री पूज्य मनोहरदास जित्सम्प्रदायी, वर्तमान
जैनाचार्य पूज्य श्री मोतीरामजी महाराज के
सुशिष्य-पं० श्री पृथ्वीचन्द्र जी महाराज
तच्छिष्य श्री मुनि अमरचन्द्र जी

प्रकाशकः—

दानवीर राजाबहादुर लाला सुखदेवसहाय
जी के सुपुत्र "जैन समाज भूषण"
सेठ ज्वालाप्रसाद माणकचन्द
महेन्द्रगढ़ (पटियाला)

प्रथमबार १००० | वीराब्द २४५७ वीक्रम स० १९८९ "विरजयन्ती" | मूल्यः- वीर गुण गान

मुद्रकः— श्री कौशिक प्रिंटिंग प्रेस, महेंद्रगढ़ ।

॥ पुस्तक के विषय में दो-शब्द ॥

बन्धुर्न नः स भगवान् ऋपवोपिनान्ये,
साक्षान्न दृष्टचर एकतमोपि तेषाम् ।
श्रुत्वा वचः सुचरितं च पृथग् विशेषं,
वीरं गुणातिशयलोलतया श्रिताःस्म ॥ —हरिभद्रसूरि ।

आज सुपठित-सभ्य समाज में ऐसा कौन सहृदय-सुशील व्यक्ति है, जो भगवान महावीर को न जानता हो? आज तमाम सभ्य संसार भगवान महावीर की और उनके अनूठे-कार्यों की मुक्त कंठ से भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहा है ।

भगवान महावीर का जन्म उस समय हुआ था, जिस समय भारत की दशा अतीव शोचनीय-हृदय द्रावक एवं दारुण-दुःखमय थी । चारों तरफ जहाँ तहाँ केवल हा हा कार रूप करुण-क्रंदन की ही घन घोर-दुःखद ध्वनि सुन पड़ती थी । धर्म के नाम से मूक पशु पक्षिगण एवं दलित जन समूह के उष्ण रुधिर से भारत की पवित्र पुण्य-भूमि तर की जारही थी । समग्र दुःखी भारत एक चित्तसे एक ऐसे तेजस्वी महा पुरुष की प्रतीक्षा कर रहा था-जो भारत का संरक्षक बनकर जनता को सुख-शांति का समुचित उपाय बतलाए-धर्म के नाम से होते हुए महा भयंकर-अधर्म का नाश कर धर्म का सच्चा स्वरूप समझाए-भारत को सर्व प्रकार से सुख-संपन्न बनाए । जिस समय दया-सागर वीर ने त्राहि-त्राहि

पुकार ने वाले-मरणोन्मुख भारत को देखा, उसी समय समस्त सांसारिकआमोद-प्रमोद को जलांजलि देकर, समग्र राज्य वैभव को ठुकरा कर, अनुपम दुःसाध्य पंचमहाव्रत धारण कर, विश्व-सेवा का पूर्ण व्रत ग्रहण कर लिया और अपने पर अनेकानेक असह्य कष्ट झेलकर भारत को समग्र राष्ट्र मुकुटमणि बनादिया मूक पशु पक्षि गण एवं दलित नाम धारी जन समुदाय का उद्धार कर दिया-धर्मान्धता को जड़ से उखाड़ कर शुद्ध धार्मिक साम्य समुद्र वहादिया- कि वहुना भारत के लिये वीर ने जो कुछ किया वह वर्णनातीत किया।

यही कारण है कि—आज भी भगवान वीर की अलौकिक—अद्वितीय आत्म-शक्ति का सुप्रभाव भारत में फैला हुआ है—आज भी भारतीय जनता अपनी कृतज्ञता को प्रगट करती हुई भगवान महावीर की गुण गाथा श्रद्धा पूर्वक प्रतिदिन गारही है। इसलिये भगवान महावीर के स्तुति स्वरूप सैकड़ों स्तुति ग्रन्थ पूर्वकाल में बनचुके हैं और—आज भी उसी प्रकार एक के बादएक बन रहेहैं।

इन्हीं स्तुति ग्रन्थों में से प्रस्तुत पुस्तक भी एक वीरस्तुति-सौरभ सुरभित-प्राचीन तर कृति है। जंबू स्वामी को भगवान का परिचय कराते हुए श्री सुधर्मा स्वामी ने वीर प्रभु का यह हृदय ग्राही गुण गान किया है—जो समस्त स्तुति ग्रन्थों से भावभंगी में अत्यंत प्रौढ एवं विशदतर है। परंतु इसकी भाषा अर्द्धमागधी होने से सर्व साधारण भव्य-पुरुष इस से लाभ नहीं उठा सकते।

अतएव हांसी निवासी वीरभक्त श्रद्धालु बाबू उग्रसेन की प्रेरणा से सर्व साधारण के लाभार्थ मैंने इसका हिन्दी पद्यानुवाद किया है। मैं नही जानता कि, मुझे इस पद्यानु-वाद में कितनी सफलता मिली है, क्योंकि एकतो आगम वचनों का आशय अत्यंत-गंभीर जो सुचारु रूप से समझ में नहीं बैठता और दूसरे मैं ऐसा कोई धुरंधर—प्रतिभाशाली कवि नहीं ताकि कविता सर्वांग सुन्दर एवं समस्त मूलाशय संयुक्त बनजाए-खेद है-- जहाँ तहाँ कठिन स्थलों में मरोड़ तरोड कर मूलका भाव लाने में कविता का सर्वतो भावेन नाश ही होगया है।

इसमें कोई शक नहीं कि यह अनुवाद अवश्य ही त्रुटिपूर्ण एवं अशुद्ध रहा है। फिर भी आशा करता हूँ कि विज्ञ पाठक मेरी इस वीर-भक्ति वश होने वाली धृष्टता के लिए क्षमा करेंगे और श्रद्धापूर्वक इस पुस्तक का नित्य पाठ करते हुए समुचित सूचित करेंगे ताकि द्वितीया वृत्ति में ठीक — ठीक सुधार कर दिया जाए ओश्म् शांति! शांति!! शांति!!!

वीराब्द —
२४५७
अगहन शुक्ला
चतुर्थी चन्द्रवार
स्थान.—हिसार
(पंजाब)

श्री पृथ्वीचंद्र चरण सरोरुह भ्रमर
वीर भक्त मुनि—अमर

प्रकाशक.—

जैन समाजभूषण,

दानवीर श्रीमान् सेठ ज्वालाप्रसाद माणकचन्द

महेन्द्रगढ़ (पटियाला)

सूचना:—

जिस किसी भाई को इस पुस्तक की आवश्यकता होवे वो निम्नलिखित पतेपर दो पैसे का टिकट डाकखर्च के लिये भेजकर मंगालें ।

राजा बहादुर

लाला सुखदेवसहाय ज्वालाप्रसाद

जैन जोहरी

लाला भवन पो० महेन्द्रगढ (पटियाला)

मुद्रक:—

जोशी रमेशप्रसाद के प्रबन्ध से

श्री कौशिक प्रिंटिंग प्रेस, महेन्द्रगढ़ में छपा ।

* वन्देवीरम् *

श्री वीर-स्तुति—

मूल—पुच्छिसुणं समणा माहणा य,
अगारिणो या परतित्थिया य।
से केइ णेगंतहियं धम्ममाहु,
अणेलिसं साहु समिक्खयाए॥१॥

प० अ०— गुरुदेव मुझ से पूछते हैं शुद्ध-संयम-संग्रही।
ब्राह्मण गृहस्थाश्रम-निवासी बौद्धआदि मताग्रही॥
वह कौन है जिसने बताया पूर्णतत्व विचारकर।
तुलना रहित सद्धर्म जगका सर्वथा कल्याणकर॥

हिं० अ०—सुधर्मास्वामी से जंबूस्वामी पूछते है-हे गुरुदेव! साधु, ब्राम्हण, और गृहस्थलोग, तथा बौद्धआदि परमतावलंबी, मेरे से पूछते हैं कि जिसनें भलीभांति विचार करके जगत का सर्वथा हितकारक, अनुपम, धर्म कहा है वह महापुरुष कौन हैं॥१॥

मूल—कहंच णाणं कह दंसणं से,
सीलं कहं नाय सुयस्स आसी ।
जाणासिणं भिक्खु! जहातहे णं,
अहासुयं बूहि जहा णिसंतं ॥ २ ॥

प० अ०—उस ज्ञातनंदन वीर का कैसा विशदतर ज्ञानथा ।
कैसा सुदर्शन था तथा कैसा चरित्र महान था ॥
अच्छी तरह से जानते हो आपतो गुरुजी! सभी ।
जैसा सुना निश्चय किया वैसा कहो मुझसे अभी ॥

हिं० अ०-श्री सुधर्मा स्वामी से जवू स्वामी पूछते है कि-हे स्वामिन! उस ज्ञात नन्दन भगवान महावीर स्वामी का ज्ञान कैसा था! दर्शन कैसा था! और यम, नियम, आदि शील रूप चारित्र कैसाथा! हे मुने! आप ठीक-ठीक जानते हो इस लिये आपनें जैसा सुना है और निश्चय किया है, वैसा ही मेरे को बतलाइए ॥ २ ॥

—:o:—

मूल—खेयन्ने से कुसले महेसी,
अणंतणाणी य अणंतदंसी।
जसंसिणो चक्खुपहे ठियस्स,
जाणाहि धम्मं च धिइं च पेहि ॥३॥

प० अ०—श्रीवीर आत्म-स्वरूप के ज्ञाता तथा खेदज्ञ थे।
दुष्कर्म-कुश-नाशक, महर्षि अनंत-दर्शक विज्ञ थे ॥
सब से अधिक यशवंत, लोचन मार्ग संस्थित जानिए।
उनके बताये धर्म को उनकी धृती को देखिए ॥

हिं० अ०—जम्बू स्वामी के इस प्रकार पूछने पर सुधर्मा स्वामी भगवान के माहात्म्य का वर्णन करते हैं- हे आयुष्मन्! भगवान महावीर स्वामी, संसारी जीवों के कर्मनिपाकज दु:खों को जानते थे। क्यों कि उन्होंने उसके (दु:ख) दूर करने का यथावत् उपदेश दिया है। और भगवान वीर, आत्म स्वरूप के सच्चे ज्ञाता थे। कर्मरूपी कुश को उखाड फेंकने में कुशल थे। महान् थे। अनंत ज्ञान वाले, अनंत दर्शन वाले, और संसार में सब से अधिक अक्षय यश वाले थे। आँखों के समान हित-अनहित, अच्छे—बुरे मार्ग के दिखाने वाले थे। अयि शिष्य! तू मेरे से भगवान की महत्ता क्या पूछता है? भगवान की महत्ता देखनी है तो उनके बताए हुए अद्वितीय अबाधित धर्म को तथा उनकी घनघोर महा भयंकर उपसर्गों के समय की संयम संबन्धी अदम्य दृढ़ता को देख ॥३॥

मूल—उड्ढं अहेयं तिरियं दिसासु,
तसा य जे थावर जेय पाणा।
से णिच्च णिच्चेहि समिक्ख पन्ने,
दीवेव धम्मं समियं उदाहु ॥४॥

प० अ०—उस प्राज्ञने ऊंची अधः तिरछी दिशा में जीव जो।
जंगम व स्थावर भेद से संसार में हैं व्याप्त जो ॥
अच्छी तरह से जान उनको नित अनित के रूप से।
वर्णन किया वर दीप (द्वीप) सम सद्धर्म का सम भावसे ॥

हिं० अ०—उन केवल ज्ञानी भगवान महावीर ने ऊँची, नीची, और तिरछी दिशाओं में अर्थात् समस्त संसार मे-जो त्रस और स्थावर प्राणी है, उनको द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा से नित्य रूप और अनित्य रूप जानकर, दीपक के समान अज्ञान अन्धकार का नाश-करनेवाले—वा ससार समुद्र में पड़े हुए असहाय जीव समूह को द्वीप (टापू) की भाँति सहारा देने वाले धर्म को समान भावसे-विना किसी लाग लपेट के सब जीवों के हितार्थ प्रतिपादन किया ॥४॥

—:o:—

मूल—से सव्वदंसी अभिभूय नाणी,
णिरामगंधे धिइमं ठियप्पा।
अणुत्तरे सव्व-जगंसि विज्जं,
गंथा अतीते अभए अणाऊ ॥५॥

प० अ०— वे सर्वदर्शी रिपुजयी—सद्ज्ञान के आगार थे।
निर्दोष चारित्री, अचल स्वास्थित परम अविकार थे॥
संसार मे सबके शिरोमणि तत्वज्ञानी ईश थे।
भयमुक्त, आयुष के अवंधक, ग्रन्थ मुक्त, मुनीश थे॥

हिं० अ०—वे सर्वदर्शी भगवान महावीर-स्वामी ज्ञानावर्णीय-आदि आत्म शत्रुओं को जीतकर-नष्ट कर केवल ज्ञान वाले थे। निर्दोष चारित्र पालने वाले बडे धीर और अपने असली आत्म-स्वरूपमे स्थित निर्विकार थे। तत्वातत्व के जानने वाले संसार में सब विद्वानो के शिरोमणि थे। वाह्य आभ्यंतर परिग्रह से रहित निग्रन्थ-पुंगव थे। सभी प्रकार के भयो से रहित थे। आयुष्कर्म के वंध से रहित थे अर्थात् भगवान ऐसी कोई भी क्रिया नहीं करते थे जिससे संसार मे फिर जन्म ग्रहण करना पड़े ॥५॥

—:०:—

मूल—से भूइपण्णे अणिय अचारी,
ओहंतरे धीरे अणंत चक्खू ।
अणुत्तरं तप्पइ सूरिए वा,
वइरोयणिं देवतमं पगासे ॥ ६ ॥

प० अ०—श्रीवीर जग-रक्षाव्रती अनियत-विहारी थे प्रखर ।
भवसिन्धु तीर्ण अनंत ज्ञानी धैर्य धारी थे प्रवर ॥
सुविशुद्ध तपस्या के करैय्या सूर्य-पावक-तेजसम ।
सद्ज्ञान का सुप्रकाश कीना नष्ट कर अज्ञानतम ॥

हिं० अ०—भगवान महावीर स्वामी, जग जीवों की रक्षा के पूर्ण-व्रती, अप्रतीबद्ध-विहारी, संसार रूपी समुद्र को तरने वाले, तथा अदम्य धैर्य धारी थे । अनतज्ञानी, सबसे ज्यादह तपस्या के करने वाले, सूरज की और वैरोचन नामक प्रचंड अग्नि की तरह अज्ञान अन्धकार को नष्ट करके शुद्ध ज्ञान के प्रकाश करने वाले थे ॥ ६ ॥

—:०:—

मूल—अणुत्तरं धम्म मिणं जिणाणं,
णेया मुणी कासव आसु पन्ने।
इंदेव देवाण महाणुभावे,
सहस्स णेता दिविणं विसिट्ठे॥७॥

प० अ०—ऋषभादि जिन वर्णित अतुल शिव धर्म के नेता महा।
मुनिनाथ, काश्यप-बंश-दीपक, दिब्य ज्ञानी थे अहा॥
सुरलोक में सुर बृन्द में प्रभु शक्र शोभित है यथा।
मुनि वृन्द में अति श्रेष्ठ नायक वीर शोभित थे तथा॥

हिं० अ०—श्री भगवान महाबीर ऋषभदेव आदि तीर्थकरों-द्वारा प्रतिपादित सर्व श्रेष्ठ धर्म के मोक्षप्रद नेता थे। मुनियों के स्वामी तथा काश्यप बंश के भूषण थे। अधिक क्या, जिस प्रकार स्वर्ग में सहस्रो देवों के बीच ऐश्वर्य आदि गुणों से इन्द्र महाराज शोभित होते है ठीक उसी प्रकार महा प्रभावी महावीर मुनि वृन्द में सुशोभित होते थे ॥७॥

नोटः—इस पद्य के ऊपर उन पंडितमन्य महाशयोंको अवश्य लक्ष्य देना चाहिए-जो भगवान महाबीर को जैन धर्मका उत्पादक मानकर जैन धर्म को अर्वाचीन सिद्ध करना चाहते हैं। क्योंकि इस पद्य में श्री सुधर्मा स्वामी ने साफ-साफ कह दिया है कि-भगवान महावीर श्री ऋषभादि तीर्थकरों द्वारा प्रचारित जैन धर्म के नेता यानी पुनरुद्धारक थे नकि जन्म दाता ॥

'अनुवादक'

मूल—से पन्नया अक्खय सायरे वा,
महोदही वावि अणंत पारे।
अणाइ लेवा अकसाइ मुक्के,
सक्केव देवा हिवई जुईमं ॥८॥

प० अ०—निर्मल-अनंत-अपार-संभूरमण सागर है यथा।
श्री वीर भी वर-बुद्धि से अक्षय पयोनिधि थे तथा॥
भव वन्धनों से मुक्त, भिक्षु कषायमल से दूर थे।
देव स्वामी शक्र सम धृतिमान, विजयी शूर थे ॥

हिं० अ०-भगवान महावीर, बुद्धि से, अनंत पारवाले-शुद्धजल वाले स्वयंभूरमण समुद्र की तरह अक्षय-निर्मल सागर थे।
तथा संसार-वर्द्धक-कषाय मल से रहित, ज्ञाना वरणादि—कर्म वन्धन से विमुक्त थे। जिस प्रकार देवाधिपति शक्रेन्द्र दीप्तिमान शूरवीर है उसी प्रकार भगवान भी, अखण्ड तेज प्रताप पूर्ण सर्वोत्तम शूरवीर थे ॥८॥

—:o:—

मूल— से वीरिएणं पडिपुन्न वीरिएं,
सुदंसणे वा णग सव्व सेठे।
सुरालए वासि मुदागरे से,
विरायए णेग गुणोववए ॥९॥

प० अ०-वे वीर्य से प्रतिपूर्णवल शाली जगत में थे सही ।
सब पर्वतों में श्रेष्ठतर जैसे सुदर्शन है सही ॥
आनंददाता देवगण को यह सुमेरू है यथा ।
नाना गुणालंकृत महाप्रभु वीर जिनवर थे तथा ॥९॥

हिं० अ०—वीर्यान्तराय कर्मका समूल क्षय करने से भगवान महावीर—बलसे अनंत बलवाले थे। तथा जिस प्रकार सुमेरु पर्वत संसार के सारे पर्वतो मे श्रेष्ठ है, उसी प्रकार वीर प्रभु भी संसार में सर्व श्रेष्ठ महापुरुप थे। और जिस तरह सुमेरु, देव गण को हर्षित करने वाला है वैसेही वीर भगवान भी जगज्जीवों को आनंदित करने वाले थे। तथा जैसे सुमेरु अनेक गुणों से सुनहला रंग, चंदनादि गन्ध, उतमोत्तम मधुर फलों सें शोभित होता है तैसे भगवान भी ज्ञान, शक्ति, शांति आदि गुण समूह से शोभायमान थे ॥ ९ ॥

मूल—सयं सहस्साण उ जोयणाणं,
तिकंडगे पंडगवेजयंते ।
से जोयणे णवणवते सहस्से,
ऊद्धुसिते हेठ्ठ सहस्स मेगं ॥१०॥

प० अ०—जिस मेरु गिरि की उच्चता का लक्षयोजन मान है,
पंडगाभिध-वन ध्वजायुत तीन काण्ड महान हैं ॥
निन्याणवे हजार योजन तुंग अम्बर में खड़ा।
है सहस्र योजन एक पूरा मेदिनी तल में गडा ॥

हिं० अ०—सुमेरु पर्वत-एक लाख योजन का ऊँचा है। इस मे निन्याणवे हजार योजन ऊँचा आकाश मे और एक हजार योजन नीचे पृथ्वी के गर्भ मे है। सुमेरु के तीन विभाग हैं। सब से उपरले विभाग मे पांडुकवन है। वह ऐसा शोभता है मानो सुमेरु के शिखर प्रदेश मे सुंदर ध्वजा हो।

(जिस प्रकार सुमेरु पर्वत की प्रभा ऊँचा नीचा और मध्य-तीनों लोक में व्याप्त है उसी प्रकार भगवान महावीर के ज्ञान दर्शन आदि गुण तीनों लोकों-में संपूर्णतया व्याप्त हैं।)

—:०:—

मूल—पुट्ठे णभे चिट्ठइ भूमिवट्ठिए,
जं सूरिया अणुपरिवट्टयंति।
से हेमवन्ने वहुणंदणे य,
जंसी रइं वेदयती महिंदा॥११॥

प० अ०—वह भूमि को आकाश को है स्पर्शकर ठहरा हुआ।
चहुँ ओर ज्योतिषगण फिरे फेरी सदा देता हुआ॥
है नंदनादिक चार वन से युक्त कांति सुवर्ण धर।
अनुभव करे रतिका सदा देवेन्द्र जिस पर आन कर॥

हिं० अ०—वह सुमेरु पर्वत आकाश को तथा भूमि को छूकर स्थित-यानी ठैहरा हुवा है। सूर्यादि ज्योतिष्क देव जिसकी सदा प्रदक्षिणा करते हैं। और जो सोने की जैसी कांति वाला है। उसके ऊपर नंदनादि चार महावन हैं। तथा जिस सुमेरु पर्वत पर देव और देवेन्द्र भी आकर रतिक्रीडा का अनुभव करते हैं॥
(भगवान भी इसी प्रकार सुवर्ण समान वर्णवाले—दान शील आदि चार महान धर्मों के वर्णन करने वाले—धर्म पिपासु जनता को धर्मोपदेश द्वारा आनन्दित करने वाले थे।)

—:०:—

मूल—से पव्वए सद्दमहप्पगासे,
विरायती कंचण मट्ठवने ।
अणुत्तर गिरिसुय पव्वदुग्गं,
गिरीवरेसे जलिय व भोमे ।१२।

प० अ०—वह मेरुपर्वत किनेंरोकेगान से नित गूँजता ।
मल मुक्त कांचन तुल्य वह देदिप्यमान सुशोभता ॥
मेखला से दुर्ग सारे पर्वतों मे श्रेष्ठ है ।
भूदेश तुल्य विचित्र शोभावान अति उत्कृष्ट है ॥

हिं० अ०— वह सुमेरु पर्वत किनरदेवो के गानरूप शव्दों से गुंजायमान रहता है । तथा सोने की तरह पीले वर्णवाला शोभित होना है । सारे पर्वनों मे श्रेष्ट है । पर्व अर्थात् मेखला आदि के कारण दुर्गम दुगरोह है । और वह पर्वतराज प्रधानसुमेरु पृथ्वी के समान है । अर्थात् जिस प्रकार पृथ्वी अनेक तेजोमय ओपधी समूह से देदिप्यमान रहती है । उसी प्रकार मेरु पर्वत भी अनेक तेजो मय वृक्ष समूह से देदिप्यमान रहता है-चमकता रहता है ॥१२॥

(भगवान भी इसी प्रकार गंभीर ध्वनि वाले—अहिंसा सत्य ब्रह्मचर्य आदि सद्गुणों मे दमकने वाले—अद्वितीय श्रेष्ठतावाले- एवं विवाद करने वाले वादियों मे सर्वथा अजेय थे।)

मूल—महीइ मज्झम्मि ठिये णागिंदे,
पन्नायते सूरिय सुद्धलेसे ।
एवं सिरीए उ स भूरिवन्ने,
मणोरमे जोयइ अच्चिमाली ॥१३॥

प० अ० —भूमध्य में स्थित पर्वतेश्वर लोक मे प्रज्ञात है ।
मार्तण्ड मण्डल तुल्य शुद्ध सुतेजयुत विख्यात है ॥
पूर्वोक्त शोभावान बहुविध वर्ण से अभिराम है ।
दर्शक मनोहर सूर्यसम उद्योत कर छबि धाम है ॥

हि० अ०— पृथ्वी के मध्य प्रदेश में स्थित पर्वतेन्द्र सुमेरु, ससार मे सर्वोत्कृष्ट रूप से जाना जाता है। तथा सूर्य के समान शुद्ध तेज वाला है। पूर्वोक्त प्रकार की शोभा से विशेष प्रकार से चित्र विचित्ररत्नो से शोभित होने से अनेक वर्णवाला मनोहर है। सूर्य की तरह दशों दिशाओं को प्रकाशित करता है।१३।

(भगवान भी इसी प्रकार सर्वोत्कृष्ट पूर्ण प्रतापी, विचित्र शोभामय, अज्ञानधकार नाशक, संसार में ज्ञान का प्रकाश करने वाले थे।)

—:०:—

मूल—सुदंसणस्सेव जसो गिरिस्स,
पवुच्चइ महतो पव्वयस्स ।
एतोवमे समणे नायपुत्ते,
जाई जसो दंसण नाणसीले ॥१४॥

प० अ०—जैसे महापर्वत सुदर्शन मेरु का यश लोक में ।
तैसे जगद् गुरु वीर का करते सुयश हैं लोक में ॥
ऐसे सदुपमायुक्त मुनिवर ज्ञात पुत्र महान थे ।
जाती सुयश सद् ज्ञान दर्शन शील में असमान थे ॥

हिं० अ०—पर्वतराज सुदर्शनमेरु का-जिस प्रकार सुयश कहा है, उसी प्रकार वीर भगवान का सुयश संसार में फैला हुआ है। पूर्व कथित उपमा से उपमित श्रमण-ज्ञात पुत्र-भगवान महावीर समस्त जातिवालों में, समस्त सुयशवालो में, समस्त ज्ञानवालो में समस्त दर्शनवालों में और समस्त चारित्रवान महा पुरुषो में अद्वितीय-श्रेष्ट थे ॥१४॥

—:०:—

मूल—गिरिवरे वा निसहाय याणं,
रुयए व सेट्ठे वलयाय याणं ।
तओवमे से जग भूइपन्ने,
मुणीण मज्झे तमुदाहु पन्ने ॥१५॥

प० अ०—जैसे निषध है श्रेष्ठ सारे दीर्घ पर्वत वृन्द मे ।
जैसे रुचक है श्रेष्ठ सारे वर्तुला चल-वृन्द मे ॥
इस ही तरह से वीर हैं जग मे प्रवर मति के धनी ।
सब बुद्धि मानो ने कहा मुनियो में सर्वोत्तम मुनी ॥

हिं० अ०—जिस प्रकार-लंवे पर्वतो मे निषध पर्वत श्रेष्ठ है और गोल पर्वतों में रुचक पर्वत श्रेष्ठ है, उसी प्रकार त्रैलोक्य गुरु भगवान महावीर भी संसार मे प्रभूत विद्या के धनी है । इस लिये ही श्रेष्ठ बुद्धि मानों ने भगवान महावीर स्वामी को समस्त-मुनियो के मध्य में उत्कृष्ट कहा है ॥१५

(भगवान महावीर—निषध पर्वत के समान लंवाई में प्रमाणोपेत दीर्घ—लवे और रुचक पर्वत के समान सम चतुरंस्र नामक प्रसिद्ध शोभनीय संस्थान से संस्थित थे । इस शरीर शोभा के वर्णन से ध्वनित होता है कि आत्म गुण-संपन्नता से शरीर संपन्नता का एक घनिष्ट सम्बन्ध है । जो जो आत्मगुण-सपन्न महापुरुष हुए हैं वे वे शरीर संपन्न भी अवश्य हुए हैं ।

मूल—अणुत्तरं धम्ममुईरइत्ता,
अणुत्तरं झाणवरं झियाइं।
सुसुक्क सुक्कं अपगंडसुक्कं,
संखिंदु एगंत वदात सुक्कं ॥१६॥

प० अ०—संसार तारक धर्म का उपदेश दे संसार को।
ध्याते हैं सुनिर्मल ध्यान प्रभु, कर दूर चितविकार को ॥
वह ध्यान निर्मलता विषय में श्वेतसे भी श्वेत है।
जलफेन, शंख, शशांक के सम अत्यधिक सुश्वेत है ॥

हिं० अ०— भगवान महावीर ने विशाल जन समूह मे बडी तर्क पूर्ण सूक्ष्म विवेचना से सबसे उत्तम सत्य धर्मका उपदेश देकर अत्यंत प्रधान शुक्ल ध्यान को धारण किया। वह शुक्ल ध्यान उत्तम श्वेत वस्तु की तरह शुक्ल था अर्थात् अर्जुन सोने की तरह जल के फेन की तरह, शंख की तरह, तथा चंद्रमा की तरह, अतीव शुभ्र था ॥१६॥

(इस मे यह ध्वनित होता है कि महापुरुष वेही बन सकते हैं जिन के विचार विशुद्ध होते है। विना विचारों की विशुद्धता के महापुरुष बनने की अभिलाषा रखना केवल दु साहस है। क्यों कि बुरे विचार बुरे काम कराते हैं और अच्छे विचार अच्छे काम कराते है। बस काम के ऊपरही मनुष्य का अच्छा बुरा भविष्य है।)

मूल—अणुत्तरग्गं परमं महेसी,
असेसकम्मं स विसोहइत्ता ।
सिद्धिंगते साइमणंत पत्ते,
नाणेण सीलेण य दंसणेण ॥१७॥

प० अ०— निः शेष कर्म समूह को पूरी तरह से नष्ट कर ।
सर्वातिवर लोकाग्र में स्थित होगये हैं साधुवर ॥
सद्ज्ञान दर्शन शील द्वारा शुद्ध अपने को किया ।
उत्कृष्ट सादि अनंत मुक्ति स्थान को है पालिया ॥

हिं० अ०—भगवान महावीर स्वामी ने अपने उग्रतपोबल से संसार मे इधर उधर लक्ष्य शून्य भटकाने वाले कर्म शत्रुओं को मूलतः नष्ट करके वह मोक्ष धाम प्राप्त किया । जो चोदह राजु-लोक के अग्रभाग में स्थित है-जो सादि अनंत है-जहाँ जाकर फिर वापिस संसार में आना नहीं होता । भगवान को यह मुक्तता-सिद्धता किसी की सहायता से नहीं मिली । भगवान ने अपने ही सम्यग् दर्शन, सम्यग् ज्ञान, सम्यक् चारित्र रूप रत्नत्रय से अपनी आत्मा को विशुद्ध करके यह मुक्तता प्राप्त की ॥१७॥

—:०:—

मूल—रुक्खेसु णाए जह सामली वा,
जस्सिं रतिं वेदयती सुवन्ना।
वणेसु वा नंदण माहु सेट्ठं,
नाणेण सीलेण य भूइपन्ने ॥१८॥

प० अ०—जैसे कही तरु बृन्द में तरु शाल्मली की श्रेष्ठता।
जिस पर सुपर्ण कुमार करते प्राप्त नित्य प्रसन्नता॥
सारे बनों में नन्दनाभिध ही महावन श्रेष्ठ है।
इसही तरह से वीर, ज्ञान सुशील से सुश्रेष्ठ है॥

हिं० अ०—जैसे बृक्षों मे शाल्मली बृक्ष तथा बनो मे नंदन वन श्रेष्ठ समझा जाता है। जिस में कि सुपर्ण कुमार नामक भवन-वासी देव रति क्रीडा का अनुभव करते हैं। उसी प्रकार भगवान महावीर भी ज्ञान से और शील से श्रेष्ठ एवं प्रभूत ज्ञान शाली कहे जाते हैं॥ १८॥

मूल—थणियं व सद्दाण अणुत्तरं उ,
चंदो व ताराण महाणुभावे ।
गंधेसु वा चंदण माहु सेट्ठं,
एवं मुणीणं अपडिन्न माहु ॥१९॥

प०अ०—जैसे घनाघन गर्जना सब शब्द में उत्कृष्ट है ।
जैसे कलानिधि चंद्रमा नक्षत्र गण मे श्रेष्ठ है ॥
जैसे सुगंधित वस्तुओं मे मलय चंदन श्रेष्ठ है ।
तैसे अकामी वीर सारे साधुओं में श्रेष्ठ है ॥

हि० अ० जैसे सारे शव्दो में मेघकी गर्जना का शव्द प्रधान है । और जैसे समस्त तारागण में चंद्रमा महाप्रभाव शाली है । अथवा सब सुगंधित द्रव्यों में जिस तरह चंदन को श्रेष्ठ कहते हैं इसी प्रकार भगवान को भी सब मुनियों की अपेक्षा उभय लोक की प्रतिज्ञा से विरक्त कहते हैं । यानी भगवान महावीर सब मुनियो में प्रधान थे, क्यों कि उन्हे इस लोक और परलोक सम्बन्धी किसी भी प्रकार की विषय की लालसा नथी ॥ १९ ॥

—:o:—

मूल—जहा सयंभू उदहीण सेट्ठे,
नागेसुवा धरणिंद माहु सेट्ठं।
खोओदए वा रस वेजयंते,
तवोवहाणे मुणि वेजयंते ॥२०॥

प० अ०—जैसे स्वयंभू सागरों में श्रेष्ठ कहलाता महा।
सब नागवासी देवगण में श्रेष्ठ धरणिंद को कहा॥
सारे रसों में इक्षुरस की श्रेष्ठता विख्यात है।
तप-पुंज द्वारा वीर की भी श्रेष्ठता यो ज्ञात है॥

हिं० अ०—जिस प्रकार-इस भूलोक के समस्त समुद्रों मे स्वयं-भूरमण समुद्र प्रधान है। (स्वयंभूरमण समुद्र के समान विशाल, स्वच्छ और मनोहर दूसरा कोई समुद्र नहीं है) नाग जाति के देवताओं मे धरण नामक इन्द्र प्रधान है। (नाग कुमारों मे धरण के समान तेजस्वी एवं ऐश्वर्य शाली दूसरा कोई देवनहीं है) समस्त मधुररसों मे इक्षुरस प्रधान है। (ईख से वढकर अन्य कोई रस मधुर-शान्तिप्रद नहीं है) उसी प्रकार सवसे श्रेष्ठ तपस्तेजद्वारा भगवान महावीर प्रधान हैं ॥२०॥

मूल-हत्थीसु एरावण माहु णायं,
सीहो मियाणं सलिलाण गंगा।
पक्खीसु वा गरुले वेणुदेवे,
निव्वाणवादी णिह णाय पुत्ते ॥२१॥

प० अ०—सारे गजों में श्रेष्ठ है गजराज ऐरावत यथा।
पशुओं में निर्भय केसरी नदियों में गंगा है यथा॥
सब पक्षियों में वेणु देव-सुवैनतेय महान है।
निर्वाण वादी बृन्द में प्रभु-वीर ही परधान है॥

हिं० अ०—जिस प्रकार सारे हाथियों मे ऐरावत हाथी प्रधान है। पशुओं मे सिंह प्रधान है। जलों मे गंगाजल प्रधान है। और पक्षियों मे वेणुदेव अर्थात् गरुड पक्षी प्रधान है। उसी-प्रकार समग्र संसार मे मोक्ष माननें वालों—परमास्तिको के मध्यमें भगवान वीर को प्रधान कहा है ॥ २१ ॥

(ये उपमाएँ भगवान के मंगलता, निर्भयता, शुद्धता, पवित्रता, और स्वतंत्रता आदि सद्गुणों को व्यक्त करती हैं।)

—:०:—

मूल—जोहेसु णाए जह वीससेणे,
पुप्फेसुवा जह अरविंद माहु।
खत्ताण सेट्ठे जह दंत वक्के,
इसीण सेट्ठे तह वद्धमाणे ॥२२॥

हि० अ०—सब शूर-वीरों में अधिकतर विश्वसेन प्रसिद्ध है ।
सारे सुगंधित-पुष्प-चय मे श्रेष्ठतर अरविंद है ॥
सब क्षत्रियों मे श्रेष्ठ जैसे दान्तवाक्य सुधीर है ।
सब साधुओं मे श्रेष्ठ तैसे वीतरागी वीर हैं ॥

हिं० अ०—जिसप्रकार शूर वीरो मे वीर-पुंगव चक्रवर्ती प्रधान है ।
समस्त सुगन्धित फूलों मे अरविंद , कमल प्रधान है ।
तथा जैसे क्षत्रियो मे दान्तवाक्य (चक्रवर्ती) प्रधान है ।
उसी प्रकार संयमी साधुओ मे भगवान महावीर स्वामी प्रधान हैं ॥ २२ ॥

(ये उपमाएँ भगवान् के शूरता, वीरता, दृढता, सर्व प्रियता, मनोहरता, इन्द्रियनिग्रहता और दीन रक्षकता आदि सद्गुणों का प्रकाश करती हैं)

—:०:—

मूल—दाणाण सेट्ठं अभयप्पयाणं,
सच्चेसु वा अणवज्जं वयंति।
तवेसु वा उत्तम बंभचेरं,
लोगुत्तमे समणे नायपुत्ते ॥२३॥

प० अ०—संपूर्ण दानों में अभय सद् दान ही है श्रेष्ठ तर।
निरवद्य सत्य ही सत्य वचनों में कहा है श्रेष्ठ तर॥
जैसे तपों में श्रेष्ठता है विश्वविश्रुत-शील की।
तैसे जगत मे श्रेष्ठता मुनि, ज्ञात नंदन वीर की॥

हिं० अ०—जैसे दानो मे अभयदान—किसी भयभीत प्राणी को अपना कर्तव्य समझकर निर्भय—भय रहित करदेना—श्रेष्ठ है। सारे सत्यों में अनवद्य—दूसरो को पीडा न पैदा करनेवाला हितकारी सत्यवचन श्रेष्ठ है। कर्म मल को भस्म करनेवाले सारे तपों मे शुद्ध ब्रह्मचर्य व्रत श्रेष्ठ है। उसी तरह श्रमण ज्ञात—वंशी भगवान महावीर लोक में श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ थे॥२३॥

—:०:—

मूल—ठिईण सेट्ठा लवसत्तमा वा,
सभा सुहम्मा व सभाण सेट्ठा।
निव्वाण सेट्ठा जह सव्वधम्मा,
न नायपुत्ता परमत्थि नाणी ॥२४॥

प० अ०—दीर्घायुवाले देवगण में श्रेष्ठ पंचानुत्तरी।
सारी सभाओं मे सुधर्मा श्रेष्ठ है मंगल करी ॥
संसार के सब धर्म वर निर्वाण-पद प्राधान्य हैं।
श्री ज्ञात नंदन-वीर सम ज्ञानी न कोई अन्य हैं ॥

हिं० अ०—जैसे-सुख संपन्न दीर्घायु वाले देवताओ में लवसत्तम-यानी पॉच अनुत्तर विमान-वासी देवगण श्रेष्ठ हैं, सब सभाओं मे सौधर्म-इन्द्र की सुधर्मा-सभा श्रेष्ठ है, संसार के तमाम धर्म निर्वाण श्रेष्ठ है-यानि मोक्ष प्रधान है। उसी प्रकार भगवान् वीर भी ज्ञानियो मे श्रेष्ठ हैं अर्थात् वीर के समान अन्य कोई शुद्ध-ज्ञान वान, प्रबल प्रचारक व्यक्ति नहीं था ॥२४॥

—:o:—

मूल—पुढोवमे धूणइ विगय गेही ;
न संणिहिं कुव्वइ आसुपन्ने ।
तरिउं समुद्दं व महा भवोघं ,
अभयं करे वीर अणंत चक्खू ॥ २५ ॥

प० अ०—भगवान पृथ्वी तुल्य सर्वाधार निश्चल शक्त थे।
थे कर्म मल से हीन आशातीत संग्रह मुक्त थे ॥
थे सर्वदा उपयोग वाले भाव सागर तैर कर- ।
संपूर्ण जग जीवो के रक्षक थे अपरिमित ज्ञान धर ॥

हिं० अ०—भगवान महावीर पृथ्वी की तरह सब जीवोके अधार-भूत—क्षमाशील—परीषह और उपसर्ग आदि घनघोर कष्टों के सहने वाले थे।
भवभ्रमण मे कारण भूत कर्म मलसे रहित थे। अभिलाषा से रहित होनेके कारण द्रव्यादि का संचय नहीं करते थे। सदा उपयोगी थे, और जो अनेक दुःखो से भरे हुए संसार रूपी समुद्र को तिरकर मुक्त होने वाले—स्वयं प्राणिमात्र की रक्षा करने वाले—तथा समग्र लोकालोक गत-चरा चरात्मक-अनंत पदार्थों के ज्ञाता होने से अनंत ज्ञानवान थे ॥२५॥

मूल—कोहंच माणं च तहेव मायं ,
लोभं चउत्थं अज्झत्थदोसा ।
एआणि वंता अरहा महेसी ,
ण कुव्वई पाव णकारवेइ ॥२६॥

प० अ०—श्री वीर स्वामी क्रोध को अभिमान, माया को तथा ।
चौथे भयंकर लोभ को अध्यात्म दोषों को तथा ॥
सारी तरह से त्याग कर के होगये अर्हत-मुनी ।
खुद पाप ना करते कभी नांही कराते हैं गुणी ॥

हिं० अ०—भगवान महावीर स्वामी ने क्रोध को, मान को, माया को और चौथे लोभ को यानी इन आत्मा—सम्बन्धी दोषों को सर्वप्रकार से त्यागकर अर्हतपद को एवं महर्षिपद को प्राप्त किया । तथा वीर प्रभु, न स्वयं पापमय कार्य करते थे और न दूसरो से कराया करते थे ॥२६॥

मूल—किरिया किरियं वेणइयाणवायं,
अणाणियाणं पडियच्च ठाणं।
से सव्व वायं इति वेयइत्ता,
उवट्ठिए संजम दीहरायं ॥२७॥

प० अ०—श्री वीर स्वामी ने क्रियामत, अक्रियामत को तथा।
अज्ञान, बिनयक, पक्षको भी जानकर के सर्वथा॥
अन्यान्य भी मत पक्ष सब समझा बुझा सम्यक्तया।
संयम क्रिया में जन्म भर तत्पर रहे सम्यक् तया॥

हिं० अ० -भगवान महावीर क्रियावाद के अक्रियावाद के वैनयिकवाद के और अज्ञानवाद के पक्ष को स्वयं समझकर तथा अन्य समस्तवादों के पक्षको सम्यक् प्रकार दूसरों—मुमुक्षु जीवों को समझाकर यावज्जीवन संयम मे उपस्थित-तत्पर हुए ॥२७॥

मूल—से वारिया इत्थि सराइ भत्तं,
उवहाणवं दुक्ख खयट्ठयाए ।
लोगं विदित्ता आरं परं च ,
सव्वं पभू वारिय सव्ववारं ॥ २८ ॥

प० अ०—श्री मत् तपस्वी वीर ने दुख नष्ट करने के लिए ।
झट रात्रि भोजन मैथुनादिक पाप सारे तज दिए ॥
इस लोक को परलोक को अच्छी तरह से जान कर ।
सवही तरह सव का निवारण कर दिया शुभध्यान धर॥

हिं० अ०—तपो निधि भगवानवीर ने आठ प्रकार के कर्मरूपी दुःखोंका समूलनाश करने के लिए रात्रि भोजन के साथही साथ स्त्री संभोग-मैथुन आदि पापों का परित्याग कर तथा समस्त इस लोक और परलोक को जानकर सब पापों का सर्व प्रकार से निवारण किया ॥२८॥

—:०:—

मूल—सोच्चाय धम्मं अरहंत भासियं,
समाहियं अट्ठ पदोवसुद्धं।
तं सद्दहाणा य जणा अणाऊ,
इंदे व देवाहिव आगमिस्संति ॥ २९ ॥

प० अ०—अर्हंत भाषित, अर्थपद से शुद्धतर सम्यक् कथित।
संसार विश्रुत धर्म को सुनकर सदा जो हो मुदित ॥
श्रद्धा करें जो धर्म पर वे देवपति होजायँगे।
वा आयुकर्म विमुक्त होकर सिद्ध पद को पायँगे ॥

हिं० अ०—अर्थ और पदो से विशुद्ध, सम्यक् प्रकार से कथित, अर्हत भगवान द्वारा प्रति पादित, जगत्प्रसिद्ध जयशील धर्म को सुनकर श्रद्धा करने वाले—भव्य मनुष्य, देवों के स्वामी इन्द्र अथवा आयुरहित अजर-अमर सिद्ध होंगे ॥२९॥

अनुवादक परिचयः—श्री मन्मनोहरदासजी के संप्रदायी सद्गुणी।
श्रीपूज्य मोतीरामजी चारित्रपालक सन्मुनी ॥
तच्छिष्य पृथ्वीचद्र स्वामी ज्ञान गुणसे शोभते।
सुन्दर सुखद व्याख्यानद्वारा भव्यजनमन मोहते॥

दोहा— तास चरण नलिनालिने कृति कीनी सुखकार।
अब्द मुनीभ ग्रहेन्दु (१९८७) सुदि अगहन चौथ हिसार ॥

॥ श्री वीरस्तोत्रम् ॥

(द्रुतविलम्बित वृत्तम्)

मूल—सकल शक्र समाज सुपूजितं,
सकल संयति संतति संस्तुतम् ।
विमल शील-विभूषणभूषितं,
भजत तं प्रथितं त्रिशला सुतम् ॥१॥

भावार्थ—समस्त सुरलोकाधिपति इन्द्र, जिनकी भक्ति—पूर्वक उपासना करते हैं, जिनकी शुद्धसंयम धारक मुनि सुश्रद्धासहित स्तुति करते है और जो विशुद्ध-शील के अलंकार से अलकृत-यानी विभूषित हैं । हे भव्यो! उन्ही जगत्प्रसिद्ध त्रिशलातनय महाबीर स्वामी की सच्चे दिलसे सदा उपासना करो ॥१॥

मूल—कलिल-कानन भञ्जन कुञ्जरं,
शिव सरोरुह संचय-शंवरम् ।
कुगति पंकजिनी-रजनीकरं,
भजत तं प्रथितं त्रिशलासुतम् ॥२॥

भावार्थ- जो पाप रूप वनको नष्ट करने के लिए मत्तगज के समान है, कल्याण रूप कमल वनकी अभिबृद्धि करने-के लिए सजल मेघ के समान है, कुगति रूप कमलिनी को ध्वस्त करने के लिए चन्द्रमा के समान है, उन्हीं त्रिशलातनय प्रसिद्ध वीर प्रभु की उपासना करो ॥ २ ॥

मूल—कुमति वादि दिवान्ध दिवाकरं,
कुटिल काम कुरंग-वनेश्वरम् ।
सुखद शांत सुधारस सागरं,
भजत तं प्रथितं त्रिशला सुतम् ॥३॥

भावार्थ- जो-कुत्सित मति वाले वादी रूप उल्लुओं के लिये प्रचंड सूर्य के समान हैं, कुटिल काम रूप चंचल हरिण के लिये भीषण-केसरी सिंह के समान हैं, और जो-सुखद शांत सुधारस के निर्मल समुद्र हैं, हे भव्यो! उन्हीं जगत्प्रसिद्ध त्रिसला सुत भगवान महावीर की सदा शुद्ध-भाव से उपासना करो ॥ ३ ॥

मूल—रुचिर राज्य सुखं भविनां कृते,
द्रुततरं परिहृत्य च येन सा ।
भगवता यतिता सुतता धृता,
भजत तं प्रथितं त्रिशलासुतम् ॥४॥

भावार्थ—समस्त प्राणियो के उपकार के वास्ते, शीघ्रतर मनोहर विशाल राज्य सुख को छोडकर, जिन्होनें विश्व हितंकर साधुपद को धारण किया, उन्हीं जगत्प्रसिद्ध त्रिशला-तनय भगवानवीर प्रभुकी सदा शुद्धभाव से उपासना करो ॥४॥

मूल—अधम यज्ञभवं पशुहिंसनं,
निज सुदेशनया विनिवारितम् ।
क्षितितलेऽत्र दया सुविशारिता,
भजत तं प्रथितं त्रिशलासुतम् ॥५॥

भावार्थ—जिन्होंने शुद्ध उपदेश देकर अश्वमेधादि अधम यज्ञों म होनेवाले घोर पशुवध को रोका और इस भारत भूमि मे पवित्र दया का प्रचार किया, हे भव्यो! उन्ही त्रिशला तनय भगवान महाबीर स्वामी की सदा शुद्ध भाव से उपासना करो ॥५॥

मूल—सरल सत्यपथे सुमनोहरे,
विचलिता जनता विनयोजिता ।
खलदलं सकलं सरली कृतं,
भजत तं प्रथितं त्रिशला सुतम् ॥ ६ ॥

भावार्थ—जिन्होंने अनेक मत मतांतरों के झगडे से विचलित हुई जनता को सीधे स्याद्वादरूप सत्यमार्ग पै लगाया और पाखंडद्वारा पेटपूजा करने वाले जन समुदाय को धर्मप्रिय बनाकर सज्जन बनाया, अयि भव्यो! उन्ही जगत्प्रसिद्ध त्रिशला तनय भगवान वीर की सदा उपासना करो ॥६॥

मूल— अहह! शूद्र—जनानिह भारते,
दलयतिस्म सुजात्यभिमानिनः ।
सुकलिता किल जात्यभिमानता,
भजत तं प्रथितं त्रिशलासुतम् ॥७॥

भावार्थ—इस पवित्र भारत में पहले कुछ लोग अपनी उच्च जाति के घमंड में आकर शूद्र मनुष्यो को निर्दयता के साथ पिडित किया करते थे परन्तु जिस दयालु वीर ने साम्यवाद के बलसे जातीय अभिमानता को जडसे उखाड कर फैंकदिया उन्हीं जगत्प्रसिद्ध त्रिशला तनय वीरकी, हे भव्यो! सदा उपासना करो ॥७॥

मूल—विकच पंकज पत्र विलोचनं,
अखिल भिक्षुक वृन्द विनंदनम् ।
सघन विघ्न घनाघन भंजनं,
भजत तं प्रथितं त्रिशलासुतम् ॥८॥

भावार्थ—जिनके नेत्रद्वय खिले हुए कमल—दल के समान थे, जो अखिल भिक्षुक समूह को आनंदित करने वाले है और जो विघ्नरूप घनघोर मेघ को नष्ट करने के लिए प्रचंड वायु के समान हैं, हे भव्यो! उन्हीं जगत्प्रसिद्ध त्रिशला तनय वीर स्वामी की सदा शुद्धभाव से उपासना करो ॥८॥

॥ उपसंहार ॥

मूल—वर्षे संयमि सामजांक कुमिते श्री वैक्रमीये शुभे,
चैत्रे शुक्लदले त्रयोदशि दिने श्री वीर जन्मोत्सवे ॥
पृथ्वीचन्द्र गुरुक्रमांबुजयुगं संध्यायता धीमता,
वीरस्तोत्रमिदं वरं विरचितं देवेन्दुना साधुना ॥९॥

भावार्थ—विक्रमाब्द १९८७ चैत्र शुक्ला त्रयोदशी वीर जन्मोत्सव के दिन (हांसी शहर) मे श्री पृथ्वीचन्द्र गुरु के चरण कमल का ध्यान करने वाले अमरचंद्र नामक जैन मुनि ने, यह भगवान महावीरका सज्जन मनोहारी श्रेष्ठ स्तोत्र बनाया ॥९॥